पिंगल-प्रकाश

लेखक—

पं० रघुबरदयालु मिश्र, 'विशारद'

प्रकाशक—

रत्नाश्रम, आगरा।

प्रथम संस्करण } १९३३ { मूल्य २)

प्रकाशक :—
रत्नाश्रम, आगरा

मुद्रक:—
चन्द्रहंस शर्मा विशारद
रत्नाश्रम फ़ाइन आ० प्रि० वर्क्स, आगरा।

विषय-सूची

आत्म-निवेदन

श्री वीणापाणि भगवती भारती के पद-कमलों में यथा-शक्ति अपनी श्रद्धांजलि चढ़ाना प्रत्येक भक्त का कर्त्तव्य है। अपने आप उस श्रद्धांजलि का परिचय देना एक प्रकार से नितान्त अनावश्यक है। पर परिचय देने की जब एक रूढ़ि सी चल पड़ी है तब उस पथ का पथिक बनना आवश्यक हो जाता है। इसी रूढ़ि का पालन करने के नाते मैं भी यहाँ प्रस्तुत पोथी के सम्बन्ध में थोड़े शब्दों में आत्म-निवेदन कर देता हूँ।

जब कि छन्दशास्त्र पर आज हिन्दी में अनेक पोथियाँ मौजूद हैं फिर नई पोथी की आवश्यकता क्यों हुई? यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है। बात यह है कि मुझे छुटपन से ही पद्य-भाग से प्रेम है। जब कुछ समझ आई तब, दोहा चौपाइयों जैसे सीधेसादे छन्दों में तुकबन्दियाँ गढ़ने लगा। धीरे धीरे साहस बढ़ता गया और सवैया, कवित्तों पर भी हाथ माँजने लगा। छन्द ठीक है या नहीं? शब्दों का प्रयोग ठीक हुआ है या नहीं? इन बातों से कोई सरोकार न था।

आगे चलकर प्रथमा और मध्यमा की सम्मेलन-परीक्षाएँ दीं। उत्तीर्ण भी हुआ। पर छन्दशास्त्र में प्रवेश न पा सका। कारण कि इस विषय के सीखने के उपयुक्त साधन नहीं मिल सके। जब 'साहित्य-रत्न' की तैयारी में लगा तब आवश्यकता हुई कि छन्दशास्त्र का भलीभाँति अध्ययन किया जाय। परीक्षा में 'भानु जी' का छन्दः प्रभाकर था—जो आज भी है, उस का स्वाध्याय करने लगा। उस की परिभाषाएँ पद्य-बद्ध होने से प्रत्यय-प्रकरण कहीं तो

समझ में आ जाता और कहीं न आता, अतः योग्य गुरु की तलाश में लगा। इधर 'तुलसी-साहित्य' का भी अध्ययन करना था। इस विषय में **विज्ञान और साहित्य के प्रसिद्ध विद्वान बाबू रामदास जी गौड़** का नाम सुन रखा था।

सौभाग्य से कानपुर के 'अखिल-भारतवर्षीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन' में सम्मिलित होने का अवसर मिला। वहाँ स्वर्गीय **लाला भगवान दीन जी 'दीन'** द्वारा श्री गौड़ जी से परिचय हुआ। मैंने उन से अपनी बात कही। शंकर जी की कृपा से स्वीकृति मिल गई। सम्मेलन समाप्त होने पर मैं घर गया। थोड़े दिन में इटावे से काशी जा पहुँचा। कई महीने तक श्री गौड़ जी का ही अतिथि रहा। आगे चलकर उन्होंने म्युनिसिपल स्कूल में साहित्य का शिक्षक नियुक्त करा दिया। इस तरह निश्चिन्त होकर साहित्य का अध्ययन करने लगा।

आपने प्राचीन और आधुनिक पिंगल की अनेक पुस्तकों से मुझे छन्दशास्त्र पढ़ाया। उस की बारीकियाँ समझाईं। प्रत्यय-प्रकरण, जिसे लोग टाल दिया करते थे—भलीभाँति हृदयंगम करा दिया। उस समय पिंगलसम्बन्धी अनेक बातें मैं ने नोट कर लीं। पढ़ चुकने के बाद इच्छा हुई कि मैं भी पिंगल पर एक पोथी लिखूँ जिस में नोट की हुई बातें आ जावें। और प्रत्यय-प्रकरण खूब खोल कर लिखूँ। इधर साहित्य पढ़ाने में नये नये छन्द मिलने लगे जिन के लक्षण मिलने में कठिनाई होने लगी। साथ ही **रहस्यवाद के प्रगाढ़ पंडित अ० श्री पं० लक्ष्मणनारायण जी 'गर्दे'** के सत्संग से छायावाद की चरचा भी सामने आई। बस नामी छायावादी—रहस्यवादी—कवियों की रचनाएँ पढ़ने लगा।

रचनाओं में रुचि हुई । उन के छन्दों के रहस्य का पता लगाया । इधर उर्दू, बँगला, मराठी आदि के छन्दों को भी हिन्दी में देखा तो दृढ़तम धारणा हो गई कि अब पिंगल पर जरूर एक पोथी लिखनी चाहिए । बस चुपचाप इस काम में लग गया । कुछ दिनों में प्रत्यय-प्रकरण तैयार हो गया ।

संयोग से उन्हीं दिनों एक बार मेरे वयोवृद्ध भाई अध्यापक रामरत्न जी काशी पधारे । 'पिंगल पर पोथी' लिखने की मैं ने उन से चरचा की अपने नोट दिखलाये, प्रत्यय-प्रकरण उन्होंने बहुत पसंद किया और कहा कि 'यह गद्य का युग है पद्यों का नहीं ।' इसलिए छन्दों की परिभाषाएँ तो सीधीसादी परिमार्जित गद्य में लिखो और उदाहरण अर्वाचीन और प्राचीन सुकवियों की ललित-रचनाओं से दो । पर साथ ही ध्यान रखो कि उदाहरण घोरशृंगारी न हों । वे ऐसे हों कि जिन्हें माता, पिता और गुरुजन अपनी बहू-बेटियों तक को निस्संकोच पढ़ा सकें । आप की अमूल्य सम्मति से मेरा उत्साह और बढ़ गया और तनमन से इस काम में लग गया । बस प्रस्तुत पोथी की यह आरंभिक आत्म-कहानी है ।

प्रस्तुत पोथी की रूप-रेखा तैयार होने पर उसे श्री गौड़ जी को दिखाया । उन्हों ने इस शैली को पसंद किया और आज्ञा दी कि इस पोथी में आजतक के प्रायः सभी छन्द आ जाने चाहिएँ । उन की आज्ञा शिरोधार्य कर मैंने परिवर्धित छन्द-वंश-वृक्ष बनाया, जिसे उन्होंने स्वीकारलिया । बस उसी के आधार पर मैंने छन्दों का वर्गीकरण किया । जब पोथी तैयार हो गई तब मैंने श्री गौड़ जी के सामने रख दी । उन्हों ने उसे ध्यान से सुना और पढ़ा भी, अनेक

स्थलों पर उपयुक्त संशोधन किये और टिप्पणियाँ भी दीं। उस के बाद प्रस्तुत पोथी **महाकवि हरिऔध जी** के सामने ले गया। उन्होंने भी सारी पोथी सुनी और अनेक स्थलों पर अपनी असूल्य सम्मति और छन्द भी दिये। पीछे से **साहित्य के मर्मज्ञविद्वान और प्रसिद्ध समालोचक पं० रामचन्द्र जी शुक्ल** के सामने पोथी रखी। पुस्तक देख कर आपने अपनी असूल्य सम्मति और नये छन्द भी दिये। इन तीनों आचार्यों ने एक स्वर से इस शैली को पसंद किया। फिर क्या था मेरा उत्साह और बढ़ गया। जब पोथी एक तरह से तैयार हो गई तब **शिक्षा-शैली के मर्मज्ञ अध्यापक रामरत्न जी** को पोथी सौंप दी। उन्होंने आद्योपान्त पोथी पढ़ी। पोथी की भाषा का जहाँ तहाँ संशोधन किया, और उसे और भी परिवर्द्धित करने का आदेश दिया। उन की आज्ञा शिरोधार्य कर के मैंने पुस्तक को यह रूप दिया।

छन्दशास्त्र जैसे नीरस और कठिन विषय को सरस और सरल बनाने का मैं ने यथाशक्ति प्रयत्न किया है। उपर्युक्त वर्णित सभी बातों का इस में समावेश किया है। उदाहरण जहाँ तक हो सके हैं सरस और भावपूर्ण ही रखे हैं। घोरशृंगार नहीं आने दिया है। वीर, वात्सल्य, करुणा और शान्त रस के अधिक उदाहरण हैं। प्रकृति-वर्णन पर भी अनेक पद हैं।

बँगला, मराठी, अँग्रेज़ी आदि के प्रभाव से हिन्दी में जो नये छन्द व्यवहृत होने लगे हैं उन सब के सोदाहरण लक्षण दिये हैं। उर्दू और मुक्तकाव्य पर अलग से भी चरचा की गई है। प्रसिद्ध छायावादी कवि प्रायः जिन छन्दों का अत्यधिक प्रयोग करते हैं प्रायः वे सब छन्द इसमें आ गये हैं।

प्रस्तारों की उपयोगिता और उनके जानने की परिपाटी सरल और सुबोध गद्य में विस्तार के साथ समझाने का प्रयत्न किया है। किन किन मुख्य छन्दों में किस किस रस की रचना अधिक भावपूर्ण बन सकती है इस पर भी संक्षेप में विचार कर लिया गया है।

छन्दों को नया रूप देने में हमें स्वर्गीय महाकवि नाथूराम शंकरजी शर्मा की रचनाओं से विशेष प्रकाश मिला है। श्रद्धेय पं० हरिशंकरजी शर्मा ने मुझ पर बड़ा अनुग्रह दिखलाया। स्वर्गीय महाकवि के 'अनुराग-रत्न' की फ़ाइल कापी उन्होंने मुझे देखने को दी। पुनर्मुद्रण न होने से यह ग्रंथरत्न बाजार में मिल नहीं रहा है।

जिन दिनों पिंगल-प्रकाश आगरे में छप रही थी। उन दिनों एक दिन प्रोफेसर श्री बा० हरिहरनाथजी टंडन के दर्शन हुए। आपने पहले उल्लास को देखकर मुझे विशेष उत्साहित किया और अमूल्य परामर्श दिये। उपर्युक्त सहायता और सम्मतियों के फल स्वरूप यह पोथी लेकर मैं हिन्दी-जगत् के सामने आ सका हूँ, एतदर्थ मैं आपका भी परम कृतज्ञ हूँ।

आचार्य-त्रय गौड़जी, हरिऔधजी, शुक्लजी तथा श्रद्धेय अध्यापकजी का मैं उसी भाव से कृतज्ञ हूँ जिस भाव से अपने गुरुजनों के प्रति छोटों को होना चाहिए। यदि आप लोग मुझे सहारा न देते तो मैं हिन्दी-संसार के सामने शायद इस रूप में न आ पाता।

जिन आचार्यों के रीति-ग्रन्थों से इस पोथी के निर्माण में सहायता मिली है तथा जिन आचार्यों, महाकवि और सुकवियों की सुललित रचनाओं से इस पोथी में उदाहरण दिये गये हैं उन सब का मैं हृदय से

कृतज्ञ और आभारी हूँ। हाँ, समयाभाव और पता आदि की गड़बड़ी के कारण जिन कविवरों की रचनाएँ मैंने उन से विना अनुमति प्राप्त किये ही इस पोथी में रख ली हैं उन से करबद्ध क्षमा चाहता हूँ वे मेरी इस ढिठाई को अवश्य क्षमा करेंगे ऐसा मुझे दृढ़ विश्वास है, क्योंकि यह उनकी वस्तु उन्हीं को भेंट है।

हाँ, एक बात और निवेदन कर देनी है, और वह यह कि अनेक झंझटों के कारण मैं प्रस्तुत पोथी के अधिक अंश का प्रूफ़ नहीं देख सका हूँ इस से कहीं कहीं प्रेस संबंधी और अन्य भूलें रह गई हैं। मैं ने 'शुद्धाशुद्ध पत्र' दे दिया है। पाठक उस से अशुद्धियों को सुधार लें!

मैं नहीं कह सकता कि मैं अपने इस प्रयत्न में कहाँ तक सफल हुआ हूँ। इस का निर्णय सहृदय पाठकों और साहित्य-मर्मज्ञों पर ही छोड़ता हूँ। हाँ, यदि इससे नवसिख पाठकों को कुछ भी लाभ हो सका और साहित्यमर्मज्ञों को सन्तोष हो सका तो मैं अपने परिश्रम को सफल समझूँगा। यदि हिन्दी-संसार से मुझे उत्साह मिला और दूसरे संस्करण के प्रकाशन का अवसर मिल सका तो छन्दशास्त्र संबंधी वे अनेक बातें भी हिन्दी-संसार के सामने लाने का प्रयत्न करूँगा जो कारणवश इस संस्करण में नहीं लाई जा सकीं। आधुनिक अनेक सुकवियों की ललित रचनाएँ कारणवशात् मुझे प्राप्त नहीं हो सकीं, इसका मुझे दुःख है। यदि दूसरे संस्करण के प्रकाशन का अवसर आया तो आशा है कि भगवान शंकरजी मेरी इस आशा को भी अवश्य पूरी करेंगे।

श्री काशीधाम
वै० शु० अक्षय ३, १९९०

विनीत—
रघुबर दयालु मिश्र

श्री सीतारामाभ्यांनमः

प्रस्तावना

जैसे अक्षर-विज्ञानके अन्तर्गत वेदका एक अंग शिक्षा और सौवर है, वैसे ही शब्द-विज्ञानके अन्तर्गत वेदके तीन अंग व्याकरण, निरुक्त और छन्द हैं। शब्दोंमें विकार-विषयपर व्याकरण, व्युत्पत्तिविषयपर निरुक्त और उनकी योजना-विषयपर छन्दःशास्त्र है। इस तरह छन्दःशास्त्र शब्दविज्ञानकी एक शाखा है और वेदके छः अंगोंमें से एक महत्त्वका अंग है। किसी वेद-मंत्रका पूर्ण परिचय पानेके लिये जैसे उसके ऋषि, देवता और विनियोगके जाननेकी आवश्यकता है, वैसे ही ऋषि वा द्रष्टाके नामके बाद ही छन्दकी जातिका नाम भी लेना आवश्यक होता है। इससे स्पष्ट है कि शब्दविज्ञान और तदन्तर्गत छन्दःशास्त्रका परिशीलन उतना ही प्राचीन है जितना कि वेदोंका अध्ययन, और इस शास्त्रका महत्त्व भी उतना ही है जितना कि शिक्षा और व्याकरणका, जिनका कि भाषामात्रसे अटूट और अनिवार्य्य संबन्ध समझा जाता है।

यद्यपि हिन्दी हमारी मातृभाषा है और मातृभाषाके नाते हम शिक्षा और व्याकरणकी ओर बिलकुल ध्यान न भी दें तो भी व्यवहारसे अपनी भाषाके समझने और बोलनेमें, और अभ्यास हो जानेपर लिखनेमें भी, कठिनाई नहीं पड़ सकती,

तथापि यदि हमको अच्छी तरह हर बातको समझ लेना और सब तरहके विचारोंको सुभीतेसे अच्छेसे अच्छे रूपमें बोल या लिखकर प्रकट करना इष्टहो तो हमें अपनी मातृभाषाकी भी शिक्षा और व्याकरण जाननेकी आवश्यकता पड़ेगी। अभ्याससे इसी तरह हम पद्यरचनाको भी पढ़ और समझ सकते हैं, जैसा कि रामचरित-मानस जैसे उत्तम कोटिके महाकाव्यको भी लोग प्रायः समझ ही लेते हैं, मानसके अक्षरविज्ञान और शब्दविज्ञानको विधिवत् जान लेनेकी आवश्यकता नहीं पड़ती। फिर भी सभी तरहके अच्छे और शुद्ध पद्योंको भली-भाँति पढ़ और समझ सकनेके लिये कुछ थोड़ेसे छन्दःशास्त्रका ज्ञान तो परमावश्यक है। सुतरां, जो स्वयं पद्यरचना करना चाहे उसके लिये तो इस विज्ञानका विधिवत् जानना अनिवार्य्य है। इसीलिये काव्यसाहित्यके रीतिग्रन्थोंमें शब्दशक्ति, भाव-भेद, रसभेद, अलंकार आदि के साथही साथ छन्द-शास्त्रकी शिक्षा भी अनिवार्य्य समझी जाती है।

यह तो सच है कि कविताका प्रथम आविर्भाव आदिकवि-के चोट खाये हुए हृदयसे हुआ है और आज भी हृदयहीन कभी कवि नहीं बन सकता। किन्तु हृदयसे निकलकर वाग्यंत्रमें प्रवेश करके कविता जिस साँचेमें ढल जाती है, उसका उत्तरोत्तर विकास होता आया है और उसके रूपरंग को सँवारने में आज लोकानुभव और रीतिज्ञान दोनों बड़े सहायक हुएं हैं। छन्दःशास्त्र भी इसी बनावसँवार का साधन है।

परन्तु यह साँचा भी प्रदेशोंकी विविधतासे विविध हो गया है। हृदय की भाषा तो एक ही है, परन्तु साँचोंके भेदसे उसके प्रकट होनेके रूप विविध हैं।

देशकाल-भेदसे उच्चारणमें भेद पड़ जाता है और इस उच्चारण-भेदसे भी शब्दोंकी गति और अर्थमें अन्तर पड़ जाता है। जब इस अन्तरके कारण वेदोंमें ही शाखाएं और प्रतिशाखाएं बन गयी हैं तो लौकिक भाषाओंके लिये कहना ही क्या है। इसीलिये धीरेधीरे भारतकी प्रादेशिक भाषाओंमें भी उच्चारणके प्रभेद पड़ गये हैं। जहाँ मराठीमें संस्कृतके उपयुक्त वर्णिक और मात्रिक छन्दोंकी अधिक चाल है, वहाँ बँगलामें इनका समावेश ही असंभव है। बँगलामें मात्राओंकी गणना चल नहीं सकती, क्योंकि वहाँ शब्दोंकी गति संस्कृतसे इतनी भिन्न हो गयी है कि जहाँ हिन्दीमें लघुको गुरु और गुरुको लघु उच्चारण करना अपवादस्वरूप है वहाँ बँगलामें यही नियम बन गया है। इसीलिये बँगलामें गणों या मात्राओंकी गणनाकी प्रथा उड़ गयी और वर्णों की गणनामात्र रह गयी है। ब्रजमंडल में आज भी शब्दके अन्तिम अक्षरका स्वर पूरा पूरा कहा जाता है, ह्रस्वका लोप नहीं कर देते और उसके बदले हलन्त नहीं बोलते। उसीके उत्तर मेरठप्रदेशमें अन्तिम ह्रस्वका लोप तो नहीं करते परन्तु अन्तिम दीर्घोंको ह्रस्व कर दिया करते हैं। और अधिक उत्तर तथा पूरबके देशों में अन्तिम ह्रस्वका लोप करके उसके

स्थानमें हलन्त बोलते हैं। पहाड़ी कवियोंने तो इस प्रकारके लोकव्यवहारमें बरते जानेवाले शुद्ध उच्चारणके ही आधारपर हलन्तोंका प्रयोग करके संस्कृतके गणछन्दोंमें काव्य लिख-डाले हैं। उर्दूके शेरोंमें ऐसी ही कठिनाइयाँ पड़तीं परन्तु फारसी अरबीके छन्दोंके व्यवहारके साथही साथ उन्होंने उसके वज़नोंसे काम लिया जिनमें मात्राओं और वर्णोंका पूरा समावेश हो जाता है। वज़न ठीक वही चीज़ हैं, जो हमारे यहाँ गण हैं। "यगण" और "फ़ऊलिन्" "रगण" और "फायलुन" एक ही हैं। हमारे छन्दःशास्त्रमें अधिक वैज्ञानिक रीतिसे मात्राओंके पाँच और वर्णोंके आठ गण स्थिर करके कुल तेरह गणों या "वज़नों"से काम लिया है। उर्दूवालोंने वज़नोंमें वर्ण और मात्राका कोई भेद नहीं किया क्योंकि जिस वर्ण-मालाके हुरूफ़े तहज्जीके, आधारपर उनकी सारी कायनात है वह विदेशी और अवैज्ञानिक है, क्रमहीन और नियमहीन है उसमें वर्णिक और मात्रिक भेद अत्यन्त कठिन हैं। अंग्रेजी और बँगला दोनोंमें उच्चारणकी एक विशिष्ट गति है जिसे जोर देना कहते हैं, परन्तु जिसे "उदात्त" कहना ही अधिक वैज्ञानिक है। साधारण बोलचालमें भी उदात्त, अनुदात्त और स्वरित तीनों उच्चारणोंसे हम काम लेते रहते हैं परन्तु भाषाके व्याकरणों में किसीने इस विषयपर न तो ध्यान दिया है और न अंग्रेज़ी कोषोंकी तरह "सिलेबिल" और "ऐक्सेंट" दिखाने की हमें ज़रूरत पड़ी, क्योंकि हमारी वैज्ञानिक वर्णमाला

और लिपि हमारी वर्त्तनीको सुसंगत और सुबोध बनाती है, "सिलेबिल"के व्यर्थ विभागका काम ही क्या है ? और जब सभी स्वरित हैं तो उदात्त अनुदात्तके चिह्नभेदसे प्रयोजन ही क्या है ? अंग्रेज़ीमें जैसे "फिलास्सफ़र" को "फ़िलऽसोफ़् फ़र" कहना अशुद्ध समझा जायगा उसी तरह बँगलामें "कलिकत्ता" कहकर हिन्दीकी तरह "कत्ता"पर जोर देना अशुद्ध माना जायगा। शुद्ध उच्चारण बंगलामें "कोलिकाता" होगा जिसमें "कोली"पर ही अधिक जोर दिया जायगा । इस बातको कोषमें चिह्न देकर व्यक्त करनेकी आवश्यकता नहीं है। अन्य प्रदेशवाला भी सुनकर अभ्यास करके शुद्ध उचारण सीख लेगा।

पद्यरचनामें इस तरह छन्दोंके निर्म्माणके नियम सभी भाषाओंके एकसे नहीं हो सकते । उच्चारणकी परिपाटीके अनुसार पद्यके रूप भी प्रत्येक भाषाके लिये विशिष्ट होंगे। परन्तु वैज्ञानिक नियम तो ऐसे होने चाहियें जो संसारकी भाषामात्रपर प्रयुक्त हो सकें । तभी तो हम छन्दःशास्त्रको विज्ञान कह सकेंगे।

इस तरहके वैज्ञानिक नियमका आविष्कार जिस ऋषिने किया उनका नाम पिंगल था। यह नाग जातिके थे। इनके और नाम भी इसी बातकी सूचना देते हैं। कहते हैं कि गरुड़जीने इन्हें खानेके लिये पकड़ा था। उनसे शास्त्रार्थ हुआ। पिंगलने प्रस्तारकी रीतियाँ गरुड़जीको बतलायीं। प्रस्तारके रूप अनन्त हैं। इन रूपोंके नियम बतलाये। फिर इसी शिक्षाके प्रसादसे

गरुड़जीसे अभय पाकर पाताल चले गये। अंतिम छन्द जो इन्होंने कहा उसका नाम "भुजंग-प्रयात" था। छंदःशास्त्रको इन्हींके नाम से "पैंगल" कहने लगे।

लोग प्रत्ययोंको बेकार समझते हैं, परन्तु प्रत्ययोंका समझना पद्यरचना वा पद्यके शाब्दिक ढाँचेको खड़े करनेके वास्तविक तत्त्वको समझना है। जिसने एकबार इसके गणितको और तत्त्व को समझ लिया उसके लिये मनुष्य की वाणी-मात्रमें, फिर चाहे वह संसारके किसी कोनेकी क्यों न हो, पद्यार्थ अक्षरयोजनाका क्रम सरल हो गया। वह अंग्रेजीकी या युरोपीय किसी भाषाकी "प्रासोडी" और अरबी फारसी, आदिका "उरूज़" बिना पढ़े इन भाषाओंके पद्यके लिये नियम निश्चय कर सकता है, पैंगलप्रत्ययोंके काँटेपर उन्हें तोलकर उनका ठीक मूल्य लगा सकता है। बिलकुल नये ढंगके पद्य गढ़ सकता है। उनके नामकरण कर सकता है।

यह सच है कि नये ढंगके पद्य वह भी गढ़ सकता है जिसको स्वरतालकी परख है, जो गा सकता है और जिसकी जिह्वा और कान छन्दरसका आस्वादन करना जानते हैं। जिस कविको पद्यरचनामें मात्रा या वर्णके गिननेकी आवश्यकता न पड़े, छंदकी गति और यतिके स्थानमें जिससे कभी चूक न हो, वह नये ढंगके पद्य भी गढ़ ले सकेगा। परन्तु उसे पैंगलज्ञानके अभावमें यह न पता होगा जो पद्य गढ़ा गया है वह एकदम अनूठा है अथवा पूर्वके आचार्योंने वैसा पद्य कभी लिखा है

और उस जातिका वा वृत्तका नामकरण कर रखा है। अतः रीतिका पूरा अनुशीलन किये बिना वह भी नये ढंगके छंदके निर्म्माणका अधिकारी नहीं है। उसे किसी जाननेवालेसे पूछना, अर्थात् सीखना, पड़ेगा।

निदान अच्छे साहित्यिक होनेके लिये पैंगलशास्त्रका अध्ययन आवश्यक है और अच्छे कविके लिये तो अनिवार्य्य ही है। परंतु यह खेदके साथ कहना पड़ता है कि छंदःशास्त्रका अध्ययन बहुत कम लोग करते हैं। अनेक अच्छी पद्यरचना करलेनेवाले भी इस विषयमें कोरे देखेगये हैं। कविसम्मेलनोंमें जो अपनी रचना सुनानेको लाते हैं, उनमेंसे बहुत कम ऐसे होते हैं जिन्होंने विधिपूर्वक छंदःशास्त्र पढ़ा है या जो किसी अच्छे आचार्य्यसे संशोधन कराके लाते हों। फल यह होता है कि हर अहम्मन्य कवि अपनी सड़ीगली जैसी ही हो सभी रचना सुनानेको उत्सुक होता है और ऊबे हुए सुननेवालोंको असंगठित कविसम्मेलन में आनेका दंड भोगना पड़ता है। आधुनिक रीतिग्रंथोंतकमें गतिविहीन मनहरण देखनेमें आये हैं, और सम्मेलनोंमें तो इकतीस अक्षरोंकी गिनतीका भी ध्यान रखना अनावश्यक समझा जाता है, गति और यतिकी तो बात ही न्यारी है।

यह शिकायत भी एक हद तक ठीक है कि "पिंगल बहुत कठिन है।" और वह कठिनाई पद्यमें परिभाषा होने से बढ़ जाती है। पैंगलशास्त्रकी प्रकृत कठिनाई प्रत्ययोंमें है। परि-

भाषाकी कठिनाई तो गद्य से दूर हो जाती है । मेरे मित्र पं० रघुबरदयालुजी ने इन दोनों कठिनाइयों का बड़ा अच्छा परिहार किया है । परिभाषाएं तो स्पष्ट गद्यमें दी ही गयी हैं। और प्रत्ययका प्रसंग एक तो औरोंकी तरह आरंभमें नहीं छेड़ा है, अन्तमें दिया है, दूसरे उसे स्पष्ट और सरल गद्यमें विस्तारसे समझाया है। अबतक ऐसा सरल विवरण किसो पिंगलग्रन्थ-में नहीं दिया गया है । साथ ही प्रस्तुत ग्रन्थमें आजतकके व्यवहृत सभी तरहके पद्योंका समावेश हुआ है और उसके उदाहरण भी आधुनिक कवियोंसे ही दिये हैं । अबतक इन विशेषताओंके साथ कोई पैंगलग्रंथ मेरे देखनेमें नहीं आया है। पिंगल-प्रकाशसे एक बड़े अभावकी पूर्त्ति होती है । आशा है इससे छन्दःशास्त्रके पढ़नेवाले पूरा लाभ उठावेंगे और लेखकके कठिन परिश्रमको सार्थक करेंगे ।

बड़ीपियरी, बनारस शहर।
विजया १०, १९९०

रामदास गौड़

ॐ

बनारस
२२-६-३३

मैं ने पं० रघुबरदयाल मिश्र की बनाई पिंगल-प्रकाश, नामक पुस्तक देखी। यह पुस्तक नये ढंग से लिखी गई है, और लगभग उन सब छन्दों का वर्णन भी इस में कर दिया गया है, जो अन्य भाषाओं से आजकल हिन्दीसंसार में गृहीत हैं। यह एक बहुत बड़ी विशेषता इस ग्रन्थ की है। यह पुस्तक सामयिक है, और सामयिकता पर दृष्टि रखकर ही इस की रचना की गई है, अतएव इस की उपयोगिता बढ़ गई है। ग्रन्थकार ने इस के निर्माण में बड़ा परिश्रम किया है, यह बात पुस्तक देखने से स्पष्ट हो जाती है। मेरा विचार है कि यह ग्रन्थ इस योग्य है, कि पिंगल पठन का प्रत्येक अनुरागी इस का आदर करे, और थोड़े समय में इस से बहुत कुछ सीख ले। मैं ऐसी पुस्तक लिखने के लिये पं० जी को धन्यवाद देता हूँ, और आशा करता हूँ, कि हिन्दीसंसार इस का उचित आदर करने में कदापि संकोच न करेगा। इस पुस्तक की रचना में ग्रन्थकार ने मुझ से भी समय समय पर उचित सम्मति ली है।

—अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध'

बनारस
२४-६-३३

पं० रघुवरदयालु मिश्र ने छन्दःशास्त्र पर 'पिंगल-प्रकाश' नाम का यह सर्वांगपूर्ण और समयोपयुक्त ग्रंथ लिख कर सचमुच बड़ा भारी काम किया है। पुराने पद्यबद्ध ग्रंथों से काम चलता न देख कर बा० जगन्नाथप्रसाद 'भानु' ने छन्दःप्रभाकर की रचना की जो अब तक छात्रों का काम देता आ रहा था। पर गद्य में होने पर भी उसका ढंग पुराना है। दूसरी बात यह है कि हिन्दी-काव्य की वर्त्तमान गति का उसमें कुछ भी विचार नहीं किया है।

पं० रघुवरदयालु जी ने अपने ग्रंथ की रचना नए ढंग पर की है। इसमें छन्दों के भेद, लक्षण आदि बहुत ही सुबोध और सरल प्रणाली से लिखे गए हैं और प्रस्तार का विषय भी बहुत ही स्पष्ट कर के समझाया गया है। छन्दों के कुछ विभाग नई पद्धति पर किए गए हैं। मात्रा-मुक्तकों पर एक स्वतंत्र अध्याय ही है। छन्दों के नए नए योग, जो आधुनिक कवियों की रचनाओं में पाए जाते हैं, उदाहरण सहित दिखाए गए हैं। आजकल के 'स्वच्छन्द छन्दों' को भी मिश्र जी ने छन्दोविधान के शासन के भीतर कर के दिखा दिया है। उदाहरण उन्होंने आजकल के प्रायः सब प्रसिद्ध कवियों की रचनाओं से दिए हैं जिससे आधुनिक काव्यक्षेत्र का विस्तृत परिचय प्रकट होता है। स्कूलों के अतिरिक्त विश्वविद्यालयों के छात्रों के लिए भी यह ग्रन्थ बड़ा उपयोगी होगा। वास्तव में हमारे छन्दों की अच्छी जानकारी इस ग्रन्थ से हो सकती है

—रामचन्द्र शुक्ल

छन्द-सूची

पिंगल-प्रकाश

मंगलाचरण

जो अभिषेक की बात सुनी,
तौ प्रसन्नता नेकु परी न दिखाई ।
औ बनबास की आयसु पै,
नहिं रेख कछू दुख की तहँ आई ।।
जो दुख में न मलीन भई,
सुख में नहिं जो कछु हू हरषाई ।
सो मुख-श्री रघुनन्दन की,
सुभ होहु हमें नित मंगलदाई ।।

—श्रीवर

पिंगल-प्रकाश

पहला उल्लास

काव्य

काव्य क्या है? इस संबंध में विद्वानों के भिन्न भिन्न मत हैं। परन्तु भाव सबके एक ही हैं। सबके मतों का निष्कर्ष यही है कि "लोकोत्तर आनन्द देनेवाले रसात्मक वाक्य को काव्य कहते हैं।"

काव्य-भेद

काव्य-रचना की दो शैलियाँ हैं। एक का नाम है 'गद्य-शैली' और दूसरी का नाम है 'पद्य-शैली'। संस्कृत में 'कादम्बरी', हिन्दी में इसका अनुवाद और अनेक मौलिक गद्य-काव्य की रचनाएं हैं। आजकल 'गद्य-गीति' नाम से भी रचनाएं की जाने लगी हैं, ये गद्य-काव्य हैं। पद्य-काव्य के

विषय में कहना ही क्या है ? सारा प्राचीन साहित्य पद्य-शैली से ओतप्रोत है। रामायण, महाभारत आदि इनमें मुख्य हैं।

गद्य और पद्य

अब जानना यह है कि गद्य और पद्य कहते किसे हैं ? साधारणतया "जिस रचना-शैली के वाक्य-समूहों में बोल-चाल का ही ढंग बरता गया हो, अर्थात् जिस रचना के वाक्य-समूहों में व्याकरण के नियमों का पूर्णरूपेण पालन किया गया हो, यथा-स्थान विरामादि का भी प्रयोग किया गया हो, किन्तु उसमें मात्राओं या वर्णों का न कोई नियमित क्रम हो और न नियमित संख्या और न यति-गति का ही बंधन हो, वही गद्य है।" परन्तु "जिस रचना-शैली के वाक्य-समूहों में यथाशक्ति व्याकरण के नियमों की रक्षा करते हुए मात्रा या वर्ण या दोनों का निश्चित क्रम या माप या संख्या हो और जिसमें यति, गति नियमित हो तथा चरणों की संख्या भी निश्चित हो वह पद्य है।"

छन्द और पिंगल

'छन्द' शब्द 'छदि' धातु से बना है, जिसका शब्दार्थ है—'आच्छादन करना' अर्थात् 'ढक लेना'। कहा जाता है कि आदि में मृत्यु-भय से कुछ देवताओं ने गायत्री आदि मंत्रों में अपने को ढक रखा था। इसी से ये मंत्र छन्द कहलाये जाने लगे। इसीलिये इस शास्त्र को ही छन्द-शास्त्र कहने लगे। वेद के षडङ्गों (शिक्षा, निरुक्ति व्याकरण, ज्योतिष आदि) में छन्दशास्त्र एक अंग माना गया है। कहा भी है कि—

'छन्द वेद को अंग है, कहैं मुनिन के वृन्द ।
या ते पढ़ियतु प्रात ही, वरणे नाग फनिन्द ॥

'पिंगलच्छन्दःसूत्रम्' के वृत्तिकार श्री हलायुध ने लिखा है—
'श्रीमत् पिंगल नागोक्त छन्दःशास्त्र महोदधी ।'

\+ × + +

'पिंगलाचार्य्यसूत्रस्य मया वृत्तिर्विधास्यते'

इससे स्पष्ट है कि छन्दशास्त्र के निर्माता 'पिंगल' नाम के मुनि हैं, यही छन्दशास्त्र के आचार्य माने जाते हैं, इन्हीं के नाम पर छन्दशास्त्र को 'पिंगल' भी कहने लगे। यह भी कहा जाता है कि आप शेषावतार हैं, और यों भी 'पिंगल' का शब्दार्थ सर्प, नाग है, इसी से छन्द-ग्रन्थों में जहाँ तहाँ इन्हें, शेष, फणीश, अहिराज, पन्नगराज नामों से संबोधित किया है।

छन्द और उसकी विशेषताएं

'पद्य' शब्द 'छन्द' का प्रायः पर्य्यायवाची शब्द ही माना जाता है। छन्द का पारिभाषिक रूप पद्य की व्याख्या में बताया जा चुका है। अर्थात् "जिस वाक्य समूह में व्याकरण के नियमों की यथाशक्ति रक्षा करते हुए मात्रा या वर्ण या दोनों का निश्चित क्रम, माप या संख्या हो और यति, गति और चरणों की निश्चित व्यवस्था हो वह छन्द है।"

छन्द की अनेक विशेषताएं हैं। और मुख्य विशेषता यही है कि छन्दशास्त्र वेद का एक अंग है। कहा भी है—

"जैसे वेद विहीन द्विज, हीन लोक सों होय।
त्यों ही छन्दोज्ञान बिन, कहैं सबै कवि लोय ॥"

सचमुच छन्दों की ऐसी ही महिमा है। छन्द संगीत का मुख्य अंग है। और संगीत एक ऐसा विषय है जो प्राणीमात्र को प्रिय है। पद्य में कोमल-कान्त-कर्ण-प्रिय-पदावली रहती है, जो लोकोत्तर आनन्द-दायिनी होती है, फिर वह प्रिय क्यों न हो! इसके अतिरिक्त पद्यान्तर्गत 'अर्थ असित अति आखर थोरे' वाले नियम का पूर्ण-रूपेण निर्वाह किया जाता है। इससे बड़े बड़े विचारों की माला थोड़े से शब्दों में कंठस्थ की जा सकती है। नीरस से नीरस विषय छन्द की चाशनी से मीठा बन जाता है और शीघ्र ही हृदयंगम हो जाता है। पद्यमय वाक्यावली का मानव समाज पर शीघ्र प्रभाव पड़ता है। यही सब कारण हैं कि हमारे ऋषियों के सभी प्राचीन शास्त्र छन्दोवद्ध हैं। गद्य में सरसता, रमणीयता और ये विशेषताएं लाना टेढ़ी खीर है, विरलों का ही काम है।

छन्दोभंग

छन्द की निश्चित मात्रा या वर्णों की न्यूनाधिकता से छन्द के पढ़ने-सुनने में एक खटक सी पैदा हो जाती है जिसे छन्दो-भंग दोष कहते हैं। इस दोष से बहुत बचना चाहिये।

वर्ण और मात्रा

अकारादि जिनके खण्ड न हो सकें, वर्ण या अक्षर कहलाते

हैं। (अ = नहीं + क्षर = नाश) अर्थात् जिसका स्वरूप सदा एक रहे। यह अक्षर दो तरह के हैं—स्वर और व्यंजन।

जिन वर्णों का उच्चारण बिना किसी दूसरे वर्ण की सहायता के होता है वे स्वर कहलाते हैं; जैसे—अ, इ, उ[१] आदि। और जिन वर्णों का उच्चारण स्वरों की सहायता से होता है वे व्यंजन कहलाते हैं। जैसे—क, ख, ग, आदि।

प्रत्येक वर्ण के उच्चारण में जितना काल लगता है उसे मात्रा कहते हैं।

मात्रा-भेद से अक्षर या वर्णों के दो और भेद हो जाते हैं—(१) ह्रस्व और (२) दीर्घ।

जिन वर्णों के उच्चारण में एक मात्रा-काल लगता है वे सब ह्रस्व कहलाते हैं। यथा—अ, इ, उ, क, ल, स आदि, और जिन वर्णों के उच्चारण में दो मात्रा-काल लगता है वे सब दीर्घवर्ण कहलाते हैं। यथा—आ, ई, ए, अं आदि।[२]

१—अ, इ, उ, ऋ, ये चार मूलाक्षर हैं। आ, ई, ऊ आदि इन्हीं स्वरों के मेल से बने हैं; यथा—अ + अ = आ, इ + इ = ई, उ + उ = ऊ, इत्यादि।

२—जिन वर्णों पर आ, इ, ए, औ, आदि की मात्राएं लगती हैं वे वर्ण भी उसी मात्रा के उच्चारण के अनुसार ह्रस्व और दीर्घवर्ण कहलाते हैं; यथा—ह्रस्व क, कि और दीर्घ कू, को आदि।

लघु और गुरु *

छन्दशास्त्र में ह्रस्व को लघु और दीर्घ को ही गुरु कहते हैं। अथवा यों कहिये कि पिंगल में एक मात्रावाले वर्ण लघु और दो मात्रावाले वर्ण गुरु माने जाते हैं। लघु का चिन्ह [।] पूर्ण विराम के आकार का है और गुरु का चिन्ह (ऽ) अंग्रेज़ी वर्ण 'एस्' के आकार का है। लघु चिन्ह से एक मात्रा का और गुरु चिन्ह से दो मात्राओं का बोध होता है।

यथा

ऽ । । ।।।ऽ। । । ।।ऽ ऽ ।। ।।। ।।। । । ।ऽ

'जे गुरु चरन रेनु सिर धरहीं। ते जनु सकल विभव बस करहीं।'

ऊपर की अर्द्धाली के शब्दों पर गुरु-लघु के चिन्ह लगाने से तुरत गिनती हो जाती है कि इस छन्द के प्रत्येक चरण में सोलह मात्राएं हैं।

छन्दशास्त्र में गुरु-लघु का विशेष ध्यान रखना पड़ता है। इससे यह जानना भी बहुत जरूरी है कि कहाँ-कहाँ लघु आता है और कहाँ-कहाँ गुरु।

---

* कंठस्थ करने योग्य पद्य—

अ इ उ ऋ ये स्वर चारि अरु, सब व्यंजन लघु मान।
आ ई ऊ ए ऐ ओ औ अं अः गुरु जान॥
लघु स्वर के संयुक्त जो, व्यंजन सो लघु होय।
गुरु स्वर के संयुक्त जो, व्यंजन गुरु है सोय॥

लघु—१. ह्रस्व स्वर लघु होते हैं और इन स्वरों के मेल से व्यंजन भी लघु हो जाते हैं। जैसे—अ, इ, उ, ऋ, क, कि, कु, कृ आदि।

२. सम्पूर्ण व्यंजन लघु हैं।

३. संयुक्ताक्षर के पहले का वर्ण जिस पर ज़ोर नहीं पड़ता वह लघु ही माना जाता है। यथा 'कन्हैया' में 'क' लघु है।

४. यदि गुरु वर्ण लघुवत् पढ़ा जाय तो उसकी गणना भी लघु वर्ण में होती है। यथा—'जामवन्त के वचन सोहाए' में 'सो' का उच्चारण लघुवत् 'सु' की तरह होने पर लघु माना गया।

गुरु—१. दीर्घ-स्वर गुरु होते हैं और उन स्वरों के मेल से व्यंजन भी गुरु हो जाते हैं। यथा—आ, ई, ऊ, ए, ऐ, ओ, औ, अं, अः, का, की, कू, के, कै, को, कौ, कं, कः

अनुस्वार युत वर्ण जो, वा विसर्ग युत जौन।
स्वर अथवा व्यंजन रहे, गुरू होत हैं तौन॥
संयोगी के आदि लघु, अरु पदान्त लघु कोइ।
कहुँ दीर्घ हू गनात है, कवि इच्छा जब होइ॥
यथा 'सरस्वति' से विनय, करत 'कन्हैया' टेर।
यहाँ 'सरस्वति' में 'र' गुरु, 'क' लघु 'कन्हैया केर॥
'जु' लघु 'जुन्हैया' शब्द में, 'द' लघु 'मोद प्रद' माहिं।
संयोगी के आदि हैं, तौ हू लघू गनाहिं॥

२. संयुक्ताक्षर में हलन्त के पहिले का लघु वर्ण गुरु हो जाता है (क्योंकि उस पर उच्चारण का जोर पड़ता है,) यथा—'विष्णु' में 'वि' लघु होने पर भी गुरु है।

३. हल् 'र्' (रेफ) के पहले का लघु वर्ण गुरु हो जाता है। यथा--'कर्म', 'धर्म' में 'क', और 'ध' गुरु वर्ण माने जायँगे।

'बुधावतंशा कविराज सत्तम् ।
या मैं धरे ह्रस्व पदान्त वर्णम् ॥
ताकी कला दीर्घ यहाँ परे गने।
'वंशस्थ' के लक्षण में यथा भने ॥

लघु मात्रा करि पढ़त ही, गुरु हू लघू गिनाहिं।
त्यों लघु को गुरु लिखत हैं, कहूँ छन्द के माहिं ॥
'जेहि' सुमिरत सिधि होय' यह, चरण सोरठा ख्यात।
'जेहि' में 'जे' गुरु प्रकट है, यहि थल लघू गनात ॥

गुरु सिर गुरु, लघु सीस लघु, अर्द्धचंद्र युत बिन्दु।
ताकी गिनती अलग नहिं वर्णहिं कविकुल इन्दु ॥
'काँस', 'बाँस' मुँह, पोंहड़ा, काँच, कोंहड़ो दाँत।
चन्द्र बिन्दु युत वर्ण के, उदाहरण हैं ख्यात ॥

१, 'अं और अः इन्हें अनुस्वार और विसर्ग भी कहते हैं। 'अं' की मात्रा भी गुरु मानी जाती है। परन्तु अर्द्धचन्द्र में गुरु लघु का कोई प्रभाव नहीं रह जाता। यथा मुँह, बाँस आदि। 'अः' की मात्रा भी गुरु है। यथा—कोई दुःख न हमें दिखावें, में दु के आगे (ः) विसर्ग होने से 'दु' लघु होने पर भी गुरुवत् पढ़ा गया।

४. कभी कभी लघु वर्ण को भी गुरु मान लिया जाता है। यथा--'लीला तुम्हारी अति ही विचित्र' इसके पदान्त के 'त्र' को गुरु मान लिया गया क्योंकि इसका उच्चारण 'त्रा' गुरुवत् हुआ है।

लघु के सांकेतिक नाम—१. कोहल, २. शब्द, ३. रूप, ४. रस, ५. गंध, ६ रेखा, ७. सर, ८. मेरु और ९. लघु।*

गुरु के सांकेतिक नाम—१. नूपर, २. रसना, ३. चामर, ४. कुण्डल, ५ कनक, ६. वक्र, ७. मानस, ८. वलय, ९. हारावलि, १०. हार, ११ ताटंक, १२. केयूर, १३. दीघ, १४. दुकल।†

द्विगुरु के नाम—१. कमल, २. पान, ३. करदंड, ४. वज्र, ५. गजपति।‡

यद्यपि आजकल रीतिकार इन सांकेतिक शब्दों से काम नहीं लेते पर प्राचीन कवियों ने इनसे काम लिया है। 'भिखारी दास जी' ने भी अपने छन्दोर्णव पिंगल में इनसे काम लिया है।

---

* कोहल, शब्द, रूप. रस, गंध।
रेखा, सर, लघु, मेरु प्रबन्ध॥

† नूपुर, रसना नाम कहि, चामर, कुण्डल देखि।
कनक, वक्र, मानस, वलय, हारावलि पुनिलेख॥
हार और ताटंक कहि पुनि, केयूर बखान।
दीह, दुकल हरदेव, यह नाम गुरू के जान॥

‡ कमल, पान, करदंड कहि, औरो बज्र बखान।
गजपति, कविहरदेव यह, नाम द्विगुरु के जान॥

—हरदेव

छन्द की मात्राएं गिनना

किसी छन्द के प्रत्येक चरण में कितनी मात्राएं हैं, इसकी गणना इस प्रकार करनी चाहिये कि छन्द के प्रत्येक चरण के गुरु वर्णों पर गुरु का (ऽ) यह वक्राकार चिन्ह और लघुवर्णों पर लघु का खड़ी पाई जैसा पूर्ण विराम का (।) यह चिन्ह रखता जाय। सब बर्णों पर चिन्ह रखने के बाद गुरु चिन्हों की दो दो और लघु चिन्हों की एक एक मात्रा गिनता जाय और प्रत्येक चरण के आगे योगफल रखता जाय। बस प्रत्येक चरण की मात्राएं ज्ञात हो जायँगी।

वर्णों पर गुरु लघु के चिन्ह रखते समय इस बात का भी ध्यान रखे रहे कि धारा-प्रवाह (गति) के साथ पढ़ने में जिस वर्ण का उच्चारण लघुवत् हो उस पर लघु और जिसका उच्चारण गुरुवत् हो उस पर गुरु चिन्ह ही रखे। "जैसा लिखा जाय वैसा पढ़ा जाय" नागरी लिपिका यह नियम सर्वत्र लागू नहीं है। जैसे कि लिखा जाता है 'सोहाए' और पढ़ा जाता है 'सुहाए' इसलिये 'सो' पर लघु चिन्ह ही रखा जायगा।

यथा

ऽ।ऽ। ऽ ।।। ।ऽऽ
(१) जामवंत के बचन सोहाए।......१६ मात्राए

।। ।।ऽ। ।।। ।। ऽऽ
सुनि हनुमान हृदय अति भाए॥......१६ मात्राएं

ऽ ऽ। ऽऽ ।। ऽ ।ऽऽ
(२) लीला तुम्हारी अति ही विचित्र।......१८ मात्राएं

यति

छन्द-शास्त्र में विराम का भी नियम होता है। छन्द का प्रत्येक चरण एक वा अधिक स्थानों में टूटता है। अथवा यों कहना चाहिये कि छन्द-शास्त्र के अनुसार शब्द-योजना इस प्रकार से होती है कि पढ़ते-पढ़ते नियमित स्थान पर थोड़ा-सा रुककर तब आगे बढ़ना पड़ता है। इसे ही विराम, विश्राम, या यति कहते हैं। संक्षेप में यति का लक्षण यह भी हो सकता है कि 'छन्द में जिह्वा के इष्ट-विश्राम स्थान को यति कहते हैं।'

यथा

'भे प्रगट कृपाला, दीन दयाला, कौसल्या हितकारी।'

यह छन्द का एक चरण है जो 'कृपाला' और 'दयाला' पर टूटता है। यहाँ जिह्वा कुछ विश्राम लेती है। अतः इन शब्दों के आगे विराम-चिन्ह लगा दिये जाते हैं जो रुकने के लिये संकेत करते हैं।

यति-भंग

यति के स्थान पर यदि कोई शब्द विभाजित हो जाय तो वहाँ यति-भंग दोष कहा जाता है। कवि को इस दोष से बचना चाहिये।

यथा

हर हरि केशव मदन मो,—हन घन श्याम सुजान।
ज्यों व्रजवासी द्वारिका,—नाथ रटन दिन मान॥

'मदनमोहन' एक शब्द है। पर यहाँ 'मदन मो-' पहले चरण में और 'हन' दूसरे चरण में चला गया। इसी तरह 'द्वारिकानाथ' शब्द के भी दो टुकड़े होकर दोनों चरणों में बँट गये हैं। यही यति-भंगदोष है। यति-भंग दोष से पदों का अर्थ समझने में उलझन पड़ जाती है। यथाशक्ति इस दोष से बचना चाहिये।

गति

प्रत्येक छन्द में एक प्रकार की गति अर्थात् पाठ-प्रवाह का भी ढंग होता है। इसका कोई मुख्यतः नियम नहीं कहा जा सकता, अभ्यास पर निर्भर है।

यथा

'लषन सकोप बचन जब बोले'

यह सोलह मात्रा की चौपाई है। इसकी गति ठीक है।

गति-भंग

जहाँ छन्द के सब नियम पूरे-पूरे उतरते हैं परन्तु गति ठीक नहीं होती, वहाँ गति-भंग दोष कहा जाता है।

यथा

'लषन जब सकोप बचन बोले'

इस चरण में सोलह मात्राएं तो हैं परन्तु चौपाई की गति ठीक नहीं है। इसलिये यहाँ गति-भंग दोष माना जायगा। छन्द में मुख्य और प्रधान बात है उसकी गति का ठीक होना। लय छन्द का साँचा है, वह झट बतला देती है, कि छन्द की गति ठीक है अथवा नहीं। इसके अतिरिक्त गति का कोई मुख्य नियम नहीं कहा जा सकता।

गण

छन्द के चरणों की रचना गणों के अनुसार होती है। 'मात्रा या वर्णों के निश्चित समूह को गण कहते हैं'। गण दो प्रकार के होते हैं—मात्रिक और वर्णिक। आजकल लोग मात्रिक गणों से प्रायः काम नहीं लेते। मात्रिक छन्दों में इनकी आवश्यकता पड़ती है, इनकी जगह संख्या-सूचक-शब्दों और वर्णिक गणों से ही काम निकाल लेते हैं, और काम निकल भी जाता है। परन्तु कहीं कहीं मात्रिक गणों की बड़ी आवश्यकता पड़ जाती है; यथा 'सोरठा' और 'रोला' छन्दों की यति और मात्राओं में समता है, परन्तु गति में अन्तर है। मात्रिक गणों से इसका निर्णय ठीक हो जाता है। रोला के प्रसंग में इस बात को भलीभाँति स्पष्ट कर दिया गया है।

मात्रिक गण*

टगण, ठगण, डगण, ढगण और णगण यह पाँच भेद मात्रिक गणों के हैं जो क्रमशः ६, ५, ४, ३ और २ मात्राओं के सूचक हैं। अर्थात् टगण से ६, ठगण से ५, डगण से ४, ढगण से ३ और णगण से २ मात्राओं का बोध होता है। प्रस्तारानुसार टगण के १३, ठगण के ८, डगण के ५, ढगण के ३ और णगण के २ रूप होते हैं। इस तरह कुल ३१ रूप होते हैं इन रूपों की कोई कोई संज्ञाएं वर्णिक गणों से कहीं-कहीं मेल खा जाती हैं, यथा मगण से तात्पर्य ऽ ऽ ऽ तीन गुरु से है। यहाँ टगण के

---

*मात्राओं के निश्चित समूह को मात्रिक गण कहते हैं।

प्रथम रूप का नाम 'हर' है। जिसका रूप ऽऽऽ तीन गुरु है। नगण ।।। का रूप यहाँ ढगण के ।।। वलय या भाव नामक रूप से मिलता है। मात्रिक और वर्णिक गणों में बहुत अन्तर है। वर्णिक गण तीन वर्ण के होते हैं जिनके कुल रूप आठ ही हैं और मात्रिक के टगण से णगण तक ३१ रूप हैं। वर्णिक गण तीम लघु वर्ण तक के ही सूचक हैं और मात्रिक दो मात्रा तक के सूचक हैं।

किस नाम से गुरु लघु का कैसा क्रम समझना चाहिये यह आगे के इस नकशे से स्पष्ट है—

टगण (छः कल)*

क्रम संख्या,	रूप,	संज्ञा,	उदाहरण
१	ऽऽऽ	हर	सीताजी
२	।।ऽऽ	शशि	गिरधारी
३	।ऽ।ऽ	रवि	उमापती
४	ऽ।।ऽ	सुरपति	पारवती
५	।।।।ऽ	अहिप	जनकसुता
६	।ऽऽ।	अहि	कृपासिन्धु
७	ऽ।ऽ।	पंकज	दीनबन्धु
८	।।।ऽ।	अज	जगतनाथ
९	ऽऽ।।	कलि	राधापति

---

* शिव [१], ससि [२], रवि [३], सुरपति [४] अहिप [५], पंकज [६], अज [७], कलि [८], चंद [९]।

१०	।।ऽ।।	चन्द्र	मुरलीधर
११	।ऽ।।।	ध्रुव	रमारमण
१२	ऽ।।।।	धर्म	नंदसुवन
१३	।।।।।।	शालिकर	जलजनयन

ठगण (पंचकल)*

क्रम संख्या,	रूप,	संज्ञा,	उदाहरण
१	।ऽऽ	इन्द्रासन	पुरारी
२	ऽ।ऽ	शूर	राधिका
३	।।।ऽ	चाप	लखपती
४	ऽऽ।	हीर	गोपाल
५	।।ऽ।	शेखर	सुरपाल
६	।ऽ।।	कुसुम	रमापति
७	ऽ।।।	अहिगण	शोकहर
८	।।।।।	पाप गण	मनहरण

---

११ १२ १३
ध्रुव, धरमउ अरु सालिकर, छकलनाम सुखकंद ॥

१ २ ३ ४ ५
*इन्द्रासन अरु सूर, चाप, हीर, सेखर गनो ।
६ ७ ८
कुसुमो अहिगन रूर, पाप गनो पँचकल कहे ॥

सूचना—इन रूप-संज्ञाओं के पर्यायवाची शब्द भी इन शब्दों की जगह प्रयोग किये जाते हैं।

डगण (चौकल)१

क्रम संख्या	रूप	संज्ञा	उदाहरण
१	ऽ ऽ	सुरतलता, कर्ण	श्यामा
२	।।ऽ	कमल	विमला
३	।ऽ।	भूपति	रमेश
४	ऽ।।	चरण	मोहन
५	।।।।	विप्र	रघुवर

ढगण (त्रिकल)२

क्रम संख्या,	रूप;	संज्ञा,	उदाहरण
१	।ऽ	ध्वजा	उमा
२	ऽ।	सुरपति, पौन, नंद, ग्वाल, ताल	श्याम
३	।।।	भाव, वलय	भ्रमर

णगण (द्विकल)३

क्रम संख्या,	रूप,	संज्ञा,	उदाहरण
१	ऽ	हार, चौर, नूपुर, कुंडल,	श्री
२	।।	सुप्रिय	शिव

१—सुरतलता[१], अरु कमल[२] बखान। भूपति[३], चरण[४], विप्र[५] उर आन।

२—धुज[१], सुरपात[२], अरु भाव[३] कहि, तीन त्रिकल के नाम।

३—नूपुर[१] प्रिय[२] द्वै णगण के गण इकतीस बखान॥

मात्रिक गण और उनकी संज्ञाओं के प्रयोग प्रायः मात्रिक छन्दों में पुराने आचार्यों ने किये हैं; यथा--

प्लवंगम छन्द लक्षण

(१) छकल, द्विकल पुनि दोय त्रिकल गण ठानिये।
दै इक कमल रसाल धुजा पुनि आनिये।
यों कल कर इकईस चार पद बानिये।
छन्द प्लवंगम नाम धाम बुध मानिये ॥

अर्थात् प्लवंगम छन्द के प्रत्येक चरण में टगण (छकल) णगण (द्विकल), दो ढगण (दो त्रिकल) और अन्त में कमल (। । ऽ) अर्थात् डगण का दूसरा रूप और ध्वजा (। ऽ) अर्थात् ढगण का पहला रूप, इस तरह रखना चाहिये।

दूसरे शब्दों में भानुजी कहते हैं:—

गादि बसू दिसि, राम, जगंत प्लवंग में,

अर्थात् बसु (आठ) और दिसि-राम (तेरह) के विराम से इक्कीस मात्राओं का प्लवंगम छन्द होता है। उसके प्रत्येक चरण के आदि में गुरु और चरणान्त में जगण और गुरु रहता है।

इसी को यों भी कहते हैं—

(३) ग्यारह दस पर विरति, अन्त गुरु आनिये।

अर्थात् ग्यारह और दस के विराम से इक्कीस मात्रा का प्लवंगम छन्द होता है, अन्त में गुरु रहना चाहिये।

यथा

(१)

ऽ। ऽ। ऽ ऽ। ।ऽ ।।ऽ। ऽ

रूप रंग, की, खानि, भरी, अलसा,नि है।

६ २ ३ ३ कमल ध्वजा

लखिये श्याम सुजान नेह सरसानि है।

आनन अमल अनूपम अलक विराजती।

जनु अलि अवलिरसाल कंज पर राजती ॥

(२)

ऽ। ।ऽ ।। ऽ। ।ऽ। ।ऽ। ऽ

* गादि बसू दिसि, राम जगंत प्लवंग में।

धन्य वही जो, रँगै राम रस रंग में।

पावन हरि जन, संग सदा मन दीजिये।

राम कृष्ण गुण, ग्राम नाम रस भीजिये ॥

—भानु

(३)

फिरि बदनेस कुँवार, बियो सु फतेह अली।

बैठे इकले जाय, करनि मसलति भली।

घरी दोय बतराय, दुहूँ के मन रले।

कौल बचन करि एक, दोऊ डेरा चले ॥

—सूदन

---

* गादि यह नियम संकुचित है। आदि में गुरु की कोई आवश्यकता नहीं।

ऊपर के तीनों लक्षणों से यह तात्पर्य निकलता है कि प्राचीन कवियों ने प्रायः मात्रिक गणों से काम लिया है। आजकल संख्या सूचक शब्दों और वर्णिक गणों से अथवा सीधी संख्याएँ ही लिखकर काम लेते हैं। मात्रिक छन्द रचना में इनमें से किसी भी ढंग से काम लिया जा सकता है, यह ठीक है। परन्तु मात्रिक-गणों से काम लेने से गति-भंग दोष की आशंका कम रहती है। साथ ही ऐसे अनेक छन्द हैं जिनकी मात्राएँ बराबर हैं, यति में समता है परन्तु गति भिन्न है। इसके कोई नियम न बताकर चुप रहना पड़ता है। परन्तु मात्रिक गणों से काम लेने से ऐसी शंकाएँ नहीं उठतीं और उनका निराकरण भी सहज ही में हो जाता है। उदाहरणार्थ 'सोरठा' और 'रोला' की प्रत्येक पंक्ति में ग्यारह और तेरह के विराम से चौबीस मात्राएँ रहती हैं। केवल गति में अन्तर है यही कह कर संतोष करना पड़ता है। इसी को मात्रिक गणों की कसौटी पर कसते हैं तो स्पष्ट अन्तर मालूम हो जाता है। यह अन्तर रोला छन्द के वर्णन में दूसरे उल्लास में स्पष्ट किया गया है।

संख्या सूचक सांकेतिक शब्द

ऊपर मात्रिक गणों की चर्चा इसलिये और कर दी है कि आगे चलकर यदि काव्य-रसिक प्राचीन रीतिग्रन्थों को पढ़ना चाहें तो उनके लक्षण समझने में उन्हें आसानी हो। ऊपर कहा जा चुका है कि मात्रिक गणों के अतरिक्त एक प्रणाली मात्रिक

छन्दों में यह बरती जाती है कि संख्यासूचक सांकेतिक शब्दों से मात्रा गिनने का काम निकाल लिया जाता है; यथा—'लहो कल लोक की 'प्रतिभा' अर्थात् प्रतिभा छन्द में लोक (चौदह) मात्राएँ रहती हैं और आदि में 'ल' अर्थात् 'लघु' रहता है। यों तो संख्यासूचक सांकेतिक शब्दों की बड़ी सूची बन सकती है। स्थानाभाव से यहाँ थोड़े सांकेतिक शब्द लिखे जाते हैं।

०—नभ।

१—शशि, भू।

२—नयन, भुज, पक्ष, कर्ण, पद।

३—राम, अग्नि, काल, ताप, गुण।

४—वेद, वर्ण, फल, युग, आश्रम, अवस्था।

५—गति, वाण, पाण्डव, शिव, कन्या, तत्व, यज्ञ, वर्ग।

६—शास्त्र, राग, रस, ऋतु, वेदांग, ईति।

७—मुनि, स्वर, ताल, लोक, सिंधु, द्वीप, पुरी, वार।

८—बसु, सिद्धि, योग, याम, अंग, दिग्गज, अहि।

९—भक्ति, निधि, अंक, ग्रह, नाड़ी, भूखण्ड।

१०—दिशा, दोष, दिगपाल, अवतार।

११—शिव,

१२—रवि, राशि, भूषण, मास।

१३—भागवत, नदी।

१४—रत्न, मनु, विद्या, भुवन (लोक)।

१५—तिथि।

१६—कला, शृंगार।

१८—स्मृति, पुराण।

२०—नख।

२५—प्रकृति।

२७—नक्षत्र।

२८—योग।

३२—लक्षण, दाँत।

३३—देवता।

३६—रागिणी।

४९—पवन।

५६—भोग।

६३—वर्णमाला।

६४—कला।

इनके सिवा आगे की संख्याओं के भी सांकेतिक शब्द हैं। परन्तु कविगण संख्यासूचक शब्दों के योग से काम ले लेते हैं; यथा 'राग[६] वेद[४] कल प्रतिचरण' अर्थात् प्रत्येक चरण में ४६ मात्राएँ। यदि सांकेतिक संख्याओं को क्रम से रखें तो ६४ होना चाहिए परन्तु इनका क्रम उलटने की कविपरम्परा है।

शुभाशुभ और दग्धात्तर*

काव्य में शुभाशुभ वर्णों का भी ध्यान रखना पड़ता है। प्रायः स्वर सभी शुभ हैं। व्यंजनों में क, ख, ग, घ, च, छ, ज, ड, द, ध, न, य, श, स, त्त ये पन्द्रह वर्ण शुभ हैं। और शेष ङ, झ, ञ, ट, ठ, ढ, ण, त, थ, प, फ, ब, भ, म, र, ल, व, ष, ह ये उन्नीस वर्ण अशुभ कहलाते हैं। इनमें भी झ, भ, र, ष, ह ये पाँच तो इतने अशुभ हैं कि इन्हें दग्धात्तर कहते हैं। इन्हें भूलकर भी कविता के आदि में नहीं रखना चाहिए। पर बहुतों का कहना है कि नर-काव्य में इन वर्णों से बचना चाहिये। आशीर्वादक, मांगलिक, सुर-वाची और आदर्शवादी महात्माओं के संबंधी पदों के आदि में

---

* कंठाग्र करने के लियेः—

१. क ख ग घ च छ ज ड द ध न य श, स त्त अत्तर शुभ आहिं।
ङ झ ञ ट ठ ढ ण त थ प फ ब भ, म र ल व ष ह शुभ नाहिं॥

२. एक कवर्ग के अंत को वर्ण[1] चवर्ग के द्वै[2] 'मनीराम' गनीजै।
चारि टवर्ग के बीच बिना[3] तजि जानि थकार पवर्ग[4] न कीजै॥
तीन यवर्ग के छाँड़ि यकार[5] ते और सकार[6] हकार[7] न कीजै।
वर्ण सदोष विचारि के चित्त पे मित्त कवित्त के आदि न दीजै॥

अर्थात् (१) ङ, (२) झ ञ, (३) ट ठ ढ ण, (४) प फ ब भ म, (५) र ल व, (६) ष और (७) ह ये अशुभ वर्ण हैं।

I. देहु छन्द के आदि नहिं भूलि 'झ ह र भ ष भाइ।
आदि गुरु वरण मांगलिक, सुर वाची सुखदाइ॥

रखने से दोष नहीं होता। और अशुभ वर्ण को गुरु कर देने पर भी उस दोष का मार्जन हो जाता है। अक्षरों के शुभाशुभ का अधिक विचार मात्रिक छन्दों में होता है। वर्णिक छन्दों में वर्णिक गणों का।

अलग अलग प्रत्येक वर्ण का फल इस प्रकार है:—

छन्द के आदि में अ आ रखने से सम्पत्ति, इ ई से सुख उ ऊ से धन. ए ऐ से सिद्धि, ओ औ से शुभफल, क ख ग घ से लक्ष्मीलाभ, च से सुख, छ से स्नेह, ज से लाभ, ड से सौंदर्य और शोभा, त से तेज और सुख, द ध से धैर्य, न से सुख, य से मंगल, श से सुख, श्री स से सम्पत्ति और क्ष से सुख लाभ होता है। ये सब शुभ वर्ण हैं।

अशुभ वर्णों में झ भयदायक है। ट ठ से दुख, ढ से सौंदर्य-नाश, थ से युद्ध, प फ ब भ म से भय, र से दाह, ल व से संघर्ष, ष से दुख और ह से हानि होती है।

ङ ञ ण ये अशुभ हैं पर आदि में नहीं आते। स्वरों में 'ऋ' को कोई शुभ और कोई अशुभ मानते हैं पर शुभ अधिक मान्य है। अः बीच में आता है।

दग्धाक्षरों के दोषों का निराकरण ऊपर बतला आये हैं। इनके उदाहरण इस प्रकार हैं—

झ—झाँझ मृदंग संख सहनाई ['झ' गुरुवर्ण है।]
ह—हरि ब्यापक सर्वत्र समाना ['हरि' सुरवाची है।]
र—रमानाथ जहँ राजा, सो पुर बरनि कि जाइ ['रमा' सुर वाची]

"—रचहु मंजु मनि चौके चारू [रचहु मंगल वाची]
भ—भरत महा महिमा जलरासी ['भरत' सुखाची]
ष—षनमुख जनम सकल जग जाना ['षनमुख' सुखाची]

वर्णिक गण

तीन वर्णों के समूह को वर्णिक गण कहते हैं। प्रस्तार के अनुसार आदि, मध्य और अन्त के लघु-गुरु के विचार से उन के आठ रूप हैं:—

क्रम संख्या	रूप	संज्ञाएँ	उदाहरण
१	ऽऽऽ	मगण	गोस्वामी
२	।ऽऽ	यगण	यशोदा
३	ऽ।ऽ	रगण	कालिका
४	।।ऽ	सगण	यमुना
५	ऽऽ।	तगण	गांगेय
६	।ऽ।	जगण	विवेक
७	ऽ।।	भगण	वालक
८	।।।	नगण	नयन

किस गण का क्या नाम है, सोदाहरण इन को स्मरण रखने के लिये यह सूत्र बहुत उत्तम है—

"यमाता राज भान सलगम्"

इस सूत्र का प्रत्येक वर्ण एक एक गण का बोधक है। 'ल' लघु का और 'ग' गुरु का सूचक है। यह सूत्र आठ गण और

लघु, गुरु का बोधक है। ये दशाक्षर छन्द-शास्त्र में इसी तरह व्याप्त हैं जैसे कि भगवान् विष्णु विश्व में।

इस सूत्र से प्रत्येक गण का उदाहरण और रूप मालूम हो जाता है। यथा—'य' यगण का बोधक है। 'यगण' का रूप जानने के लिये उसके आगे के दो वर्ण 'मा' और 'ता' को इसके साथ मिलाने से 'यमाता' हुआ। इसे ही उदाहरण समझ लो। इस उदाहरण से ही यगण का। ऽ ऽ रूप सिद्ध हो गया। इसी प्रकार 'मगण' के लिये 'मा' के आगे के दो वर्ण मिला लो। 'मातारा' होगा। इससे मगण का ऽ ऽ ऽ यह रूप मालूम हो गया। ऊपर कहा जा चुका है कि इस सूत्र का प्रत्येक वर्ण एक एक गण का बोधक है अर्थात् सूत्र का प्रत्येक वर्ण प्रत्येक गण के आदि वर्ण का बोधक है। इसी नियम से सब गणों के नाम, रूप और उदाहरण मालूम हो सकते हैं। 'सलगम्' में 'स' 'सगण' नाम का बोधक है। स (।) लघु, ल (।) लघु और गम् में म् हलन्त होने से 'ग' (ऽ) गुरु का बोधक है। अर्थात् 'सलगम्' से सगण का ।। ऽ यह रूप स्पष्ट हो जाता है। ल (।) लघु का और 'ग' (ऽ) गुरु का बोधक है।

इसके अतिरिक्त गणबोधक और भी छन्दोवद्ध लक्षण अन्य विद्वानों ने बतलाए हैं उनमें से दो यहाँ उद्धृत कर दिये जाते हैं। रुचि के अनुसार इन्हें स्मरण कर लेना चाहिये।

(१)

आदि, मध्य, अवसान में, भ, ज, स गुरू ते जान।
य, र, त लघू ते जानिये, म, न क्रमते ग, ल मान॥

अर्थात् भगण के आदि में, जगण के मध्य में और सगण के अंत में गुरु रहता है। इसी तरह यगण के आदि में, रगण के मध्य में और तगण के अंत में लघु रहता है। और मगण में तीनों गुरु तथा नगण में तीनों लघु रहते हैं।

(२)

तीन गुरु जामें सोई 'मगन' बखाने गन,
नगन सो तीन लघु जामें सो प्रमान है।
आदि गुरु जा में सोई 'भगन', 'यगन' जा में,
आदि लघु सोई चारु सुख के निधान है॥
मध्य गुरु जा में सोई 'जगन' जहान जाने,
'रगन' सु मध्य जा में लघुता विधान है।
अंत गुरु जा में सोई 'सगन' सराहें ताहि,
'तगन' सु अंत लघु अशुभ महान है॥

इस पद्य का भाव स्पष्ट है।

देवता और फल

इन गणों के देवता और फल भी भिन्न-भिन्न हैं। यही नहीं बल्कि प्रत्येक गण का स्वामी, फल, मास, पक्ष, तिथि, वार, नक्षत्र, वर्ण (जाति) रंग, वस्त्र, भूषण, कुल, माता, पिता, लोक भी अलग अलग हैं। लघु गुरु समेत ये दशाक्षर दशों अवतार के सूचक हैं। (१) मगण—मत्स्य, (२) यगण—कच्छप, (३) रगण—वाराह, (४) सगण—नृसिंह, (५) तगण—वामन, (६) जगण—परशुराम, (७) भगण—राम और (८) नगण—कृष्ण।

वतार के सूचक हैं। (६) गुरु—बौद्ध और (१०) लघु—कल्कि के दसवें अवतार के सूचक हैं। जो हो, पर इन्हीं दशाक्षरों पर छन्द शास्त्र की निर्भरता है।

प्रत्येक गण के सभी अंग जानने की आवश्यकता नहीं है। साधारणतया प्रत्येक गण का देवता और उसका फल जानना आवश्यक है उसमें भी मुख्यतः फल। जिससे कि छन्द के आदि में अशुभ फल देने वाले गण का ध्यान रखा जा सके। देवता और फल-सूचक दो पद दिये जाते हैं। अपनी रुचि के अनुसार उन्हें कंठ कर लेना चाहिये।

(१)

तीनों 'गो' 'मगन' में 'मही' है सुर 'लक्ष्मी' फल,
'नगन' त्रिलघु सुर 'नाक' वर बुद्धिदान।
आदि गुरु 'भगण' है चन्द्र सुर 'मंगल दा'
लघु आदि यगन 'जल' आनँद अनेक जान।
'जगन' गो मध्य 'सूर' स्वामी सुख दूर करें,
मध्य 'ल' रगन 'अग्नि' स्वामी दुख को निदान।
सगन में अन्त गुरु स्वामी 'वायु' भ्रमन है,
'ल' अंत तगन 'व्योम' स्वामी सून्य फल मान॥

अर्थ स्पष्ट है।

(२)

मगण पृथ्वी तासु फल श्री, यगण जल आयु प्रदं।
रगण पावक दाह ता फल, सगण वायु विदेशदं।

तगण व्योम तु शून्य फलयुत, जगण आदित रुज फलं।
नगण स्वर्ग सदा सुखप्रद भ शशि देवै यश फलं।

भाव स्पष्ट है।

यद्यपि गणों के देवता, फल आदि के संबंध के दो पद लिख दिये हैं। फिर भी यह स्पष्ट करने के लिये कि किस गण का क्या रूप, उदाहरण, देवता और फल है यह गण-फलक दिया जाता है।

गण-फलक

गण	रूप	उदाहरण	देवता	फल	शुभाशुभ
मगण	SSS	माता जी	पृथ्वी	लक्ष्मी	शुभ
नगण	।।।	पवन	स्वर्ग	सुख	
यगण	।SS	भवानी	जल	आयु	
भगण	S।।	बालक	चन्द्रमा	यश	
जगण	।S।	ब्रजेश	सूर्य	रोग	अशुभ
रगण	S।S	देवता	अग्नि	दाह	
तगण	SS।	गोविंद	आकाश	शून्य	
सगण	।।S	यमुना	वायु	विदेश	

ऊपर के फलक से शुभ और अशुभ गण स्पष्ट हो जाते हैं। आचार्यों का कहना है कि केवल छन्द के पहले पद में अशुभ गण नहीं पड़ना चाहिये। और यदि पहला चरण भी मंगल-वाची या सुखवाची हो तो अशुभ गण का भी कोई दोष नहीं माना

जाता। कुछ का कहना है कि गणों के शुभाशुभ का विचार भी मात्रिक छन्दों में ही किया जाता है वर्णिक में नहीं। फिर भी जहाँ तक हो वर्णिक छन्दों के आदि चरण में अशुभ गण नहीं रखने चाहियें और यदि रखने ही पड़ें तो देववाची या मंगल-वाची बनाकर ही रखना चाहिये।

द्विगण-विचार

जिस तरह दग्धाक्षरों को हम गुरु करके या सुर और मंगल-वाची शब्दों में प्रयोग कर लेते हैं। उसी तरह यदि हमें अशुभ गण रखना ही पड़े तो उसके आगे दूसरा शुभ गण रखने से उस दोष का परिहार हो जाता है। इस नियम को द्विगण-विचार कहते हैं। इन आठों गणों में मगण और नगण की मित्र, भगण और यगण की दास, जगण और तगण की उदासीन तथा सगण और रगण की शत्रु संज्ञा हैं। द्विगणों के संयोग और फलाफल का यह फलक दिया गया है।

द्विगण-फलक

गण संज्ञा	संयोग	फल
१. मित्र	मित्र + मित्र	सिद्धि
मगण, नगण	मित्र + दास	विजय
	मित्र + उदासीन	हानि (गोत्र-दुखद)
	मित्र + शत्रु	प्रिय नाश (बंधु-हानि)
२. दास	दास + मित्र	सिद्धि (कार्य सिद्धि)
भगण, यगण	दास + दास	सर्व जीववश (कोई कोई हानि मानते हैं)
	दास + उदासीन	पीड़ा (धन नाश)
	दास + शत्रु	पराजय (मित्र भी शत्रु हो)
३. उदासीन	उदासीन + मित्र	अल्प-फल
जगण तगण	उदासीन + दास	प्रभुता प्राप्ति (कोई दुख मानते हैं)
	उदासीन + उदासीन	विफल
	उदासीन + शत्रु	दुःख
४. शत्रु	शत्रु + मित्र	शून्य
रगण, सगण	शत्रु + दास	प्रिय-नाश (नारि-नाश)
	शत्रु + उदासीन	शंका (कुल-नाश)
	शत्रु + शत्रु	पराजय (नायक-नाश)

इस फलक से स्पष्ट हो गया कि द्विगण में किस गण के साथ किस गण का संयोग शुभ है और किस के साथ किस गण का अशुभ। कंठाग्र करने के लिये इस फलक को छन्दोवद्ध दे दिया है।

मगन, नगन ये मित्र हैं, भगन, यगन ये दास।
उदासीन ज त जानिये, र स रिपु केशवदास॥

मित्र ते जु होय मित्र बाढैं वहु रिद्धि सिद्धि,
मित्र तें जु दास त्रास युद्ध तें न जानिये।
मित्र तें उदास गन होत गोत दुःख देत,
मित्र तें जु शत्रु होय मित्रबंधु हानिये।
दास तें जु मित्रगण काज सिद्धि केशोदास,
दास तें जु दास बस जीव सब मानिये।
दास तें उदास होत धन नास आसपास,
दास तें जु शत्रु, मित्र शत्रु सो बखानिये ॥१॥

जानिये उदास तें जु मित्रगन तुच्छ फल,
प्रकट उदास ते जु दास प्रभुताइये।
होय जो उदास तें उदास तो न फलाफल,
जो उदास ही तें शत्रु तो न सुख पाइये।
शत्रु तें जु मित्रगन ताहि सो अफल गन,
शत्रु तें जु दास आशु बनिता नसाइये।
शत्रु तें उदास कुल नाश होय केशोदास,
शत्रु तें जु शत्रु नाश नायक को गाइये ॥२॥

नर-काव्य में गणागण का विचार अवश्य करना चाहिये। हाँ, देववाची, मंगलवाची शब्दों तथा देवकथा प्रसंग में मात्रिक

या वर्णिक छन्दों के अन्तर्गत गणागण, और दग्धाक्षरों के विचार की विशेष आवश्यकता नहीं। परन्तु ग्रन्थारंभ में ऐसा विचार करना उत्तम है। प्राचीन आचार्यों ने ऐसा ही किया है। रामचरितमानस का आरंभ—श्लोक 'वर्णानां' मगण तथा सोरठा 'जेहिसु' नगण से हुआ है। आजकल भी विचारशील कवि इसी शैली पर चल रहे हैं। कविवर मैथिलीशरण जी ने 'साकेत' का 'जयति' नगण से; सिरस जी ने 'भरत भक्ति' का 'अचल' नगण से और महाकवि 'हरिऔध' जी ने 'प्रियप्रवास' का 'दिवस' नगण से ही आरंभ किया है।

तुक

छन्द रचना में तुक का जानना भी बहुत आवश्यक है। यों तो कान इतने अभ्यस्त होते हैं कि छन्द सुनते ही तुक को पहचान लेते हैं। वास्तव में तुक में ऐसा ही आकर्षण है कि वह श्रोता को मुग्ध कर देती है। यद्यपि यह नहीं कहा जा सकता कि बिना तुक के कविता हो ही नहीं सकती! फिर भी यह स्वयं-सिद्ध बात है कि तुक से पद में लयगत-सौंदर्य, कर्ण-माधुर्य और विचित्र आकर्षण आजाता है। लय अथवा धारा-प्रवाह छन्द का प्राण है; तुक उसका सहोदर है।

कहा जा सकता है कि संस्कृत में तो प्रायः अतुकान्तों का ही साम्राज्य है, फिर भी संस्कृत में पदलालित्य, कर्ण-प्रियता, लयगत-सौंदर्य बेजोड़ हैं। ठीक है; इसका कारण है कि

संस्कृत में प्रायः चुने हुए वृत्तों में ही पद्य-रचना की जाती है। और उन वृत्तों के कुछ ऐसे अनूठे गठे हुए-वर्ण-क्रम से साँचे तैयार किये गये हैं कि जिनमें ढलते ही पद अनोखे सरस और कर्ण-मधुर हो जाते हैं। हिन्दी में भी चुने हुए संस्कृत के वर्ण-वृत्तों में अतुकान्त रचना बुरी नहीं जँचती। महाकवि हरिऔध जी का 'प्रिय-प्रवास' अतुकान्त वर्ण-वृत्तों का ही महाकाव्य है, पर वह सरसता, लालित्य और कर्ण-प्रियता में अपने ढंग का बेजोड़ है। हिन्दी के मात्रिक छन्दों में अतुकान्त अच्छे नहीं जँचते; सुनते ही कान में खटक पैदा कर देते हैं।

हिन्दी में तुक कहाँ से आई? इसके जन्मदाता हमारे अपढ़ ग्रामीण हैं। उनकी बात-बात में तुक चलती है। उनके गीतों में तुकबंदी का ही बाहुल्य होता है। "मरे जायँ मलारें गायँ" "ऊधो का लेना न माधो का देना" ऐसी ही तुकमय उनकी कहावतें हैं। हिन्दी-साहित्य में चारण और भाटों के द्वारा गीति-काव्य और वीर-गाथाओं से 'तुक' का प्रवेश हुआ। और चिरकाल से तुकमय पद सुनते आने से वह हमारे कानों का विषय बन गया है।

संस्कृत में भी जो छन्द तुकमय हैं, उनका कहना ही क्या? जयदेव जी के संस्कृत काव्य गीतगोविंद में तुकों के दर्शन होते हैं; यथाः—

'पतति पतत्रे विचलित पत्रे, शंकित भवदु पयानम्।
रचयति शयनं सचकित नयनं, पश्यति तव पंथानम्॥"

तुकांत ने इस पद में कितना आकर्षण ला दिया है। प्राकृत भी तुक से ख़ाली नहीं है—

"पिंग जटा बलि ठाविअ[१] गंगा.

धारिअ णाअरि[२] जेण[३] अधंगा[४]।

चंद कला जसु[५] सीसहि णोक्खा[६],

सो तुम्ह संकर दिज्जउ[७] मोक्खा[८]।

उर्दू में भी क़ाफ़िया और रदीफ़ दोनों का नियम होता है। हाँ, किन्हीं शेरों के तुकांत में सम-स्वर-वर्ण-समता होती है और किन्हीं में नहीं; यथा—

सम-स्वर-वर्ण-समता

खींचो न कमानों को न तलवार निकालो।

जब तोप मुक़ाबिल है तो अख़बार निकालो॥

सम-स्वर-वर्ण-असमता

क़र्ज़ की पीते थे मय लेकिन समझते थे कि हाँ।

रंग लायेगी हमारी फ़ाक़ामस्ती एक दिन॥

जो हो, हिंदी का पुराना साहित्य भी तुकमय है; और आजकल की खड़ी बोली की रचनाओं में भी तुक का प्राधान्य है। लोकमत तुकों के ही पक्ष में है। हाँ, अंग्रेज़ी और बंगला के प्रभाव में आकर हिन्दी के कुछ कविगण अतुकांत रचनाओं की ओर झुक गये हैं।

---

१ स्थापित २ नागरि ३ येन ४ अर्धंग ५ यस्य ६ अनोखा ७ दीजिये ८ मोक्ष।

तुक है क्या ? छन्द के चरणांत में आने वाला अनुप्रास ही वास्तव में तुक है। जिसे सीधे-सादे शब्दों में यों कह सकते हैं—छंदों के चरणांत में रहने वाले समस्वर-वर्णों की समता ही तुक है।"

तुक के सम्बंध में हमें दो बातें बतलानी हैं—एक यह कि उत्तमता की दृष्टि से तुकों के कितने प्रकार हैं ? उनके क्या नियम हैं ? दूसरे यह कि सम, अर्द्धसम, आदि छंदों के अंतर्गत—सम, विषमादि चरणों में—आने के कारण चरणों के इन नाम-भेदों से तुकों के नाम और प्रकार क्या हैं ?

पहले हमें उत्तमता की दृष्टि से तुकों का निर्णय करना है। उत्तमता की दृष्टि से तुकों में प्रकारांतर से दो ढंग बरते गये हैं—एक समस्वर गुरु लघु का आधार लेकर और दूसरा समस्वर-वर्ण-समता के सहारे पर। पर वास्तव में दोनों एक ही हैं।

१. समस्वर गुरु-लघु का आधार

१—यदि छन्द के चरणान्त में दो गुरु आवें तो वहाँ पाँच मात्राओं के समस्वर मिलने से तुक उत्तम, चार के मिलने से मध्यम और चार से कम मिलने से तुक निकृष्ट हो जाती है।

उत्तम

जौं तपु करइ कुमारि तुम्हारी।
भाविउ मेटि सकहिं त्रिपुरारी॥

मध्यम

पुत्रों को नत देख धात्रियाँ बोलीं धीरा—
जाओ बेटा, 'रामकाज' क्षण-भंग शरीरा।

—मैथिलीशरण गुप्त

निकृष्ट

महा तुच्छ यम कोटि तिहारे आगे पुत्री
सती-सिरोमनि उभय लोक महँ तुही भवित्री॥

यहां केवल 'त्र' में स्वर-साम्य है।

२—यदि छन्द के चरणान्त में लघु-गुरु (। ऽ) या गुरु-लघु (ऽ ।) आवें तो पाँच मात्राओं के समस्वर के मिलने से उत्तम, चार के मिलने से मध्यम इस से कम के मिलने से तुक निकृष्ट कहलाती है।

उत्तम

(१) सरस सारस सारस सोहते।
कमलिनी अलिनी सर जोहते॥

—'सिरस'

(२) मृत्यु? उसमें तो सहज ही मुक्ति।
भोग तू निज भावना की भुक्ति॥

—मैथिलीशरण गुप्त

मध्यम

(१) परकाजहि देह को धारे फिरौ परजन्य जथारथ ह्वै दरसौ ।
निधि नीर सुधा के समान करौ सब ही विधि सज्जनता सरसौ ।।
'घन आनंद' जीवन दायक हौ कछु मेरियौ पीर हिये परसौ ।
कबहूँ वा बिसासी सुजान के, आँगन मो अँसुवान कों लै बरसौ ।।

—घनानंद

(२) सियापति छाँड़ि न कोई सहाय ।
उमापति सेवक क्यों न कहाय ।

—मान

निकृष्ट

(१)

होता है हित के लिये सभी ।
करते हैं हरि क्या अहित कभी ?

—मैथिलीशरण गुप्त

(२)

चरन सेवा करत निसि दिन, रामकी करि प्रीति ।
कछु न चाहिय मोहि आनहु, भई प्रभु परतीति ।।

—'सिरस'

(३)

निन्दा अस्तुत उभय सम, ममता मम पदकञ्ज ।
ते सज्जन मम प्रान प्रिय, सुख मंदिर सुखपुंज ।।

३. यदि छन्द के चरणान्त में दो लघु आ पड़ें तो चार मात्राओं का सम-स्वर मिलना उत्तम, दो का मध्यम और एक का निकृष्ट है।

उत्तम

गुरु-पद-रज-मृदु-मंजुल अंजन।
नयन अमिय दृग-दोष विभंजन।

मध्यम

धन्य धन्य तैं धन्य विभीषन।
भयेहु तात निसिचर-कुल-भूषन।

—रामचरित-मानस

निकृष्ट

फिरहु तोष मम हृदय, भयो तू मेरो ही सुत।
पुष्प गुलाब प्रभाव, न कोउ कंटक सन रूसत॥

—'सिरस'

२. सम-स्वर वर्ण-समता का आधार

छन्दों के चरणान्त में अधिक सम-स्वर-वर्णों की समता होने से उत्तम, न्यून समता होने से मध्यम और अनियमता होने से निकृष्ट तुक होती है।

उत्तम तुक के सम-सरि, विषम-सरि, कष्ट-सरि, मध्यम के असंयोग-मीलित, स्वर-मीलित, दुर्मिल और निकृष्ट तुक के अमिल-सुमिल, आदि-मत्त-अमिल और अन्त-मत्त-अमिल ऐसे तीन-तीन भेद हैं।

उत्तम

सम-सरि १

कुलिस किसी पर कड़क रहे हैं आली तोयद तड़क रहे हैं।
कुछ कहने के लिये लता के अरुण अधर वे फड़क रहे हैं॥
मैं कहती हूँ—रहें किसी के हृदय वही, जो धड़क रहे हैं।
अटक अटक कर भटक भटक कर भाव वही जो भड़क रहे हैं॥

विषम-सरि २

कहुँ दाभन ते मुख जाको छिद्यो जब तू दुहिता लखि पावत ही।
अपने कर ते तिन घावन पै तुही; तेल हिंगोट लगावत ही॥
जिहि पालन के हित धान समा, नित मूठहि मूठ खवावत ही।
मृग-छौना सो क्यों पग तेरे तजे जाहि, पूत लौं लाड़ लड़ावत ही॥

—राजा लक्ष्मणसिंह

कष्ट-सरि ३

खिले नेवाड़ी फूल, रंग अति लगें मनोहर।
नील कमल से हरित, डार कूजत खग सुंदर॥

१—'सरि' शब्द का अर्थ है 'आवृत्ति। पूरे पदों में यहाँ अधिक से अधिक सम-स्वर-वर्ण-समता है।

२—पूरे पदों में आये हुए कुछ वर्णों की समता हुई है।

३—बड़ी कठिनाई से सम-स्वर सहित एक वर्ण की समता हुई है।

मध्यम

असंयोग-मीलित १

उच्चारित होती चले वेद की वाणी।
गूंजै गिरि-कानन-सिंधु-पार कल्याणी।
—साकेत

स्वर-मीलित २

ठाढ़े हैं नव द्रुम डार गहे,
धनु कांधे धरे कर शायक लै।
बिकटी भृकुटी बड़री अखियाँ,
अनमोल कपोलन की छबि है।
तुलसी असि मूरति आनि हिये,
जड़ डारु दै प्रान निछावरि कै।
श्रम-सीकर साँवरि देह लसै,
मनो रारि महा-तम तारक मै॥
—कवितावली

दुर्मिल ३

प्रभु को निष्कासन मिला, मुझको कारागार।
मृत्यु दण्ड उन तात को, राज्य तुझे धिक्कार॥

---

१ तुक के संयुक्त वर्ण का समता में न गिना जाना असंयोग मीलित तुक है। ऊपर की तुक 'वाणी' 'ल्याणी' में 'ल्या' के साथ यदि 'व्या' जैसा वर्ण होता तो 'य' और 'ण' की समस्वर-वर्ण समता होने से तुक उत्तम हो जाती।

२ चरणों के सर्वान्त्य वर्ण में केवल समस्वर समता है।

३ सर्वान्त्य समस्वर सहित वर्ण की समता है।

निकृष्ट

अमिल-सुमिल १

चँद भगीरथ की की शुचि चाँदनी, कै शिव की भल कीरति छावै।
चंदन खौर लगाव मही, किधौं चौर सुहात, बयारि डुलावै।
धाव सुधा-सरिता जग बीच, किधौं यश-चादरि स्वच्छ बिछावै।
छीर-पयोधि बह्यो बहु छीर किधों अघ-भंगनि गंग सुहावै॥

—भरत-भक्ति

आदि मत्त अमिल २

मुनि जेहि ध्यान न पावहिं, जाहि न जानत बेद।
कृपा-सिंधु सोइ कपिन्ह सन, करत अनेक विनोद॥

—रामचरित मानस

अन्त मत्त अमिल ४

ठेलि ठेलि कै कायरनि, तुही नरक में देति।
असि तू ही वर-वीर की, होति स्वर्ग की हेतु॥

अतुकान्त

छन्दों के चरणान्त में स्वर और वर्ण समता न होना ही अतुकान्त अथवा भिन्न तुकान्त है।

---

१ छन्द में चरणान्त के एक दो समस्वर वर्णों की दो या तीन चरणों में समता होना ही अमिल सुमिल तुक है ऊपर के पहले और तीसरे चरण में समता की झलक है।

२ चरणान्त के तुक वाले आदि वर्ण के स्वरों में विषमता होना।

३. चरणों के सर्वान्त्य वर्ण के स्वरों में विषमता का होना।

विलसित उरमें है जो सदा देवता लों।
वह निज-उर में है ठौर भी क्यों न देता।
नित वह कलपाता है मुझे कान्त हो क्यों ?
जिस बिन कल, पाते हैं नहीं प्राण मेरे॥

—प्रिय प्रवास

सूचना—छन्दों के चरणान्त में वीप्सा, यमक और लाट अलंकार के पदों की आवृत्ति होने वीप्सा, यामिका और लाटिया ये भी उत्तम तुकों के भेद किये जा सकते हैं।

चरण भेद से तुकान्त-वर्गीकरण

सम, अर्ध-सम आदि छन्द-भेदों के अन्तर्गत—सम-विषमादि चरणों में—आने के कारण चरणों के इन नाम-भेदों से तुकों के छः प्रकार हैं—१. सर्वान्त्य, २. समान्त्य-विषमान्त्य, ३. समान्त्य, ४. विषमान्त्य, ५. सम-विषमान्त्य और ६. भिन्नान्त्य।

१. सर्वान्त्य-छन्द के चारों चरणों में तुक साम्य को सर्वान्त्य कहते हैं।

मनहरण

सुनिये विटप प्रभु ! पुहुप तिहारे हम,
राखिहौ हमैं तौ सोभा रावरी बढ़ाय हैं।
तजि हौ हरषि कै तौ बिलग न मानै कछु,
जहाँ जहाँ जैहैं तहाँ दूनो जस गाय हैं॥
सुरन चढ़ैंगे नर सिरन चढ़ैंगे फेरि,
सुकवि 'अनीस' हाथ-हाथनि बिकाय हैं।

देस में रहैंगे परदेस में रहैंगे,
काहू भेस में रहैंगे तऊ रावरे कहाय हैं ॥

— अनीस

२. समान्त्य-विषमान्त्य—अर्द्ध-सम छन्द के सम-सम तथा विषम-विषम दलों में तुक साम्य को समान्त्य-विषमान्त्य तुक कहते हैं।

सोरठा

जेहि सुमिरत सिधि होय, गननायक करिबर बदन।
करहु अनुग्रह सोय, बुद्धि-रासि सुभ-गुन सदन ॥

३. समान्त्य—अर्द्ध-सम छन्द के सम दलों के तुक-साम्य को समान्त्य कहते हैं।

दोहा

तुलसी चातक ही फबै, मान राखिबो प्रेम।
बक्र-बुंद लखि स्वाति हू, निदरि निबाहत नेम ॥

४. विषमान्त्य—अर्द्ध-सम छन्द के विषम दलों के तुक-साम्य को विषमान्त्य कहते हैं।

सोरठा

सुर नर मुनि कोउ नाहिं, जेहि न मोह माया प्रवल।
अस विचार मन माहिं, भजिय महा-माया पतिहि ॥

५. सम-विषमान्त्य—सम-छन्द के सम-विषम चरणों के निकटतम एक एक जोड़े—पहले के साथ दूसरे और तीसरे के साथ चौथे—में तुक साम्य होना सम-विषमान्त्य तुक कहलाती है।

चौपाई

पुलकि गात हिय सिय रघुबीरू। जीह नाम जप लोचन नीरू ॥
लखन राम सिय कानन बसहीं। भरत भवन बसि तप तनु कसहीं॥

६. भिन्नान्त्य—सम-छन्द के तुकान्तों की पारस्परिक विषमता को भिन्नान्त्य कहते हैं।

मन्दाक्रान्ता

शोभा-वाले-बिटप बिलसे पक्षियों के स्वरों से।
विज्ञानी है परम-प्रभु के प्रेम का पाठ पाता ॥
व्याधा की हैं बधन-रुचियाँ और भी तीव्र होतीं।
यों दोनों के श्रवण करने में बड़ी-भिन्नता है ॥

—प्रियप्रवास

छन्द-भेद

छन्द का शब्दार्थ और लक्षण बताया जा चुका है। मात्रा और वर्ण-गणना के भेद से पहले इसके दो भेद हैं। मात्रिक (जाति) और वर्णिक (वृत्त)। जिन छन्दों में मात्राओं की संख्या और क्रम आदि का नियम होता है उन्हें मात्रिक अथवा जाति छन्द कहते हैं और जिन छन्दों में वर्णों की संख्या और उनके गुरु-लघु के क्रम का भी नियम होता है उन्हें वर्णिक या वृत्त छन्द कहते हैं।

इन मात्रिक और वर्णिक छन्दों में से फिर प्रत्येक के तीन-तीन भेद हैं:—सम, अर्द्ध-सम और विषम। फिर इनमें 'सम' छन्दों के 'साधारण' और 'दण्डक' ये दो-दो भेद हो जाते हैं।

इसके पश्चात् इन साधारण, दण्डक, अर्द्ध-सम और विषम मात्रिकों के मूल और 'मुक्तक' ये दो-दो भेद हो जाते हैं और वर्णिकों में 'सम' के अन्तर्गत साधारण के मूल और उपजाति; तथा दण्डकों के 'गणवद्ध और मुक्तक' दो-दो भेद हो जाते हैं। इसी तरह वर्णिक अर्द्ध-सम और विषम छन्दों के भी गणवद्ध और मुक्तक ये दो-दो भेद हो जाते हैं। स्पष्ट समझने के लिये अन्त में छन्द-वंश-वृत्त भी दे दिया है।

मात्रिक-छन्दों के भेद

सम—जिन छन्दों के चारों चरणों में मात्राओं की संख्या और उनके क्रम की समता हो उन्हें मात्रिक छन्द कहते हैं; यथा—चौपाई।

अर्द्ध-सम—जिन छन्दों के विषम-विषम (पहले-तीसरे) और सम-सम (दूसरे-चौथे) चरणों में मात्राओं की संख्या और उनके क्रम की समता होती है, उन्हें मात्रिक अर्द्ध-सम छन्द कहते हैं; जैसे—सोरठा।

विषम—मात्रिक सम और अर्द्ध-सम छन्दों के अतिरिक्त छन्द विषम कहलाते हैं। जैसे—आर्या, गाथा, मिलिन्दपाद आदि।

सम छन्दों के अन्तर्गत:—

साधारण—जिन सम छन्दों के प्रत्येक चरण में वत्तीस मात्राएं तक रहती हैं वे साधारण मात्रिक कहलाते हैं। जैसे—समान-सवैया, आदि।

दण्डक—जिन सम-छन्दों के प्रत्येक चरण में बत्तीस से अधिक मात्राएं रहती हैं वे मात्रिक-दण्डक कहलाते हैं। जैसे—करखा आदि।

इन सम-साधारण, दण्डकों तथा अर्द्ध-सम और विषमों के भी दो-दो भेद हैं—मूल और मुक्तक।

मूल—मूल छन्द वे हैं जिनकी मात्रा-गणना सम्पूर्ण चरणों में समान रहती है। जैसे—चौपाई, सोरठा, मिलिन्द-पाद आदि।

मुक्तक—जिन छन्दों के चरणों में एक दो-मात्रा के घट-बढ़ जाने से अवान्तर-भेद हो जाते हैं वे छन्द मात्रा-मुक्तक कहलाते हैं; जैसे—रूप चौबोला, छपदी आदि।

वर्णिक छन्दों के भेद

सम—जिन छन्दों के चारों चरणों में वर्णों की संख्या और गुरु-लघु का क्रम अथवा गण-समानता रहती है वे वर्णिक-सम छन्द कहलाते हैं; जैसे—मन्दाक्रान्त, सवैया, दण्डक आदि।

अर्द्ध-सम—जिन छन्दों के सम-सम (दूसरे-चौथे) और विषम-विषम (पहले-तीसरे) चरणों में वर्ण-क्रम और उन चरणों की वर्ण-संख्या में समानता होती है वे वर्णिक अर्द्ध-सम कहाते।

---

* बंगला, मराठी, अंग्रेज़ी आदि भाषाओं के प्रभाव के कारण हिन्दी में अब अनेक नये नये छन्दों की रचना होने लगी है। इसीलिये गणबद्ध और मुक्तकों के भेद में वृद्धि करनी पड़ी है।

विषम—वे वर्णिक छन्द हैं जिनके चरणों में से हर एक चरण की वर्ण संख्या और उनके गुरु-लघु के क्रम में परस्पर समता न हो।

सम छन्दों के अन्तर्गत—

साधारण—छब्बीस वर्ण तक के छन्द साधारण वृत्त कहलाते हैं जैसे—सवैया।

दण्डक—छब्बीस वर्ण से अधिक के छन्द दण्डक कहलाते हैं। जैसे—'मनहरण'।

इन सम-साधारण और दण्डकों तथा अर्द्ध-सम और विषमों के भी दो-दो भेद हैं। सम-साधारण के मूल और उपजाति ये दो भेद हैं और अर्द्ध-सम तथा दण्डकों के गण-वद्ध और मुक्तक ये दो-दो भेद हैं।

मूल—वे छन्द हैं जिनकी चारों चरणों में वर्ण-गणना सम और गण-वद्ध होती है। जैसे—मन्दाक्रान्ता।

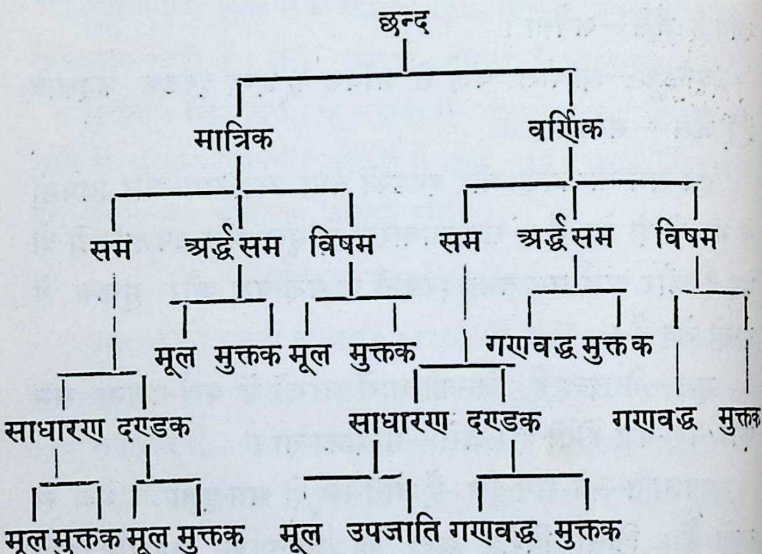
उपजाति—वे सम-वृत्त हैं जो भिन्न दो सम-वृत्तों के मेल से बनते हैं। किसी विशेष छन्द की जाति के अन्तर्गत होने के कारण वे उपजाति कहलाते हैं। यथा—मत्तगयंद उपजाति।

गणवद्ध—जिन छन्दों में गण तथा गुरु-लघु आदि का क्रम रहता है वे गण-वद्ध कहलाते हैं। जैसे—सवैया, अनंगशेखर आदि।

मुक्तक—जो छन्द गण तथा गुरु-लघु आदि के नियमों से मुक्त रहते हैं वे मुक्तक कहलाते हैं। जैसे—मनहरण।

इन भेदोपभेदों के अन्तर्गत छन्दों के नाम, लक्षण और उदाहरण आदि का दूसरे उल्लास में विस्तार से वर्णन है। अधिक स्पष्टता के लिये यहाँ छन्द-वंश-वृक्ष दिया जाता है।

छंद-वंश-वृक्ष



मात्रिक तथा वर्णिक छन्दों की पहचान

अमुक छन्द वर्णिक है या मात्रिक? इसके पहचानने का सरल ढंग यह है कि छन्द के वर्ण गिन डालो। यदि चारों चरणों में वर्ण-समता है तो वह वर्णिक है अन्यथा मात्रिक। वर्णिकों में साधारण है या मुक्तक? इसके लिये गुरुलघु के क्रम पर ध्यान दे लेना चाहिये। ध्यान रहे कि वर्णिक छन्दों के वर्ण

गिनने में संयुक्ताक्षरों की गणना नहीं की जाती। यथा 'इन्द्र' में 'इ' और 'न्द्र' दो ही वर्ण गिने जावेंगे।

यह दोहा भी छन्द पहचानने के लिये उपयोगी हो सकता है—

लघु गुरु चारों चरण में क्रम तें मिलें समान।
वर्णिक है वह, अन्यथा मात्रिक छन्द प्रमान॥

अर्थात् 'यदि छन्द के चरणों में गुरु-लघु का वर्ण-क्रम मिले तो वर्णिक अन्यथा मात्रिक।' पर इस ढंग से गणना करने से वर्णिक मुक्तकों में गड़बड़ हो सकती है क्योंकि वहाँ वर्ण-संख्या की ही समता होती है गुरु-लघु का कोई क्रम नहीं होता। इस से पहला ही ढंग उत्तम है।

दूसरा उल्लास

मात्रिक सम छन्द

५ मात्राओं के छन्द-८*

वीर

इस छन्द के चरणान्त में गुरु लघु ।

भव-भीर । हरु पीर ।
हे धीर । रघुबीर ।।

—दास

६ मात्राओं के छन्द-१३

बगहंस

चरणान्त में गुरु लघु ।

कृष्ण पास । तबहि दास ।
दिय पठाय । रन सुनाय ।।

—सुजान चरित

---

* जितनी मात्राओं का छंद है । शुरू में शीर्षक दे दिया गया है उस शीर्षक के भीतर उतनी ही मात्रा के छंद समझने चाहियें ।

हर छन्द

चरणान्त में नगण।

जगत जननि। दुखी जननि।
छोह करहि। व्यथा हरहि॥

—दास

७ मात्राओं के छन्द-२१

शुभ गति (अन्य नाम—सुगति)

प्रत्येक चरण में चार और तीन के विराम से सात मात्रा और चरणान्त में प्रायः गुरु रहता है :—

(१)

आलस तजो। हर हर भजो।
छल तें लजो। गुन से सजो॥

—नायक

(२)

शिव शिव कहो। जो सुख चहो।
जो सुमति है। तो सुगति है।

—भानु

(३)

लाल गोपाल। प्रभा विशाल।
जसुमति नंद। आनँद कंद॥

—दास

८ मात्राओं के छन्द-३४

छवि (अन्यनाम—मधुभार)

प्रत्येक चरण में चार-चार मात्राओं पर विराम और चरणान्त में जगण रहता है:—

(१)

प्रभु हो प्रवीन । नर हैं जो दीन ।
तिनकी सम्हार । तुम्हरे अधार ॥

(२)

बसि हिय प्रदेश । हे हरि हमेश ।
नाशैं कलेश । गावें सुरेश ॥

९ मात्राओं के छन्द-५५

हारी (अन्य नाम—गंग)

चरणान्त में दो गुरु ।

धन-धान्य पाना । हो यश कमाना ।
धर वीर-बाना । कुछ कर दिखाना ॥

—मान

वसुमती

चरणान्त में एक गुरु ।

पर दुःख हरना । शुभ काम करना ।
हरि नाम जपना । संसार अपना ॥

—मान

निधि

चरणान्त में लघु।

निज हिये विचार। यह जगत असार।
गुरु भयो अधार। सुख लह्यो अपार॥

१० मात्राओं के छन्द—८९

दीपक

चरणान्त में गुरु लघु।

(१)

जो मान का ध्यान। रखते सु मतिमान।
जो ठानते ठान। रखते सो दे प्रान॥

—मान

(२)

वह राउ बुधवान। करि सूर सनमान।
जे जहाँ इहँ ज्वांन। तहँ थापि बलवान॥

—काव्य कुसुमाकर

कमल

प्रत्येक चरण के आदि में त्रिकल और अन्त में प्राय: रगण रहता है :—

रँगीलो साँवरो। गयो जब द्वारिका।
विकल कल ना हिये। कृष्ण रटना लगी॥

—सत्यनारायण कविरत्न

क्रमला

प्रत्येक चरण में आठ लघु और चरणान्त में एक गुरु रहता है:—

कब अँखियन लखि हों। अरु भुज भरि रखि हों।
शशि धरि विमल कला। हृदय कमल कमला ॥
—दास

११ मात्राओं के छन्द-१४४

हंसमाला

चरणान्त में दो गुरु।

इह आरण्य माहीं। सर मानुष्य नाहीं।
विकसे कंज आला। कुरैं हंस माला ॥
—दास

आभीर (अन्य नाम—अहीर)

चरणान्त में प्रायः जगण।

(१)

सुरभित मंद बयार। सरसे सुमन सुडार।
रहे मधुप गुंजार। धन्य बसंत बहार ॥

(२)

पर है कौन उपाय ? नृपति करे सो न्याय।
न्याय यही यदि, हाय ! तो क्या है अन्याय ?
—अनघ (मैथिलीशरण गुप्त)

१२ मात्राओं के छन्द–२३३

तोमर (अन्य नाम—वामन)

चरणान्त में गुरु लघु।

(१)

प्रस्थान—वन की ओर। या लोक-मन की ओर ?
होकर न धन की ओर। हैं राम जन की ओर॥

—साकेत

(२)

तब चले बान कराल। फुंकरत जनु बहु व्याल।
कोपेउ समर श्रीराम। चले बिसिष निसित निकाम॥*

—रामचरित मानस

(३)

है वर्ग जिनका सैन्य। अनुचित उन्हें है दैन्य।
यह है उन्हीं की रीति। मेटें अधर्म अनीति॥

—अनघ

लीला

प्रत्येक चरण के अन्त में जगण रहता है।

यथा

अवध पुरी भाग भारु। दसरथ गृह छबि अगारु।
राजत जहँ विस्वरूप। 'लीला' तनु धरि अनूप॥

—'दास'

---

* युद्ध विषयक रचनाएँ इस छन्द में विशेष रुचिकर जँचती है।

ताण्डव

प्रत्येक चरण के आदि में एक लघु और अन्त में एक लघु रहता है: —

रचैं ताण्डव सुख रासि। ललित भावहि परकासि।
सिवासंकर कैलास। सदा पूजैं जन आस॥

—भानु

१३ मात्राओं के छन्द—३७७

चन्द्रमणि (अन्य नाम उल्लाला‡)

चरण के अन्त में गुरु-लघु का कोई नियम नहीं है :—

(१)

भजहु सदा राधारमन। गावहु गुन गन ह्वै मगन।
वृन्दावन वासी बनौ। लहौ नित्त आनँद घनौ॥

(२)

काव्य कहा बिन रुचिर मति। मति सु कहा बिनही बिरति।
बिरतिउ लाल गुपाल भल। चरननि होय जु रति अचल।

--भानु

चण्डिका (अन्य नाम—धरणी)

प्रत्येक चरण में आठ, पाँच पर विराम और अन्त में रगण रहता है :—

आदि-शक्ति-रण-चण्डिके ! भक्त-अटल-प्रण-मण्डिके !
नव-जीवन-संचालिका ! जय-जग-जननी कालिका !

—मान

‡ दो दल वाला उल्लाला मात्रिक अर्द्ध-सम छन्दों में देखो।

१४ मात्राओं के छन्द–६१०

प्रतिभा (अन्य नाम— विजात)

प्रत्येक चरण के आदि में लघु और चरणान्त में गुरु रहे तो अच्छा है :—

चरित है मूल्य जीवन का। बचन प्रतिबिम्ब है मन का।
सुयश है आयु सज्जन की। सुजनता है प्रभा धन की॥

—रामनरेश त्रिपाठी

स्वरूपी

चरणान्त में गुरु-लघु का कोई नियम नहीं है। चरण के आदि में द्विकल होना चाहिये :—

श्री मनमोहन की मूरति। है तुव सनेह की सूरति।
मैं निज मन यह अनुरूपी। तू मोहन प्रेम 'स्वरूपी'॥

—दास

सखी

चरणान्त में यगण या मगण रहता है :—

सब घर घर ते ब्रज नारी। दधि गोरस बेचन हारी।
सब जूथ जूथ मिलि चीह्ना। जमुना तट मारग लीह्ना॥

—दान लीला

मनमोहन।

प्रत्येक चरण में आठ और छः पर विराम और अंत में नगण रहता है :—

रखते हैं जो सदय हृदय । मनको समता-मय निरभय ।
परहित में दें तन-मन-धन । जीवन-मुकत वही सतजन ॥

—मान

हाकलि*

प्रत्येक चरण में प्रायः तीन चौकल अन्त में एक गुरु ।

(१)

मैं भी कहती हूँ जाओ । लक्ष्मण को भी अपनाओ ।
धैर्य सहित सब कुछ सहना । दोनों सिंह-सदृश रहना ॥

—साकेत

(२)

बनकर तुम्हीं उजड़ते हो । बनकर स्वयं बिगड़ते हो ।
मानो, अब यों पिछड़ो मत । उठो विश्व से बिछड़ो मत‡ ॥

—वैतालिक

---

* किसी किसी का मत है कि यदि हाकलि के चारों चरणों में तीन-तीन चौकल न पड़ें तो उसे 'मानव' छन्द समझना चाहिये। उदाहरण के दूसरे छन्द का चौथा चरण ऐसा ही है कि उसके आदि में चौकल नहीं पड़ता ।

‡ हिन्दी में शब्द के अन्त्य अकारान्त वर्ण को प्रायः हलवत् ही उच्चारण करते हैं । 'मत' को 'मत्' ऐसा उच्चारण करने पर 'म' का गुरुवत उच्चारण हो जाता है ।

मनोरम

प्रत्येक चरण के आदि में द्विकल तथा अन्त में यगण अथवा भगण रहता है :—

लोक-हित करना सदाई। बस यही सच्ची कमाई।
पूज गुरु-गोविंद को नित।'मान' है जो चाहता हित॥

—मान

मोहन (अन्यनाम-सरस)

प्रत्येक चरण में द्विकल, त्रिकल, जगण रहित चौकल, पंचकल का क्रम और तुकान्त में नगण रहता है।

यहु पाइ कै नर तन रतन!
कर ले अरे भगवत भजन।
जो चाहता भव-नद तरन।
गुरुदेव की तो ले सरन॥

सुलक्षण (अन्यनाम-संयुक्ता, मधुमालती)

मोहन के चरणान्त में रगण आने पर सुलक्षण हो जाता है।

(१)

जिसमें न कोई पाप हो। हिंसा असत्य न ताप हो।
वह काम करने में कहीं। उनको घृणा होती नहीं॥

(२)

वे सब स्वयं दुख झेल कर। जी जान पर भी खेलकर†॥
करते सभी का हैं भला। कोई गया उनसे छला?

—अनघ।

---

† हिन्दी शब्द का अन्त्य अकारान्त वर्ण हलवत् पढ़ा जाता है।

पन्द्रह मात्राओं के छन्द—९८७

उज्वला

प्रति पद में दस और पाँच पर विराम; अन्त में रगण।

धवल रजत परबत हो तबै। अरु पयनिधि को बरनै सबै॥
तबहिं बिमल ही ससि की कला। जब न हुत्यो तो जस उज्जला॥

—दास

हंसी (अन्य नाम—चौबोला)

प्रत्येक चरण के अन्त में लघु-गुरु रहता है :—

मसक समान रूप कपि धरी। लंकहि चलेउ सुमिर नरहरी॥
नाम लंकिनी एक निसिचरी। सोकह चलेसि मोहि निंदरी॥

—रामचरित मानस

चौपई (अन्य नाम—जयकरी)

चरणान्त में गुरु लघु।

(१)

चहहु जो साँचो निज कल्यान। तौ सब मिलि भारत संतान।
जपौ निरंतर एक जबान। हिन्दी हिन्दू हिन्दुस्थान॥

—प्रतापनारायण मिश्र

(२)

हम चौधरी डोम सरदार। अमल हमारा दोनों पार।
सब मसान पर हमरा राज। कफन माँगने का है काज।

—सत्य हरिश्चन्द्र नाटक

(३)

जिनके बल पर खड़ा समाज। रहती है शुचिता की लाज।
उनका त्राण न करना खेद। है अपना ही मूलोच्छेद।

—अनघ

गोपी

इस छन्द के प्रत्येक चरण में त्रिकल, द्विकल, छकल और चौकल का क्रम रहता है और चरणान्त में एक गुरु रहता है:—

धरम को चीन्ह अरे भाई। लोक सेवा करि मन लाई।
जनम क्यों व्यर्थ गमावै है। क्यों नहीं हरि गुन गावै है॥

—मान

पुनीत

प्रत्येक चरण के आदि में सम कल के बाद विषम कल तथा अन्त में तगण रहता है :—

जब तक करें न पूरा काम। तब तकन लें कभी विश्राम।
जो श्रम करें सुनो हे तात ! होते वही बड़े विख्यात।

—मान

१६ मात्राओं के छन्द—१५९७

पादाकुलक

प्रत्येक चरण में चार चौकलों का क्रम रहता है :—

संभु प्रसाद सुमति हिय हुलसी। राम चरित मानस कवि तुलसी॥
करइ मनोहर मति अनुहारी। सुजन सुचित सुनि लेहु सुधारी॥

—रामचरित मानस

पादाकुलक के अन्तर्गत :—

पद्धरि (अन्य नाम–प्रज्वलय, प्रज्वलिया)

प्रत्येक चरण में आठ-आठ पर विराम और अन्त में जगण होता है :—

तुम अमल अनंत अनादि देव। नहिं वेद बखानत सकल भेव।
सब को समान नहिं बैर नेह। निज भक्तन कारन धरत देह।

डिल्ला

प्रत्येक चरण में आठ-आठ पर विराम और अन्त में भगण होता है :—

पुनि मन बचन करम रघुनायक। चरण कमल बंदउँ सब लायक।
राजिव नयन धरे धनु सायक। भगत-विपति-भंजन-सुख दायक।

—रामचरित मानस

अरिल्ल

प्रत्येक चरण के चौकलों में जगण का निषेध है। अन्त में यगण या दो लघु रहते हैं :—

गुंजत मधुकर मुखर मनोहर। मारुत त्रिविधि सदा बहसुन्दर।
नाना खग बालकन्हि जिआये। बोलत मधुर उड़ात सुहाये।

—रामचरित मानस

पज्झटिका

प्रत्येक चरण में दो चौकल फिर एक गुरु तथा एक चौकल फिर एक गुरु का क्रम रहता है। चौकलों में जगण का निषेध है।

समता रख कर एक भलाई—, करना ही है शुद्ध कमाई।
दुनियाँ ममता-मोह-मई है। अपना शत्रु नहीं कोई है॥

\- मान

उपचित्रा*

प्रत्येक चरण में दो चौकल फिर एक गुरु तथा एक चौकल फिर एक गुरु का क्रम रहता है। चौकलों में कम से कम एक जगण अवश्य रहना चाहिये :—

कभी न उसको है सुख मिलता। जो चित में दीनों के खलता।
रखो न रंचक मित्र विषमता। सब के हित हो सच्ची ममता॥

—मान

चौपाई § (अन्य नाम—रूपचौपाई)

प्रत्येक चरण के अन्त में जगण और तगण का निषेध है अर्थात् पदान्त में गुरु के बाद एक लघु नहीं आता।

---

*मात्राओं के गुरु-लघु के क्रम से चौपाइयों के अनेक सूक्ष्म भेद किये जा सकते हैं।

§ चौपाइयों की रचना में द्विकल और त्रिकल वाले शब्दों का ही प्रयोग करना चाहिये। त्रिकल (विषम) वर्ण समूह के बाद त्रिकल वर्ण समूह ही रखना चाहिये समकल (द्विकल या चौकल) नहीं। जिससे चौपाइयों की गति न बिगड़ने पावे। हाँ, त्रिकल के बाद जगण (चौकल) रखा जा सकता है क्योंकि उसके आदि के दो वर्ण

(१)

नहिं सतसंग जोगु जपु जागा। नहिं दृढ़ कमल चरन अनुरागा॥
एक बानि करुना निधान की। सो प्रिय जाके गति न आनकी॥
—रामचरित मानस

'त्रिकल' का काम दे देते हैं—यथा 'हृदय विचारि संभु प्रभुताई' में 'हृदय' त्रिकल के बाद 'विचारि' जगण (चौकल) के आदि के दो वर्ण 'विचा' में त्रिकल के नियम का पालन हो गया।

समकलवाली चौपाइयाँ पढ़ने में और सुनने में भली लगती हैं। चौपाई के दो चरण अर्द्धाली कहलाते हैं।

पादाकुलक और चौपाई में केवल इतना अंतर है कि पादाकुलक के प्रत्येक चरण में चार चौकलों का होना आवश्यक है और चौपाइयों में होने न होने का नियम नहीं है। पादाकुलक वास्तव में चौपाई का ही एक विशेष रूप है। प्रायः पादाकुलक और चौपाइयों का संमिलित प्रयोग पाया जाता है। यथा—

"उमा राम सुभाव जेहि जाना। ताहि भजनु तजि भाव न आना॥
सरन गये प्रभु ताहु न त्यागा। बिस्व-द्रोह-कृत अघ जेहि लागा॥

इसके दूसरे और तीसरे चरण में पादाकुलक और पहले-चौथे में चौपाई के चरण हैं। फिर भी चारों चरण मिलकर चौपाई कहलाते हैं। तात्पर्य यह है कि 'पादाकुलक' को चौपाई कह सकते हैं पर चौपाई को पादाकुलक नहीं कह सकते!

(२)

देहु भगति रघुपति अति पावनि। त्रिविधि-ताप-भव-दाप-नसावनि ।।
प्रनत काम सुर धेनु कल्पतरु। होइ प्रसन्न दीजइ प्रभु यह बरु ।।

—रामचरित मानस

इन्दुकला* (अन्य नाम-पद्पादाकुलक)

प्रत्येक चरण के आदि में एक द्विकल, इसके पश्चात् क्रमशः अन्त तक प्रायः द्विकल रहते हैं। जहाँ द्विकल के बाद त्रिकल आ जाता है वहाँ आगे एक त्रिकल और रख देते हैं।

तुलसी, यह दास कृतार्थ तभी। मुँह में हो चाहे स्वर्ण न भी।
पर एक तुम्हारा पत्र रहे। जो निज मानस कवि कथा कहे ।।

—साकेत

प्रसाद (अन्य नाम-शृंगार)

प्रत्येक चरण के आदि में त्रिकल (।।।, ऽ।, ।ऽ) इसके पश्चात् द्विकल तथा अन्त में गुरु-लघु या लघु-गुरु।

---

* इन्दुकला और चौपाई की गति में अंतर है। इस गति के अंतर का कारण मात्रा-क्रम है। चौपाई के आदि में सम कल के बाद सम कल और विषम कल के बाद विषम कल रहते हैं। परन्तु इन्दुकला के आदि में सदा द्विकल रहता है और शेष चौदह मात्राओं में द्विकल तो आ सकते हैं पर अंत तक चौकल नहीं आ सकते। चरण में जहाँ द्विकल के बाद त्रिकल आता है वहाँ गति ठीक रखने के लिये एक त्रिकल और रखना पड़ता है।

(१)

धरा पर धर्मादर्श-निकेत, धन्य हैं स्वर्ग-सदृश साकेत।
बढ़े क्यों आज न हर्षोद्रेक? राम का कल होगा अभिषेक॥

(२)

देव! वे कुंजें उजड़ी पड़ीं। और वह कोकिल उड़ ही गईं।
हटाईं हमने लाखों बार। किन्तु वे घड़ियाँ जुड़ ही गईं॥

सिंह विलोकित*

इस छन्द में प्रत्येक चरण के कुछ अन्त्यवर्ण क्रमशः उसके आगेवाले चरण के आदि में आ जाते हैं।

जब सखि मोहन गमनत बनको।
बन को बरनत गिरि उर छनको॥
छन को तकि न जात ब्रज तन को।
तनको रहै सँभार न तन को॥

—समनेस

१७ मात्राओं के छन्द-२५८४

धीर

प्रत्येक चरण में द्विकल, त्रिकल, चौकल, त्रिकल, सगण या दो गुरु और एक लघु का क्रम रहता है। चौकलों में जगण का निषेध है।

---

*सिंह का स्वभाव है कि वह अपनी गर्दन मोड़-मोड़ दायें-बायें देखता हुआ चलता है। इस छन्द का रचना-क्रम सिंह विलोकित ढंग का है। प्रत्येक चरण के दाहिनी ओर के कुछ अन्त्य वर्ण बाईं ओर दूसरे चरण के आदि में चले जाते हैं।

वत्स रे आजा जुड़ा यह अंक। भानुकुल के निष्कलंक मयंक।
मिल गया मेरा मुझे तू राम। तू वही है भिन्न केवल नाम।।

—साकेत

मधुप (अन्य नाम—चन्द्र)

प्रत्येक चरण के आदि में त्रिकल और द्विकल फिर क्रमशः द्विकल के आगे द्विकल और त्रिकल के आगे त्रिकल, का क्रम और अन्त में कम से कम एक गुरु रहता है:—

(१)

चाहता हूँ कि मनुष्य रहूँ मैं। और अपने को वही कहूँ मैं।
बनूँ बस मनुष्यता का मानी। यही हो मेरी एक निशानी।।

(२)

प्रकृति है गीली मिट्टी ऐसी। पका लो गढ़कर चाहे जैसी।
धूम से तरु भी तो जलते हैं। पथिक ऐसे में भी चलते हैं।

(३)

स्वयं मैं नहीं जानता क्या हूँ। मानता आत्मा की आज्ञा हूँ।
समय-भागी हूँ नहीं समय हूँ। नहीं मारुत, पर मारुत-मय हूँ।।

—अनघ

(४)

चले फिर रघुवर मा से मिलने। बढ़ाया घन सा प्राणानिल ने।
चले लक्ष्मण भी पीछे ऐसे। भाद्र के पीछे आश्विन जैसे।।

—साकेत

१८ मात्राओं के छन्द—४१८१

गुरुपाद

चौपाई के आदि में द्विकल (णगण) बढ़ा देने से इस छन्द का चरण बन जाता है। पदान्त में तगण और जगण का निषेध है :—

(१)

जब रहेउ एक दिन अवध अधारा।
तब समुझत मन दुख भयेउ अपारा॥
हा कारन कवन नाथ नहिं आयेउ।
प्रभु जानि कुटिल किधौं मोहि बिसरायेउ॥

माली

प्रत्येक चरण के आदि में द्विकल; फिर क्रमशः जगण रहित चौकल और अन्त में कम से कम एक गुरुः—

मुरली अधर मुकुट सिर, दीन्हें है।
कटि पटपीत लकुट कर, लीन्हें है।
को जाने कब आयो, सुनि आली।
उर ते कढ़त न केहूँ बन माली॥

— दास

१९ मात्राओं के छन्द—६७६५

रति लेखा

प्रत्येक चरण के आदि में सगण फिर ग्यारह लघु वर्ण और अन्त में दो गुरुहोतेहैं :—

सब देव अरु मुनिन मन तुलनि तोल्यो ।
तब 'दास' दृढ़ वचन यह प्रगट बोल्यो ।
इक ओर महि सफल जप तप बिसेखो ।
इक ओर सियपति-चरन बिरति लेखो ॥

—दास

२० मात्राओं के छन्द—१०९४६

हंसगति

ग्यारह और नव मात्राओं पर विराम होता है। पदान्त में गुरु लघु का कोई नियम नहीं हैं:—

जगत ईस नर भूप, सिया ढिंग सोहत ।
गर बैजन्तीमाल, सुजन मन मोहत ॥
चरन चारु की सोभा निरखि पुरन्दर ।
मगन नयन है गये, प्रमुद कर सुन्दर ॥

—गदाधर

(२)

शंसित योगी जटिल सुभिक्षुक मुंडी ।
वर्णि तपस्वी यती, साधु मुनि दंडी ।
व्रती तापसी जपी ऋषी निर्वानी ।
संन्यासी संयमी, अष्टदश ज्ञानी ॥

—विष्णु विलास

२१ मात्राओं के छन्द--१७७११

प्लवंगम (अन्यनाम—प्लवंगा, चान्द्रायण, अरल)

प्रत्येक चरण में छकल, द्विकल, दो त्रिकल जगण रहित चौकल और लघु गुरु का क्रम रहता है :—

(१)

मेरा प्रिय हिंडोल निकुंजागार तू ।
जीवन-सागर, भाव-रत्न-भांडार तू ॥
मैं हूँ तेरा सुमन, चढ़ूँ-सरसूँ कहीं !
मैं हूँ तेरा जलद, बढ़ूँ-बरसूँ कहीं ॥

(२)

जय गंगे, आनंद-तरंगे, कलरवे ;
अमल अंचले, पुण्य जले दिवसम्भवे !
सरस रहे यह भरत-भूमि तुमसे सदा ।
हम सब की तुम एक चलाचल सम्पदा ।

—साकेत

२२ मात्राओं के छन्द–२८६५७

लावनी (अन्य नाम—राधिका)

प्रत्येक चरण में तेरह और नव मात्राओं पर विराम और चरणान्त में प्रायः मगण रहता है :—

(१)

तरु-तले विराजे हुए,—शिला के ऊपर,
कुछ टिके,—धनुष की कोटि टेक कर भू पर,

निज लक्ष-सिद्धि-सी, तनिक घूम कर तिरछे,
जो सींच रहीं थी पर्ण कुटी के बिरछे,

(२)

उन सीता को, निज मूर्तिमती माया को,
प्रणयप्राणा को और कान्तकाया को,
यों देख रहे थे राम अटल अनुरागी,
योगी के आगे अलख-ज्योति ज्यों जागी।

—साकेत

(३)

सबने सब दोष विसार दिव्य गुण धारे।
तज बैर निरंतर प्रेम-प्रसंग प्रचारे।
चेतन जीवित ऋषि देव पितर सत्कारे।
कर दिये दूर खल खर्व कुमति के मारे॥

—नाथूराम 'शंकर' शर्मा

कुण्डल

प्रत्येक चरण में बारह और दस मात्राओं पर विराम और चरणान्त में दो गुरु होते हैं:—

तू दयालु दीन हौं, तु दानि हौं भिखारी।
हौं प्रसिद्ध पातकी, तु पाप पुंज-हारी॥
नाथ तू अनाथ को, अनाथ कौन मो सो।
मो समान आरत नहिं, आरतहर तोसो॥
ब्रह्म तू हौं जीव तू, ठाकुर हौं चेरो।
तात मात गुरु सखा तु, सब विधि हित मेरो॥

तोहि मोहि नाते अनेक, मानिये जु भावै।
ज्यों त्यों तुलसी कृपालु. चरन सरन पावै॥

—विनय-पत्रिका

उड़ियाना*

कुण्डल के पदान्त में केवल एक गुरु रहने पर उड़ियाना छं
हो जाता है :—

ठुमकि चलत रामचन्द्र बाजत पैंजनियाँ।
धाय मातु गोद लेति दशरथ की रनियाँ॥
तन मन धन वारि मृदुल बोलती बचनियाँ।
कमल बदन बोल मधुर, मंद सी हँसनियाँ॥

—गोस्वामी तुलसीदास

२३ मात्राओं के छन्द—४६३६८

हीरक (अन्य नाम—हीर)

इस छन्द के प्रत्येक चरण में टगण की धर्म संज्ञा (SIIII
की तीन बार आवृत्ति होती है और अन्त में रगण रहता है :-

दण्डक बन पावन वर ध्यावन हर युक्त के।
विप्र घरन भील तरन गीध करन मुक्त के॥
राम चरन ताक सरन वाकवरन मान के।
दोषदमन सोकसमन मोक्तभवन आनके।

—हरदेव

*कुण्डल और उड़ियाना को गाने वाले प्रायः प्रभाती राग में गाते

२४ मात्राओं के छन्द--७५०२५

रोला*

इस छन्द के प्रत्येक चरण में (छकल, द्विकल, और त्रिकल के क्रम से) ग्यारह तथा (त्रिकल, द्विकल, छकल और द्विकल के क्रम से) तेरह के विराम से चौबीस मात्राएं होती हैं। चरणान्त में गुरु लघु का कोई नियम नहीं है। फिर भी दो गुरु रखना अच्छा है:—

---

* अधिकांश प्रमुख कवियों ने रोला की जैसी रचना की है उससे स्पष्ट होता है कि बहुमत रोला की इसी परिभाषा के पक्ष में है कि "रोला छन्द के एक चरण में ग्यारह मात्राओं पर यति हो और फिर तेरह पर पदान्त।" इसी तरह "सोरठा" छन्द का पहला और तीसरा चरण ग्यारह मात्राओं का होता है तथा दूसरा और चौथा तेरह का, यह सर्व-सम्मत परिभाषा है। फिर रोला छन्द के दो चरणों में और सोरठे के चार चरणों में अन्तर क्या रहा ? पिंगल-ग्रंथों में इस प्रश्न पर विशेष ध्यान नहीं दिया गया है। प्रत्युत सोरठे की परिभाषा "दोहा उलटे सोरठा" कह कर दोहे के गले वृथा ही बाँध रखी है। रोला छन्द के पदान्त की तेरह मात्राओं में और सोरठे के दूसरे-चौथे चरणों में की तेरह मात्राओं के टगणादि की स्थिति में अन्तर है। रोला में क्रमशः त्रिकल, द्विकल, छकल, और द्विकल समूहों पर गति-विराम होना चाहिए। सोरठे में क्रमशः छकल, चौकल, एककल और द्विकल मात्रा समूहों पर गति विराम होना चाहिये। सोरठे के पहले और तीसरे

(१)

धर्म तुम्हारी ओर तुम्हें फिर किस का भय है।
६ २ ३ ३ २ ६ २
जीवन में ही नहीं, मरण में भी निज जय है।
मरें भले ही अमर, भोगते हैं जी जी कर;
मर मर कर नर अमर, कीर्त्तनामृत पी पी कर।

—साके

(२)

हे देवो, यह नियम सृष्टि में सदा अटल है।
रह सकता है वही सुरक्षित, जिस में बल है।
निर्वल का है नहीं जगत में कहीं ठिकाना।
रक्षा-साधन उसे प्राप्त हों चाहे नाना।

—कामताप्रसाद गु

चरणों का अन्त नंद (गुरु-लघु) से होना जरूरी है। रोला के प्र
यत्यन्त में नन्द हो तो बहुत अच्छा होता है, परन्तु आवश्यक नहीं है

दोहे से सोरठे का यही संबंध है कि हर सोरठे का उलटा दोहा
सकता है परन्तु हर दोहे का उलटा सोरठा नहीं हो सकता, क्योंकि दोहे
पहले और तीसरे चरण सदा तेरह मात्राओं के ही नहीं होते। बा
मात्राओं के भी होते हैं। इसीलिये "दोहा उलटे सोरठा" कहना उल
बात है। "सोरठा उलटे दोहा" कहना चाहिये।

—रामदास गौड़

(३)

मन प्रसन्न थिर सौम्य †, तुम्हें क्षण एक न भूलें,
प्रभु का रहे प्रकाश, कमल सा नित नित फूलें।
मानें सदा विभूति, तुम्हारी सचराचर को,
तुम्हें जान सर्वत्र न समझें कुछ भी डर को॥

—रामदास गौड़

शोभन (अन्य नाम—सिंहिका)

चौदह, दस पर विराम और पदान्त में जगण।

देखु गुरु की ओर कवि तू, भरत बंधु, निषाद।
चले जावैं चढ़े परबत, मन न नेकु विषाद॥
स्वेद-बुंद लखात मस्तक, हँफत पाँव बढ़ाव।
सिद्ध कारज दिखत जब जन, बढ़त मन त्यहि चाव॥

—शिवरत्न शुक्ल

रूपमाला (अन्य नाम – रामगीतिका, मदन)

चौदह, दस पर विराम और पदान्त में गुरुलघु।

वेद जिसको 'नेति' कह कर हो रहे हैं मौन!
मूढ़ ऐसे राम का तू, नाम रटता क्यों न?
भाव के भगवान भूखे, चाहते क्या और?
पाय ऐसे नाथ को मत, पड़ पराई पौर!

—मान

---

† यदि रोला की ग्यारहवीं मात्रा चारों चरणों में लघु रहे तो कोई कोई उसे काव्य छन्द कहते हैं।

२५ मात्राओं के छन्द—१२१३९३

गगनाङ्गना

सोलह, नव पर विराम; और अन्त में रगण रहता है:—

निरखि सौतिजन हृदयनि रहै गरउ को ढंग ना।
पटतर हित सतकवि के मन को, मिटै फलंगना ॥
बदन उघारि दुलहिया छनकु बैठि करि अंगना।
चंद पराजय साजहि लजित करहि गगनांगना ॥

मुक्तामणि

प्रत्येक चरण में तेरह, बारह पर विराम और अन्त दो गुरु होते हैं :—

कुण्डल ललित कपोल पर, सुछबि देत हैं ऐसे।
घन में चपला दमकि अति, लग नीकी दुति जैसे ॥
चन्दन खौर बिराज शुचि, मनु लछमी अति राजै।
सब आभा तिहुँ लोक की, मुख के आगे लाज ॥

—नायक

२६ मात्राओं के छन्द—१९६४१८

विष्णुपद

प्रत्येक चरण में सोलह, दस पर विराम; चरणान्त में गुरु।

मेरे कुँवर कान्ह बिनु सब कछु, वैसहि धरयो रहै।
को उठि प्रात होत ल माखन, को कर नेति गहै ॥

सूने भवन जसोदा सुत के, गुन गुनि सूल सहै।
दिन उठि घेरत ही घर ग्वारिनि उरहनि कोउ न कहै॥

—सूरदास

गीता

प्रत्येक चरण में चौदह, बारह पर विराम; चरण के आदि में द्विकल और अन्त में गुरु लघु रहता है:—

वर-काव्य में मति-रत रहे, भगवान-गुण-गण-गान।
पद-कंज में गुरु-देव के मन मधुप हो तज मान॥
बस एक ही प्रभु और दो, इस दास को वर-दान।
सरबस चला ही जाय पर हाँ, जाय एक न 'मान'॥

—मान

झूलना

सात, सात, सात और पाँच पर विराम; प्रत्येक चरण के आदि में द्विकल; चरणान्त में गुरु लघु रहता है:—

ऋषि शृंग के मख में यहाँ, लागे सबै हम आज।
है बालमति अब ही तिहारी, राज को नव काज॥
तुव धर्म नित्य प्रजानुरंजन, निज प्रमाद बिहाइ।
तज्जनित जस धन प्रचुर ही, रघुबंस की प्रभुताइ॥

—उत्तर-रामचरित-नाटक

गीतिका

चौदह, बारह पर विराम और चरणान्त में लघु गुरु रहता है परन्तु रगण कर्ण-प्रिय होता है। मात्रा-क्रम में तीसरी, दसवीं, सत्रहवीं और चौबीसवीं मात्रा लघु रहने का भी नियम है:—

चित्त-वृत्ति उदार, भाव-विशाल, मित्र जहान हो।
धीरता, गंभीरता, आदर्श उच्च-महान हो।
भीष्म-अर्जुन के सदृश कर्तव्य-पालन- ज्ञान हो।
सत्य-पथ से डिग न पावे वह हृदय बलवान हो॥

—मान

२७ मात्राओं के छन्द—३१७८११

हरिपद* (अन्य नाम—कबीर, समुन्दर—सरसी)
सोलह, ग्यारह पर विराम चरणान्त में गुरु लघु।

(१)

काम-क्रोध-मद-लोभ-मोह की, पँचरंगी कर दूर।
एक रंग तन-मन-वाणी में, भर ले तू भरपूर॥
प्रेम प्रसार न भूल भलाई, बैर बिरोध बिसार।
भक्ति-भाव से भज 'शंकर' को, भक्ति दया उर धार॥

—नाथूराम 'शंकर' शर्मा

---

*इसी छन्द के दो चरणों के साथ एक और टुकड़ा जोड़ कर लोग होली के कबीर गाते हैं:—

चाल ढाल अपनी सब छोड़ी, डटे साहिबी ठाट।
गिटपिट बाबू देहातिन में समझें अप कों लाट।
खूब अब रँग लाई अँगरेजी है।

(२)

डूब बची लक्ष्मी पानी में सती आग में पैठ ।*
जिये उर्मिला करे प्रतीक्षा सहे सभी घर बैठ ॥
दहन दिया तो भला सहन क्या होगा तुझे अदेय ।
प्रभु की हीं इच्छा पूरी हो जिस में सब का श्रेय ॥

—साकेत

२८ मात्राओं के छन्द—५१४२२९

सार (अन्य नाम—दोवै, ललित पद, नरेन्द्र)

(१)

सोलह, बारह पर विराम; अन्त में प्रायः दो गुरु ।

हम हैं वाहि पवन की बानी जो इत उत नित धावैं;
हा हा करति विराम हेतु पै कतहुँ विराम न पावै ।
जैसो पवन गुनौ वैसोई जीवन प्राणिन केरो;
हाहाकार उसासन को है झंझावात घनेरो ॥

—रामचन्द्र शुक्ल

(२)

तन तज देना, धर्म न तजना, यही वीर गौरव है ।
धर्म-कर्म से हीन मनुज जीवन जग में रौरव है ।

---

*कोई कोई रीतिकार इस छन्द के दो चरणों के दो दल मानकर 'हरिपद' कहते हैं ।

जीवन-पथ पर बढ़; कर क्षण में छिन्न मोह के बंधन।
फड़क उठे फिर दृढ़ शरीर, फिर हो प्राणों में स्पन्दन॥
—प्रवासीलाल वर्मा

हरिगीतिका

सोलह, बारह पर विराम; चरणान्त में लघु गुरु रहता। पर रगण प्रायः कर्ण-मधुर होता है। मात्रा-क्रम से पाँचवीं बारहवीं, उन्नीसवीं तथा छब्बीसवीं मात्राएँ लघु रहती हैं:—

मन जाहि राचेउ मिलिहि सो बरु सहज सुंदर साँवरो।
करुनानिधानु सुजानु सीलु सनेहु जानत रावरो॥
एहि भाँति गौरि असीस सुनि सिय सहित हिय हरषित अली।
तुलसी भवानिहि पूजि पुनि पुनि मुदित मन मंदिर चली॥
—रामचरित मानस

शुद्धगा (अन्य नाम-विधाता, वेतवै)

चौदह, चौदह पर विराम; इसके चरणान्त में प्रायः मगण रहता है। मात्रा-क्रम से इसकी पहली, आठवीं और पन्द्रहवीं मात्राएं लघु रहती हैं:—

जतीले जाति के सारे प्रबन्धों को टटोलेंगे।
जनों को सत्य सत्ता की तुला से ठीक तोलेंगे॥
बनेंगे न्याय के नेगी खलों की पोल खोलेंगे।
करेंगे प्रेम की पूजा रसीले बोल बोलेंगे॥
—नाथूराम शंकर शर्मा,

कलनाद

इस छन्द का प्रत्येक चरण चौदह मात्रा के स्वरूपी छन्द का दूना होता है :—

यह ज्योति नहीं ज्वाला की है मनोमोहिनी माया,
रजनी रवि की अनुगामिनि तम है प्रकाश की छाया।
क्षण-भंगुरता ही जीवन की है सच्ची परिभाषा,
अनुभूति निराशा है यदि जीवन-विभूति है आशा॥

—बालकृष्ण राव

यह रात मौन व्रत धारे, ओढ़े यह चादर काली,
लक्षावधि झिलमिल आँखें, क्यों दिखा रही मतवाली!
अंतर तर का अँधियारा यह फैल पड़ा भूतल में,
सब ओर यही है छाया. बन-उपवन में जल-थल में॥

—नवीन

२९ मात्राओं के छंद ८३२०४०,

मरहटा

इस छन्द के प्रत्येक चरण में दस आठ और ग्यारह पर विराम; चरणान्त में गुरु लघु रहता है :—

मन दया-मया-मय, शुचि-समता-मय, रख दीनों का ध्यान।
मुख से निकले बच, पाले सच-सच, हो सम्मान कहाँ न!
वश में रख मन को, भूल न पन को, कर भगवत-गुन-गान।
स्वाहा हो सर्वस, रह मत परबस, रख मानी बन 'मान'॥

—मान

३० मात्राओं के छन्द—१३४६२६९

चवपैया

दस, आठ और बारह पर विराम ; चरणान्त में एक गु रहता है। यों तो कई गुरु रह सकते हैं पर एक सगण और ए गुरु कर्ण-मधुर होता है:—

(१)

सिर मोर पखौना, बनो सुठौना, मंजु मुरलिया बाजै,
अति छूटी अलकें, मुख पर झलकें, तिन पर गोरज भ्राजै।
गौवन के पाछे, कछनी काछे, हाथ लकुटिया सोहै,
चलि निरखो माई, कुँअर कन्हाई, मन्मथ को मन मोहै॥

—हरदेव

(२)

भये प्रगट कृपाला, परम दयाला, कौसल्या-हितकारी।
हरषित महतारी, मुनि-मनहारी, अद्भुत रूप बिचारी॥
लोचन अभिरामं, तनु घनस्यामं, निज आयुध भुज चारी।
भूषन बनमाला, नयन बिसाला, सोभा सिंधु खरारी॥

—रामचरित मानस

चौबोला

सोलह और चौदह पर विराम; चरण के अन्त में लघु गुरु

(१)

बायीं ओर धनुष की शोभा, दायीं ओर निषंग छटा
बाम पाणि में प्रत्यंचा है, पर दक्षिण में एक जटा

आठ मास चातक जीता है, अपने घन का ध्यान किये;
आशा कर निज घनश्याम की, हमने बरसों बिता दिये।

(२)

दीन-भाव से कहा उन्होंने—बहन, एक दिन बहुत नहीं;
बरसों निराहार रहकर ये आँखें क्या मर गईं कहीं।
विवश लौट आई रोकर मैं, लाई हूँ नैवेद्य यहाँ।
आता हूँ मैं—कहकर देवर, गये उन्हीं के पास वहाँ॥

—साकेत

(३)

हृदय-सिंधु की किस भँवरी में नाच रहे हो जीवन धन ?❀
जीवन की नैया को खेते, बहक रहे किस ओर सजन ?
झीनी-झीनी झाँकी-सी कुछ, आँख मिचौनी सी करती;
तेरी सुछबि छबीली 'नटवर' झाँक रही लजती डरती।

—'नटवर'

ताटंक

सोलह और चौदह पर विराम; चरणान्त में मगण।

ग्रास हुआ आकाश, भूमि क्या, बचा कौन अँधियारे से ?
फूट उसी के तनु से निकले तारे कच्चे पारे-से !
विकच व्योम-विटपी को मानो मृदुल बयार हिलाती है,
अंचल भर भर कर मुक्ता-फल खाती और खिलाती है।

❀हिन्दी में शब्द के अन्त का अकारान्त वर्ण हलवत् पढ़ा जाता है।

लावनी ताटंक का ही एक भेद है। जिस ताटंक के चरणा में लघु गुरु का कोई नियम न हो उसे लावनी समझना चाहिये ख्याल गानेवाले बाईस मात्रावाली लावनी से पृथक् करने लिये इसे लँगडी लावनी कहते हैं:—

(१)

एक न मैं होता तो भव की क्या असंख्यता घट जाती ?
छाती नहीं फटी यदि मेरी तो धरती ही फट जाती ?
हाय ! नाथ, धरती फट जाती हम तुम कहीं समा जाते
तो हम दोनों किसी तिमिर में रहकर कितना सुख पाते

(२)

नाथ, न तुम होते तो यह व्रत कौन निभाता तुम्हीं कहो
उसे राज्य से भी महार्ह धन देता आकर कौन अहो
मनुष्यत्व का सत्व-तत्व यों किसने समझा-बूझा है
सुख को लात मारकर तुमसा कौन दुखों से जूझा है

—सा

३१ मात्राओं के छन्द—२१७८३०६

वीर (अन्यनाम—आल्हा छन्द *)

सोलह और पन्द्रह पर विराम; चरणान्त में गुरु लघु र है। एक तरह से चौपाई और चौपई मिलकर वीर छ बनता है:—

---

* पहले यह छन्द वीररस में ही प्रयुक्त होता था। वीररस का होने से ही आल्हा छन्द इसका नाम भी पड़ा है। अब दूसरे भावों भी इस छन्द में व्यक्त करने लगे हैं।

(१)

राजा हमरे भये कलजुगहा जयचँद और पिथौराराय।
लरि लरि आपुस में चापर भये मरिगे हमें गुलाम बनाय।
धन बल धरम करम हिन्दुन के बंटाढार भये एक साथ।
राज छुटा अपने हाथे से 'भारत-माता' भई अनाथ॥

—रामनरेश त्रिपाठी

(२)

मानस की फेनिल-लहरों पर किस छबि की किरणें अज्ञात,
स्वर्ण-वर्ण में लिखती अविदित तारक-लोकों की शुचि बात?
अलि ? किन जन्मों की सिञ्चित-सुधि बजा सुप्त तंत्री के तार,
नयन-नलिन में बँधी मधुप-सी करती मर्म मधुर गुंजार।

—सुमित्रानन्दन पंत

३२ मात्राओं के छन्द ३५२४५७८

त्रिभंगी

प्रत्येक चरण में दस, आठ, आठ, और छः मात्राओं पर विराम; चरणान्त में गुरु रहता है। इसके चौकलों में जगण वर्जित है :—

(१)

परसत पदपावन सोक नसावन प्रगट भई तपपुंज सही।
देखत रघुनायक जन-सुख-दायक सनमुख होइ कर जोरि रही॥
अति प्रेम अधीरा पुलक सरीरा मुख नहिं आवइ बचन कही।
अतिसय बड़भागी चरनन्हि लागी जुगल नयन जलधार बही॥

—राम चरित मानस

(२)

बहु शृंगें जाकी, मुकट प्रभाकी, नील घटा की, दुति जीतें।
सीतल जल वारे, श्रवत अपारे, झरना भारे, लहिरीतें॥
द्रुम पुंज नवेली, जिटी सुहेलीं, पहुपनि मेली, थिर थहरें।
मकरंद बटोरें, जहँ चहुँ ओरें, झमकि झकोरें, मृदु फहरें॥

—मालती माधव नाटक

रूपसवैया

इस छन्द का प्रत्येक चरण चौपाई का दूना होता है :—

(१)

दुख से दग्ध ताप से पीड़ित, चिन्ता से मूर्च्छित मन से कृश॥
श्रम से शिथिल मृत्यु से शंकित, विभ्रम-वश कर पान विषय-विष।
जग-प्रपंच की घोर दुपहरी,–में रे पथिक प्यास से विह्वल
भक्ति-नदी में क्यों न नहाकर, कर लेता है जीवन-शीतल।

—स्वप्न

(२)

शेष हुआ जाड़े का मौसम, आया है अब समय बसंती।
मगन हुए सारे नर नारी, लता, वृक्ष, पशु, पक्षी कोमल॥
सारी दुनिया मस्त हुई है, मानो सब ने छानी गहरी।
हुआ प्रकृति का रूप निराला, आहा क्या अच्छी है शोभा॥

—जगन्नाथ प्रसाद चतुर्वेदी

---

* रूप सवैया के चरणान्त में भगण रहने पर कोई कोई उसे समान सवैया कहते हैं।

मराल

इस छन्द का प्रत्येक चरण प्रसाद छन्द के एक चरण का दूना होता है :—

(१)

हिमालय के आँगन में उसे, प्रथम किरणों का दे उपहार।
उषा ने हँस अभिनंदन किया, और पहनाया हीरक-हार।
जगे हम लगे जगाने विश्व, लोक में फैला फिर आलोक।
व्योम-तम-पुंज हुआ तब नाश, अखिल संसृति हो उठी अशोक॥

—जयशंकर प्रसाद

(२)

रचाया था हिल-मिल कर रास, रात परियों ने हो बेहोश।
हार मोती का टूटा गिरा, आप क्यों कहते उसको ओस।
देख ऊषा का राग-सुहाग, उठ चली रजनी भरकर रोष।
चू पड़े नयनों से कुछ बूँद, लोग भ्रम से कहते हैं ओस॥

—बेनीपुरी

(३)

प्रतिज्ञा करि राखी युग मित्र, परस्पर व्याहन निज संतान,
निरंतर सहृदय सरल पवित्र, दिवाबत ताको सुधि मतिवान।
चारु सच्चरित बुद्धि अभिराम, असाधारन गुन मंगल मूल,
पठइ सुत कीन्हों समुचित काम, करन संबंध सुदृढ़ अनुकूल॥

—मालती माधव नाटक

मत्तसवैया

इसका चरण इन्दुकला के एक चरण का दूना होता है।

विचलित हो अमल न मौन रहे निष्ठुर शृंगार उतरता हो।
क्रन्दन, कम्पन, न पुकार बने निज साहस पर निर्भरता हो।
अपनी ज्वाला को आप पिये नव नील कंठ का छाप लिये
विश्राम श्रान्ति को शाप दिये ऊपर, ऊँचे, सब झेल चले।

—जयशंकर 'प्रसाद'

दण्डकला, पद्मावती और दुर्मिल

इन छन्दों में से प्रत्येक के एक-एक चरण में दस, आ और चौदह के विराम से बत्तीस मात्राएं होती हैं। दण्डकला के चरणान्त में सगण पद्मावती के चरणान्त में गुरु और दुर्मिल के चरणान्त में सगण और दो गुरु रहते हैं चौकलों में जगण का निषेध है।

दण्डकला

(१)

जय जय नँदनंदा, आनँदकंदा, असुरनिकंदा देव हरे।
जय जय भव-भंजन, जन-मन-रंजन, नाम लेत खल कोटि तरे।
जय यदुकुल भूषण, दनुजन दूषण, करुणा कर प्रभु टेर सुनो।
जय संत सहायक, सब सुखदायक, दुख दारिद के सीस धुनो॥

—हरदेव

(२)

फलफूलनि ल्यावै हरिहिं सुनावै, है या लायक भोगनिकी
अरु सब गुन पूरी, स्वादनि रूरी, हरन अनेकन रोगनिकी

हँसि लेहिं कृपानिधि लखि योगी सिधि, निंदहिं अपने योगनकी।
नभ ते सुर चाहैं भागु सराहैं, बारन दण्डक लोगनकी ॥
—दास

पद्मावती

यद्यपि जग कर्ता, पालक हर्ता, परिपूरण वेदन गाये।
प्रभु तदपि कृपाकरि, मानुस वपु धरि, थल पूँछन हम सन आये।
सुन सुरवर नायक, राक्षस घायक, रक्षहु मुनि जन यश लीजै।
शुभ गोदावरितट, विशद पंचवट, पर्णकुटी प्रभु तहँ कीजै ॥
—भानु

दुर्म्मिल

जय जय रघुनंदन, असुर निकंदन, कुल मंडन यश के धारी।
जन मन सुखकारी, विपिन बिहारी, नारि अहिल्यहिँ सी तारी।
सरनागत आयो, ताहि बचायो, राज विभीषन को दीन्हों।
दसकंध बिदारो, पंथ सुधारो, काज सुरन जन को कीन्हों ॥
—गोस्वामी तुलसीदास

मात्रिक दण्डक

३७ मात्राओं के छन्द

करखा

आठ, बारह, आठ और नव पर विराम; चरणान्त में यगण।

नमो नरसिंह, बलवंत नरसिंह प्रभु,
संत हित काज, अवतार धारो।

खंभ तें निकसि, भू हिरनकश्यप पटक,
झटक दै नखन, झट उर बिदारो।
ब्रह्म रुद्रादि सिर नाय जय जय कहत,
भक्त प्रह्लाद, निज गोद लीनों।
प्रीति सों चाटि, दै राज सुख साज सब,
नरायनदास, वर अभय दीनों॥

—छन्दः प्रभाक

झूलना (२)

दस, दस, दस और सात पर विराम चरणान्त में यगण।

जयति खल-खंडिनी, चंड-मुख-मर्दिनी,
भगत–भय–भंजिनी, दुःखहारी।
दुष्ट-दल-गंजनी, दास–मन--रंजनी,
मोह-मद-हारिनी, ज्ञानकारी।
देव-मुनि-रक्षिनी, दनुज-कुल-भक्षिनी,
कलुष कलि कल्पनी, शक्तिभारी।
दीन-जन-पालिनी, घोर-अघ-घालिनी,
धन्य जगदंब जय, जय तिहारी॥

—काव्य शिक्षक

४० मात्राओं के छन्द

विजया

दस, दस, दस, दस पर विराम; चरणान्त में प्रायः रग
रहता है:—

सित कमलबंससी, सीतकर अंससी,
विमल विधि हंससी, हीरवर हारसी।
सत्य गुन सत्वसी, सांतरस तत्वसी,
ज्ञान गौरवत्वसी, सिद्धि विस्तारसी।
कुंदसी काससी, भारतीबाससी,
सुरतरुनिहारसी, सुधारस सारसी।
गंग जल धारसी, रजत के तारसी,
कीर्ति तव विजय की संभु आगारसी॥

—दास

मदनहर

इसके प्रत्येक चरण में दस, आठ, चौदह, आठ पर विराम; आदि में दो लघु और अन्त में एक गुरु रहता है :—

सखि लखि यदुराई, छबि अधिकाई,
भाग भलाई जान परै, फल सुकृति करै।
अति कांति सदन मुख, होतहिं सन्मुख,
'दास' हिये सुख भूरि भरै, दुख दूरि करै।
छबि मोर पखन की, पीत बसन की,
चारु-भुजन की चित्त अरै, सुधि बुधि बिसरै।
नवनील कलेवर, सजल भुवन धर;
बर इंदीबर छबि निदरै, मद मदन हरै॥

—दास

४४ मात्राओं के छन्द,

विनय

बारह, बारह, बारह और आठ पर विराम; चरणान्त प्रायः रगण रहता है :—

जय जय जग जननि देवि, सुर-नर-मुनि असुर-सेवि,
भक्ति-मुक्ति-दायिनि भय, हरनि कालिका
मंगल-मुद-सिद्धि-सदनि, पर्वसर्वरीस बदनि,
ताप-तिमिरि तरुन-तरनि-किरनमालिका।
वर्म-चर्म कर कृपान, सूलसेल धनुषबान,
धरनि, दलनि दानव-दल, रन-करालिका
पूतना पिशाच प्रेत, डाकिनि साकिनि समेत,
भूत ग्रह बेताल खग, मृगालि-जालिका।

—विनयपत्रिका

४६ मात्राओं के छन्द

चंचरी (अन्यनाम-हरिप्रिया)

बारह, बारह, बारह और दस पर विराम; चरणान्त में गु

जाको नहिं आदि अंत, जननि जनक देव कंत,
रूप रंग रेख रहित, व्यापक जग जोई।
मच्छ कच्छ कोल रूप, वामन नर हरि अनूप,
परसुराम राम कृष्ण, बुद्ध कल्कि सोई।
मधुरिपु माधव मुरारि, करुनामय कैटभारि,

रामादिक नाम जासु, जाहिर बहुतेरो।
कोमल सुभ वास मंजु, सुखमा सुखसील गंज,
ताको पद कंज चित्त चंचरीक मेरो॥
—दास

मात्रिक अर्द्धसम*

चारों चरण मिलकर ३८ मात्राओं के छन्द

बरवै (अन्य नाम—मनोहर, ध्रुवा, कुंरग, नंदा)

इस छन्द के विषम (पहले-तीसरे) चरणों में बारह और सम (दूसरे-चौथे) चरणों में सात मात्राएं होती हैं। सम चरणों के अंत में लघु रहता है। परन्तु जगण श्रुति-मधुर जँचता है :—

अवधि शिला का उर पर, था गुरु भार।
तिल तिल काट रही थी, दृग जल धार॥
—साकेत

चारों चरण मिलकर ४२ मात्राओं के छन्द

अति बरवै

इस छन्द के विषम (पहले-तीसरे) चरणों में बारह और सम (दूसरे-चौथे) चरणों में नव मात्राएँ होती हैं।

---

*दोहरी पंक्ति वाले (प्रायः अर्द्धसम) छन्दों की प्रत्येक पंक्ति को दल कहते हैं। प्रत्येक दल में पहला चरण बिषम और दूसरा सम कहलाता है। अर्द्धसम बरवै, दोहा आदि में दो दल होते हैं। इन दोनों के पहले और तीसरे चरण विषम और दूसरे-चोथे सम कहलाते हैं।

समचरणों के अन्त में लघु रहता है परन्तु जगण श्रुति-मधु
होता है :—

कवि-समाज को बिरवा, भल चले लगाइ।
सींचन की सुधि लीजो, कहुँ मुरझि न जाइ॥

—छन्दः प्रभाकर

चारों चरण मिलकर ४८ मात्राओं के छन्द

दोहा ‡

इस छन्द के विषम (पहले-तीसरे) चरणों में तेरह-और सम (दूसरे-चौथे) चरण में ग्यारह-मात्राएँ होती हैं। विषम चरणों के आदि में जगण का निषेध है; सम चरणों के अन्त में गुरु लघु वा लघु रहता है :—

(१)

दोषहि को उमहै गहै, गुन न गहै खल लोक।
पिये रुधिर पय ना पिये, लगी पयोधर जोक॥

—महाकवि वृन्द

(२)

रहिमन लाख भली करो, अगुनी अगुन न जाय।
राग सुनत पय पियत हूँ, साँप सहज धरि खाय॥

—रहीम

‡ गोस्वामी तुलसीदास तथा जायसी आदि महाकवियों ने तेई अथवा तेईस और चौबीस मात्रा के मिलेजुले दलोंवाले दोहों का भी प्रयोग किया है; इसी लिये इस छन्द का विशेष वर्णन मात्रामुक्तक में दिया गया है।

(३)

भरति नेह नव नीर नित, बरसत सुरस अथोर ।
जयति अपूरब घन कोऊ, लखि नाचत मन मोर ॥

—भारतेन्दु

सोरठा*

इसके विषम (पहले-तीसरे) चरणों में ग्यारह और सम (दूसरे-चौथे) चरणों में तेरह मात्राएँ होती हैं। विषम चरणों में तुकान्त मिलते हैं। तुकान्त में नंद (गुरु-लघु) का रहना आवश्यक है :—

रहिमन मोहि न सुहाय, अमी पियावत मान बिनु ।
बरु विष देय बुलाय, मान सहित मरिबो भलो ॥

—रहीम ।

चारों चरण मिलकर ५२ मात्राओं के छन्द

दोही

दोहे के तेरह मात्रावाले विषम चरणों के आदि में द्विकल और बढ़ा देने से दोही छन्द बन जाता है :—

जो मुए, मरत, मरिहैं सकल, घरी पहर के बीच ।
है लही न काहू आजुलों, गीधराज की मीच ॥

---

*सोरठे को उलट देने से दोहा बनता है। रोले की टिप्पणी में देखो ।

चारों चरण मिलकर ५६ मात्राओं के छन्द

उल्लाला

इस छन्द के विषम (पहले-तीसरे) चरणों में पन्द्रह और सम (दूसरे-चौथे) चरणों में तेरह मात्राएँ रहती हैं। इसमें चरणों के अंत में गुरु लघु का कोई नियम नहीं है :—

मत चरचा चालो नीति की, जग का ये ही हाल है।
उपकार भुला देना सहज, आजु काल्हि की चाल है॥

—पूर्ण

(२)

जय प्रसव-ज्ञान-पार्थिव-प्रकट, अज्ञ-प्रजा-मन-मुग्ध-कर।
जय जयति प्राथमिक भू-प्रभू, भू-विज्ञान-विदग्ध-वर॥

—श्रीधर पाठक

चारों चरण मिलकर ५८ मात्राओं के छन्द

चुलियाला*

चौबीस मात्रा वाले दोहे के सम चरणों के अन्त में जगण और एक लघु के रूप में, पंचकल बढ़ा देने से चुलियाला छन्द बन जाता है :—

(१)

तुम समान दाता नहीं, बिपति बिड़ारनहार उमापति
तव चरननि में मान की, बरदा के असवार रहे रति

*कोई कोई इसे चार पद का मानते हैं। चार पद मानने वाले दोहे के सम चरणों के अन्त में यगण रखते हैं।

(२)

मेरी बिनती मानि के, हरिजू देखो नेक दया कर।
नाहीं तुम्हरी जात है दुख हरिबे की टेक सदा कर॥

—भानु

दोनों दल मिलकर ६२ मात्राओं के छन्द

धत्ता

प्रत्येक दल में दस, आठ और तेरह पर विराम ; चरणान्त में नगण रहता है :—

मत मद कर धन का, है कुछ क्षण का, किसी का न अपकार कर।
रख ध्यान बात का, देश, जातिका, विश्वनाथ का ध्यान धर॥

—मान

धत्तानन्द

प्रत्येक दल में ग्यारह, सात और तेरह पर विराम; चरणान्त में नगण रहता है :—

जय कंदिय कुल कंस, बलि विध्वंस, केशिय बक दानव दरन।
सो हरि दीन दयाल, भक्त कृपाल, कवि सुखदेव कृपा करन॥

—छन्दो मंजरी

मात्रिक-विषम

पाँच पद मिलकर १०६ मात्राओं के छन्द

पंचपदी-संकर ※

इस छन्द के आदि में दो चरण रोले के, फिर दो दल दोहे और अंत में एक चरण 'कमल' छन्द का रहता है :—

(१)

टिमटिमाति जातीय जोति जो दीप-शिखासी।
लगत बाहिरी ब्यारि बुझन चाहत अवला सी॥
शेष न रह्यो सनेह कौ काहू हिय में लेस।
कासों कहिये गेह को देसहि में परदेस॥
भयो अब जानिये।

—सत्यनारायण कवि

(२)

भंगुर है यह देह, चार दिन का है जीवन।
करो न कलह-कलंक पंक से अंक विलेपन॥
त्यागो विष सम भाइयो ! फूट, द्वेष, छल, क्रोध।

※ इस तरह हज़ारों पंचपदियाँ बन सकती हैं। पंचपदी को उ… मुख़म्मस कहते हैं। परन्तु उसमें चारों चरण एक ही छन्द के … हैं। मुख़म्मस संकर छन्द नहीं होता। यह पंचपदी बहुत प्रसिद्ध … नंददास, सूरदास, सत्यनारायण जी आदि ने इसमें अन… लिखे हैं।

रहो प्रेम से सुख सहित, तजकर वंधु-विरोध ।।
सदा फूलो फलो ।

—लोचनप्रसाद पाण्डेय

मिलिन्दपाद संकर छन्द *

छः पद मिलकर ६२ मात्राओं के छन्द

प्रसार,

इस छन्द के आदि में चार चरण गोपी छन्द के और अन्त में दो चरण प्रसाद छन्द के रहते हैं:--

खुले दृग देखें दीनों को, ।
स्वेद-सिंचित जन मीनों को ।।
श्रान्त श्रमजीवी हीनों को ।
धूल-धूसरित मलीनों को ।।
खड़ा जिन में तू रज लपटाय ।
मुक्ति! हाँ, मुक्ति मुझे मिल जाय ।।

—गोकुलचन्द शर्मा

---

* महाकवि नाथूराम जी शंकर शर्मा ने छः चरणवाले सभी छन्दों का नाम 'मिलिन्दपाद' बड़ा ही उपयुक्त नाम रखा है। उर्दू में मुसद्दस छः चरणवाले छन्दों को कहते हैं। परन्तु छहों चरण एक ही जाति के छन्द के होते हैं ।

छः चरण मिलकर १२८ मात्राओं के छन्द

तरंग

इस छन्द के पहले दो चरण चौपाई के, फिर दो च रूप सवैया छन्द के और अन्त में फिर दो चरण चौपाई रहते हैं। इस तरह छः चरण रहते हैं :—

तुम भी ग्राम खुले सपने हो।
रूप रंग में वही बने हो।।
कटी-बँटी हरियाली में तुम, वैसे ही तो जड़े हुए हो।
उठे तरल-श्यामल-दल-गुंफित अंचल में तुम पड़े हुए हो।।
धरती माता की मटियाली।
रहे गोद यह भरी निराली।।

—रामचन्द्र शुक्ल

छः पद मिलकर १४४ मात्राओं के छन्द

कुण्डलिया

इस छन्द के आदि में दोहा और अन्त में रोला होता है। इस तरह इस के प्रत्येक चरण में चौबीस मात्राएं होती हैं और छः पद रहते हैं। दोहे के चौथे चरण की शब्दावली ज्यों की त्यों रोले के पहले पद के आदि में और दोहे के पहले चरण के आदि का शब्द या कुछ वर्ण कुंडलिया के छठे पद (रोले के चौथे पद) के अंत में ज्यों के त्यों सिंहविलोकित ढंग से आते हैं:—

कीजै गमन सुमानसर, यह दुखदायक ताल।
हंस बंस अवतंस हौ, मौन गहौ इहि काल॥
मौन गहौ इहि काल काक बक खल या ठावैं।
अति कठोर बरजोर सोर चहुँ ओर मचावैं॥
बरनै दीनदयाल इन्हें तजि सुख सों जीजै।
सठ संगति अति भीति भूलि तहँ गमन न कीजै॥

—दीनदयालु गिरि

अमृतध्वनि*

इस छन्द के आदि में दोहा और अन्त में सिंहविलोकित-ढंग से रोला रहता है। इसमें उद्धत वर्ण रहते हैं जिन में प्रायः अनुप्रास की छाया रहती है :—

धुनि धुनि सिर खल तिय गिरहिं, सुनत राम धनु शब्द।
लग्गिय सर झरि गगन महि, यथा भाद्रपद अब्द॥
अब्द निनद करि क्रुद्ध कुटिल अरि युक्ति मरत लरि।
मुंड परत गिरि रुंड लड़त फिरि खड्ग पकरि करि॥
रिच्छ प्रबल भट उद्धत मरकट मर्दत तिहिं ध्वनि।
निर्त्तत सुर मुनि मित्र कहत जय कृत्ति अमृतध्वनि॥

—दास

छः पद मिलकर १४८ मात्राओं के छन्द

छप्पय (अन्य नाम—षट्पद)

इस छन्द के आदि में चार पद रोला के और अन्त में दो

---

* प्रायः इस छन्द में वीररस का वर्णन किया जाता है।

पद उल्लाला के होते हैं। इस तरह इस छन्द में छः पद होते हैं। छब्बीस अथवा अट्ठाईस मात्रावालों में से कोई भी उल्ला- रोला के अन्त में रखा जा सकता है:—

(१)

जय हिन्दू-कुल-तिलक धर्म-रक्षक अरि-घालक।
पालक अबला, वृद्ध और गो, ब्राह्मण, बालक।
दीन दुखी जन प्राण पापियों के उर-शालक।
सब विधि शासक योग्य न्याय प्रिय प्रजा-सुपालक॥
सरजा तेरी रहेगी, तब तक जग में ख्याति भी।
जब तक इस संसार में है यह हिन्दू जाति भी॥

—मान

टिप्पणी—इसमें उल्लाला छब्बीस मात्रा का है।

(२)

निज स्वदेश ही एक सर्व-पर ब्रह्म-लोक है।
निज स्वदेश ही एक सर्व-पर अमर-ओक है॥
निज स्वदेश विज्ञान-ज्ञान-आनंद-धाम है।
निज स्वदेश ही भुवि त्रिलोक-शोभाभिराम है॥
सो निज स्वदेश का सर्व विधि प्रियवर आराधन करो
अविरत-सेवा-सन्नद्ध हो सब विधि सुख-साधन करो

—श्रीधर पाठ

टिप्पणी—इसमें उल्लाला अट्ठाईस मात्रा का है।

आठ चरण मिलकर १६२ मात्राओं के छन्द

हुल्लास

आदि में पादाकुलक और अन्त में त्रिभंगी छन्द ।

कान्ह जनम दिन सुर नर फूले । नभधर निसिवासर सम तूले ।
महिते महरि अबीर उड़ावैं । दिवि ते देव सुमन बरसावैं ॥
सुमनन बरसावैं, हरष बढ़ावैं, तजि तजि आवैं यानन को ।
सजि तिय नर भेषनि, सहित अलेखनि, करहि अशेषनि गानन को ॥
तिन लोगनि की गति, दानन की अति, निरखि सचीपति भूलि रहे ।
ब्रजसोभ प्रकासहि, नंद विलासहि, दास हुलासहि कौन कहै ॥

—दास

मात्रामुक्तक

किसी छन्द के रूप के उसके कला-दो कला घट-बढ़ जाने से जो अवान्तर भेद होते हैं वह सभी भेद उसी छन्द के अन्तर्गत माने जाते हैं ।*

सम

जातिचौपई

जिस छन्द के कोई दो चरण चौपाई के और कोई दो चौपई के हों वह जातिचौपई छन्द कहलाता है :—

---

*घटे बढ़े कल दुकल हूँ, वहै भेद अभिराम ।
तेहि गनि मत्ता छन्द के मुक्तक में गुण धाम ॥

—दास

सच बोलें सच बात बिचारें।
खरे काम कर जनम सँवारें॥
राखें देस जाति का मान।
ऐसी मति दीजै भगवान॥

—रामदास गौड़

चितहंस

इसके प्रत्येक चरण में उन्नीस या बीस मात्राएँ होती हैं। चरण के अंत में लघु गुरु या गुरु लघु रहते हैं:—

(१)

अयि दयामयि देवि, सुखदे, सारदे,
इधर भी निज वरद-पाणि पसार दे।
दास की यह देह-तंत्री तार दे,
रोम-तारों में नई झंकार दे।

(२)

फूल-फल-कर-, फैल कर जो हैं बढ़ी,
दीर्घ छज्जों पर विविधि बेलें चढ़ी।
पौर-कन्याएँ प्रसून-स्तूप कर,
वृष्टि करती हैं यहीं से भूप पर॥

—साकेत

(३)

गोद में गिर प्यार के पुतले बने ।*
जंग में गिरि कर सरग सुख से घिरे ॥
पर उसी दिन सिर! बहुत तुम गिर गये ।
पाजियों के पाँव पर जिस दिन गिरे ॥

—हरिऔध,

सुमेरु

इस छन्द का प्रत्येक चरण उन्नीस या बीस मात्रा का होता है; चरण के आदि में लघु रहता है । यति, गति पर निर्भर है:—

(१)

यही है आज का सा, यह सबेरा,
मिटा राजत्व बन में भी न मेरा ।
अनुज ! मुझ से न तुम न्यारे कभी हो,
सुहृत्, सहचर, सचिव, सेवक सभी हो॥

---

*श्री हरिऔध जी ने चौपदों के नाम से अनेक मात्रासुक्तकों का प्रयोग किया है । चौपदा उर्दू के चार चरण वाले 'क़ते' के ढंग का होता है । प्रत्येक में चार ही चरण होने के कारण चौपदा नाम उपयुक्त ही है । उर्दू में 'रुबाई' चार चरण वाले विशेष प्रकार के छन्द को कहते हैं । रुबाई का अर्थ है 'चौपदा' ।

—रामदास गौड़,

(२)

कहाँ है हा! तुम्हारा धैर्य वह सब?
कि कौसिक संग भेजा था मुझे जब ॥
लड़कपन भूल लक्ष्मण का सदय हो,
हमारा वंश नूतन कीर्ति मय हो ।

—साकेत

नांदीमुखी

इसके प्रत्येक चरण में बीस मात्राएँ होती हैं; आदि में पंचलघु और आगे तीन यगण रहते हैं। चारों चरणों में यह क्रम न रहने पर भी गति ठीक रहने से नांदीमुखी ही होता है:-

जनम प्रभु लियो औध में लूट माँची ।
लुट्यो सब सबनि वस्तु एकौ न बाँची ॥
द्विजन किय बिदा बाकवादै सुखी कै ।
नृपति जब उठे श्राद्ध नांदीमुखी कै ॥

—दास

प्रिया

इस छन्द के प्रत्येक चरण में बाईस या तेईस मात्राएँ होती हैं; इसकी यति, गति पर निर्भर है :—

होमर जो है यूनान का, कवि आदि कहाया ।
उसने भी सुयश वीरों का है जोश से गाया ।
'फिरदौसी' ने भी नाम अमर अपना बनाया ।
जब फारसी वीरों का सुयश गाके सुनाया ॥

—भगवानदीन 'दीन'

हरिप्रिया

इस छन्द के प्रत्येक चरण में बीस, इक्कीस या बाईस मात्राएँ होती हैं ; चरण के अन्त में गुरु लघु या लघु गुरु रहते हैं:—

(१)

हरति जु है दीनन को संकट बहु है।
बिनवत तेहि चितवनि हित दास दास है।
करनि हरनि पालति तू देवि आपु ही।
शंभुप्रिया ब्रह्मप्रिया हरिप्रिया तुही॥

(२)

करति जु है दीननि के संकट को हीन।
बिनवत तेहि चितवनि हित दास दास दीन।
करनि हरनि पालनि तू देवि सर्व ठौर।
शंभु प्रिया ब्रह्म प्रिया हरि प्रिया न और॥

(३)

हरति जु है दीनन को संकट बहुतेरो।
विनवति तेहि चितवनि हित दास दास तेरो।
करनि हरनि पालनि तू देवि आपु ही॥
शंभुप्रिया ब्रह्मप्रिया हरिप्रिया तुही।

—दास

दिगपाल

इस छन्द के प्रत्येक चरण में बारह-बारह के विराम से चौबीस मात्राएँ होती हैं। दिगपाल की गति रहने से बाईस और तेईस

मात्रावाले छन्द भी दिगपाल ही कहलाते हैं। चरणान्त में लघु का कोई मुख्य नियम नहीं हैः—

(१)

सों पायँ आजु डौलै महि सीत धूप में।
विधि बुद्धि तुच्छ जाकी महिमा अनूप में।
हर जासु रूप राखै हिय बीच सर्वदाहि।
दिगपाल भाल जाकी रज राजती सदाहि॥

—दास

टिप्पणी—इसके पहले दो चरणों में से हर एक में बाईस और अन्तिम दो चरणों में से हर एक में तेईस मात्राएँ हैं :—

(२)

शुचि विश्व-बन्धुता का, है पाठ भी पढ़ाया—
आरम्भ में हमीं ने, जग सभ्य है बनाया॥
विज्ञान-ज्ञान के हैं, गुरु भी हमीं जहाँ के।
आये न सीखने याँ, क्या क्या कहाँ कहाँ के॥

—मान

टिप्पणी—इसके प्रत्येक चरण में चौबीस मात्राएँ हैं।

जाति चौबोला

चौबोले के रूप के, उसके कला दो कला कम होने से जो अवान्तर भेद होते हैं वह सभी भेद चौबोले के ही अन्तर्गत हैं

और सब का सामूहिक नाम जाति चौबोला है। सत्ताईस से लेकर बत्तीस मात्रा तक के चौबोले साधारण गानेवाले लावनियों, फाग के चौबोलों में और कजली गानेवाले अपने गीतों में गाते हैं। जहाँ चारों चरण समान नहीं हैं वहाँ जाति चौबोला ही कहना चाहिये❀ :—

(१)

घोड़े जहाँ अनेक गधों का वहाँ काम क्या था सच कह ?
विदित हो गई तेरी सारी चतुराई तू चुप ही रह।
शुद्धाशुद्ध शब्द तक का है जिनको नहीं विचार।
लिखवाता है उनके कर से नये नये अखबार॥

—महावीर प्रसाद द्विवेदी

(२)

"अपना स्वार्थ सिद्ध करने को जगत् मित्र बन जाता है।
किन्तु काम पड़ने पर, कोई कभी काम नहिं आता है।
भरे बहुत से इस पृथ्वी पर पापो, कुटिल कृतघ्न।
इसी एक कारण से उसपर, उठें अनेकों विघ्न॥

—श्रीधर पाठक

(३)

चाहे कुश-कंटक ही बन, छा जाना जीवन-पथ पर,
पर, प्राणों में, प्राणेश्वर बसना अक्षय मधु बनकर।

❀—रामदास गौड़

जिससे, घोर निराशा में भी आशा का मुख म्लान न हो,
सह्य बने संघर्ष, सरसता उर की अन्तर्धान न हो।

—मिलिन्द

(४)

बार बार आती है मुझ को मधुर याद बचपन तेरी।
गया, ले गया तू जीवन की सबसे मस्त खुशी मेरी।
चिन्ता-रहित खेलना-खाना वह निर्भय फिरना स्वच्छन्द।
कैसे भूला जा सकता है बचपन का अतुलित आनंद॥

—सुभद्राकुमारी चौहान

अर्द्ध-सम मात्रा मुक्तक

दोहा*

इस छन्द के विषम (पहले-तीसरे) चरणों में बारह या तेरह-तेरह और सम (दूसरे-चौथे) चरणों में ग्यारह-ग्यारह मात्राएं होती हैं। इस तरह प्रत्येक दल में तेईस-तेईस या

---

* जिस दोहे के आदि में जगण पड़ जाता है उसे 'चंडालिनी दोहा'

| S |

कहते हैं। यथा—'**बखान** ना चंडालिनी दोहा दुख की खानि।' यदि जगण पड़े ही तो पूरे शब्द में न पड़े। जैसे 'समान' 'बिमान' आदि शब्द, और यदि मंगलवाची या देववाची पद हो तो यह दोष क्षम्य भी है। यदि जगण पड़नेवाले वर्णों में दो शब्द पड़ जायँ तो यह दोष नहीं रहता है यथा—

चौबीस-चौबीस मात्राएँ होती हैं। इस के विषम चरणों के आदि में जगण का निषेध है। सम चरणों के अंत में गुरु-लघु अथवा लघु रहता है :—

(१)

सेवक सेव्य भाव बिनु, भव न तरिय उरगारि।
भजहु राम पद पंकज, अस सिद्धान्त बिचारि ॥
- गोस्वामी तुलसीदास

'करो किसी की दृष्टि को शीतल सदय कपूर।
इन आँखों में आप ही, नीर भरा भरपूर ॥
—साकेत

ध्यान रहे कि यदि दोहे के प्रत्येक चरण के आदि में एक समकल-समूह हो तो उस के आगे एक और समकल समूह रखो, और यदि विषमकल समूह हो तो विषम कलों का जोड़ा रखो। दोहे का शब्दार्थं ही है 'जोड़े वाला' अर्थात् जिसके चरणों के आदि में सम-सम या विषम-विषम मात्रासमूहों का जोड़ा रहे वह दोहा। यह भी ध्यान में रखना चाहिये कि चौबीस मात्रा वाले दोहों के विषम (पहले-तीसरे) चरणों के आदि में जगण न हो और अन्त में सगण रगण अथवा नगण में से कोई रहे और सम चरणों के अन्त में जगण, तगण, अथवा नगण रहे, और तेईस मात्रा वाले दोहों के विषम चरणों के अन्त में तगण और जगण को छोड़ शेष छहों गणों में से कोई रह सकता है ।

(२)

इहाँ उहाँ कर स्वामी, दुऔं जगत मोहि आस।
पहिले दरस दिखावहु, तौ पठवहु कैलास ॥

—जायसी

टिपणी—इन दोनों के प्रत्येक दल में तेईस मात्राएँ हैं।

(३)

जिन दिन देखे वे कुसुम, गई सो बीति बहार।
अब अलि रही गुलाब की, अपत कटीली डार ॥

—बिहारी

(४)

आवत ही हरषे नहीं, नयनन नहीं सनेह।
तुलसी तहाँ न जाइये, कंचन बरसे मेह ॥

— तुलसी

टिप्पणी—इन दोनों के प्रत्येक दल में चौबीस मात्राएँ हैं।

(५)

अब गृह जाहु सखा सब, भजेहु मोहि दृढ़ नेम।
सदा सरब-गत सरब हित, जानि करेहु अति प्रेम ॥

—तुलसी

(६)

आजु खड़ग चौगान गहि, करी सीस-रिपु गोइ।
खेलौं सौंह साहसौं, हाल जगत महँ होइ ॥

—जायसी

टि०—पाँचवें दोहे के पहले दलमें तेईस और दूसरे में चौबीस तथा छठे दोहे के पहले दलमें चौबीस और दूसरे में तेईस मात्राए हैं।

लघु गुरु की न्यूनाधिकता से दोहों के अनेक भेद हो सकते हैं। इनमें तेईस प्रकार के दोहे बहुत प्रसिद्ध हैं।* मनोरंजनार्थ दो तीन दोहे यहाँ दिये जाते हैं:—

भ्रमर (२६ वर्ण = २२ गुरु + ४ लघु)

कोऊ साँचो ना मिलो, ज्ञानी-मानी मीत।
जे पाये ते स्वारथी-दंभी-मैले-चीत ॥

—मान

करभ (३२ वर्ण = १६ गुरु + १६ लघु)

भजन कह्यो तातें भज्यो, भज्यौ न एकौ बार।
दूर भजन जातैं कह्यौ, सो तैं भज्यो गँवार ॥

—बिहारी

वानर (३८ वर्ण = १० गुरु + २८ लघु)

करत करत अभ्यास के, जड़मति होत सुजान।
रसरी आवत जात तें, सिल पर होत निसान ॥

—वृन्द।

---

*भ्रमर सु भ्रामर, सरभ, स्येन, मण्डुक, मरकट कहि।
करभ, सु नर, अरु हंस, जानि मदकल, कविजन लहि।
कहूँ पयोधर, चाल, और बानर, जिय जानहु।
त्रिकल, और कहि मच्छ, कच्छ, हरदेव बखानहु।
शार्दूल, अहिवर, वरन वायस, विडाल, सेनक, कहो।
उदर, सर्प तेईस ये दोहा नाम सुकवि लहो ॥

—हरदेव

विषम

गीत अथवा पद

गीत अथवा पदों की जितनी मुक्तक रचना होती है उतनी अन्य मुक्तक छन्दों की नहीं होती। इनका संबंध राग और रागनियों से होता है। उन्हीं के स्वर और लय विशेष के अनुसार गीतों में मात्राओं की वृद्धि होती है और उनका ह्रास होता है। यही कारण है कि इनके चरणों में विषमता रहती है। ऐसी अवस्था में गीतों के लिये किसी विशेष नियम का निर्धारण नहीं किया जा सकता। फिर भी समष्टि रूप से गीतों अथवा पदों की रचना पिंगल के नियमानुसार ही होती है। हाँ, प्रायः देखा जाता है कि किसी पद या गीत के आरंभ में जितनी मात्राओं की टेक रखी जाती है, ठीक उसी की दूनी मात्राओं के नीचे के चरण रखे जाते हैं। पर ऐसा कोई नियम नहीं है। ऐसा बहुत होता है कि टेक की मात्राएँ कुछ हैं और नीचे के चरणों की मात्राएँ कुछ; परस्पर कोई संबंध नहीं होता। यही नहीं बल्कि नीचे के चरणों में परस्पर भी विषमंता होती है। कोई चरण छोटा और कोई बड़ा होता है। और आजकल के छायावाद में ऐसे ही गीतों की भरमार है। विषय के हृदयंगम कराने के लिये यहाँ कुछ पद उद्धृत कर दिये जाते हैं*:—

(१)

जसोदा हरि पालने झुलावै।
हलरावै, दुलराइ मल्हावै, जोइ सोइ कछु गावै ॥

---

* हरिऔध

मेरे लाल को आउ निंदरिया, काहे न आनि सुवावै।
तू काहे न बेगि सी आवे, तोकों कान्ह बुलावै ॥
कबहुँ पलक हरि मूँद लेत हैं, कबहुँ अधर फरकावै।
सोवत जानि मौन ह्वै रहि रहि, करि करि सैन बतावै ॥
इहि अन्तर अकुलाइ उठै हरि, जसुमति मधुरे गावै।
जो सुख 'सूर' अमर मुनि दुरलभ, सो नँद भामिनि पावै ॥

—सूर

टिप्पणी—इस की टेक सत्रह मात्राओं की है। तीसरे चरण में पन्द्रह और बारह के विराम से सत्ताईस मात्रा का चरण है और शेष चरण सोलह और बारह के विराम से अट्ठाईस मात्राओं के सार छन्द के हैं।

(२)

कर सकेंगे क्या वे नादान।
बिन सयानपन होते जो हैं बनते बड़े सयान ॥
कौआ कान ले गया सुन जो नहिं टटोलते कान।
वे क्यों सोचें तोड़ तरैया लाना है आसान ॥

—हरिऔध

टिप्पणी—इस की टेक सोलह मात्रा की है, शेष पद सत्ताईस मात्रा के सरसी छन्द के हैं।

(३)

बस, अब नहिं जाति सही।
विपुल वेदना विविधि भाँति जो तन मन व्यापि रही ॥
कबलों सहें, अवधि सहिबे की कछु तो निश्चित कीजे।
दीनबन्धु यह दीन दशा लखि क्यों नहिं हृदय पसीजे ॥

वेद बदत गावत पुरान सब तुम त्रय-ताप नसावत।
सरनागत की पीर तनक हू तुम्हें तीर सम लागत॥
हम से सरनापन्न दुखी को जाने क्यों विसरायो।
सरनागत वत्सल 'सत' योंही कोरो नाम धरायो॥

—सत्यनारायण कविरत्न

टिप्पणी—इसकी टेक बारह मात्रा की है। टेक के नीचे का चरण छब्बीस मात्रा का विष्णुपद है। शेष चरण अट्ठाईस मात्रा के सार छन्द के हैं।

(४)

अब जो प्रियतम को पाऊँ।
तो इच्छा है, उन चरणों की रज में आप रमाऊँ।
आप अवधि बन सकूँ कहीं तो क्या कुछ देर लगाऊँ,
मैं अपने को आप मिटाकर, जाकर उन को लाऊँ।

—साकेत

टिप्पणी—इसकी टेक में चौदह मात्राएँ हैं। शेष चरणों में टेक की दूनी अट्ठाईस मात्रा का सार छन्द है।

(५)

मो सम को त्रिकाल बड़भागी।
तजि साकेत सकेत हिये के भये राम अनुरागी॥
जिमि प्रभु मोहिं राखि सरनागत अपत अघिहि अपनाये।
तिमि मेरो हिय सदा आपनो मंदिर रखहु बनाये॥

—रामदास गौड़

टिप्पणी—टेक में चौपाई और शेष चरण सार छन्द के हैं।

(६)

भूतल कब आओगे प्यारे।
गंग-जमुन अब छिन्न-भिन्न हैं, ढूँढ़त चरन तुम्हारे॥
हेरि हेरि अँखियाँ पथरानी, छतियन परत दरारे।
कहाँ विलमि हा! रहे प्राणधन पीरे पटुका वारे॥
तुमको कहत दयानिध सिगरे, पचि-पचि मरत बिचारे।
फिर तुम हा! कत नहीं पसीजत, प्राननु के आधारे॥
'अनुज' अकिंचन तुम्हें पुकारत हे त्रिभुवन उजियारे।
जाति-जाति कहँ सब कोऊ चाहत हम कारे तुम कारे॥

—महन्त लक्ष्मणाचार्य 'वाणी-भूषण'

टिप्पणी—इसकी टेक चौपाई का एक चरण है। शेष चरण अट्ठाईस मात्रा के सार छन्द के हैं।

(७)

हे अनन्त!
ऊपर सूर्य, चन्द्र, तारागण,
भू पर सागर, गिर-रज, कण-कण,
तेरी कीर्ति गुँजाते,
जिससे गूँजी दिशा दिगंत।
हे अनन्त!

—अवन्त

टिप्पणी—इसकी टेक छः मात्रा की है; टेक के बाद दो चरण चौपाई के; तीसरा चरण बारह मात्रा का और चौथा चरण चौपई का है।

(८)

दो दिन खेल गया उपवन में।
रूप अनोखा लेकर आया, खेला-कूदा हँसा-हँसाया;
दिव्य सुरभि से बन महँकाया।
इस से बढ़कर भला और क्या रक्खा है जीवन में ॥१॥
गुण सौंदर्य देख कर प्यारा, रीझ गया माली हत्यारा;
और किया डाली से न्यारा।
तोड़ ले चला दुष्ट बेचने दया न आई मन में ॥२॥
जीवित सब ने सीस चढ़ाया, मृत हो जाने पर ठुकराया;
घर से बहुत दूर फिंकवाया।
लगी रही दुनिया सदैव, ही अपने मन के धन में ॥३॥
दो दिन खेल गया उपवन में।

—बदरीनाथ भट्ट

टिप्पणी—इस छन्द की टेक सोलह मात्रा की है। पहला चरण सोलह सोलह के विराम से अड़तालीस मात्रा का है और तोड़ अट्ठाईस मात्रा का सार छन्द का है।

(९)

ऐ रजकण के ढेर तुम्हारा है विचित्र इतिहास!
तुम मनुष्य की उन अभिलाषाओं के हो उपहास,
कि जिनका असफलता है अंत
और आशा जीवन!

बना अजान खण्ड ही यह लो आज तुम्हारा सदन
कभी उत्थान कभी है पतन।
वासनाओं का यह संसार
भयानक भ्रम का है बंधन;
और इच्छाओं का मण्डल
आदि से अंत रुदन है रुदन;
एक अनियंत्रित हाहाकार
इसी को कहते हैं जीवन।

—भगवती चरण वर्मा

टिप्पणी—यह संकर पद है। इसमें कई भिन्न भिन्न छंदों का मेल है।

(१०)

बादल राग

ऐ निर्बन्ध !
अन्ध-तम-अगम-अनर्गल-बादल !
हे स्वच्छन्द !—
मन्द-चंचल समीर-रथ पर उच्छृङ्खल ?
ऐ उद्दाम !
अपार कामनाओं के प्राण !
बाधा रहित विराट !
ऐ विप्लव के प्लावन !
सावन-घोर-गगन के
ऐ सम्राट !

ऐ अटूट पर छूट, टूट पड़नेवाले – उन्माद !
विश्व-विभव को लूट लूट लड़नेवाले—अपवाद !
आ बिखरे, मुख फेर, कली के निष्ठुर पीड़न !
छिन्न-भिन्न कर पत्र-पुष्प-पादप-वन-उपवन.
वज्र-घोष से ऐ प्रचंड,
आतंक जमाने वाले !
कंपित जंगम, – नीड-विहंगम,
ऐ न व्यथा पाने वाले !
मय के मायामय आँगन पर,
गरजो विप्लव के नव-जलधर ?

—सूर्यकान्त त्रिपाठी "निराला"

टिप्पणी—इस पद में अनेक छन्दों का मिश्रण है। यह अपने ढंग का निराला ही है। पर इस में भी सँगीत की लय है।

ख़्याल*

ख्याल कम से कम बाईस मिसरे[1] का होता है जिसमें पहले दो मिसरे टेक या धुरपद कहलाते हैं। फिर चार मिसरों का एक

---

*संगीत में पदों की माँति ख्यालों का भी एक स्थान है। पिछले सौ वर्षों तक उत्तरी भारत में ख्याल भी खूब गाये गये। ख्याल 'मराठी'

१. पंक्ति

चौक[1] होता है। पाँचवा मिसरा उड़ान या मिलान कहलाता है जो धुरपद के दूसरे मिसरे से जोड़ दिया जाता है। गाने की किसी भी रंगत को चार चौक में बंदिश कर देने से ख्याल माना जाता है यद्यपि चार चौक से अधिक पचास और साठ चौक तक के भी ख्याल देखे गये हैं। परन्तु मुख्यतया चार चौक को ही महत्व दिया गया है।

कर्मों से ज्ञान हो यही वेद कहते हैं। } टेक
जब ज्ञान हुआ तब कर्म नहीं रहते हैं॥

जैसे वृक्षों पर प्रथम पुष्प आते हैं।
फल प्रकट होय तब पुष्प सूख जाते हैं॥
ऐसे ही मनुज कर्मों से ज्ञान पाते हैं। } चौक
जब ज्ञान हुआ कर्मों को बिसराते हैं॥

और लावनी नाम से प्रसिद्ध हैं। ख्याल गानेवालों के दो थोक हैं कलँगी और तुर्रा। कलँगी के प्रवर्तक श्री शाहअली और तुर्रा के प्रवर्तक महात्मा तुकन्नगिरि थे। किसी मराठी दरबार ने इन दोनों गायनाचार्यों में से एक को कलँगी, दूसरे को तुर्रा उपहार प्रदान किया था। इसी से ये नाम प्रचलित हो गये।

ख्याल गानेवालों के दोनों दलों में प्रायः बहुत दिनों तक विवाद चलता रहा है। जिस समय दोनों थोक वाले चंग पर चढ़ाउतरी के ख्याल कहते हैं; अच्छा रंग जमता है। —स्वामीनारायणानंद

१. चार पंक्तियों का एक चौक कहलाता है।

कर्मों का संग अज्ञानी जन गहते हैं।] उड़ान या मिलान
जब ज्ञान हुआ तब कर्म नहीं रहते हैं॥] अन्त में धुरपद
का दूसरा मिसरा

—स्वामी नारायणानंद।

ख्यालों में रंगतें अनेक हैं। उनमें खड़ी, लंगड़ी, छोटी, मेरी जान, डिढखंभी, तिकड़िया, चौताल और महराज आदि प्रसिद्ध हैं।

खड़ी

इसका प्रत्येक चरण तीस से बत्तीस मात्रा तक का होता है:—

सुख सुगंध लोभी मन मधुकर काम-कमल पर जा बैठा।
प्रेम पाँखुरी में फँसकर अपने को आप गँवा बैठा॥

—स्वामी नारायणानंद

लँगड़ी

गाना गणनायक बुद्धि विधायक सदा सहायक चाप धृते।
सब जब बंदन, निकंदन, विघ्न राशि आनंदकृते॥

—स्वामी नारायणानंद

टिप्पणी—इसकी पहली पंक्ति बत्तीस मात्रा की और दूसरी सत्ताईस की है।

तिकड़िया

जय जय गणेश काटो कलेश विद्या हमेश देना अन धन।
शिवजी के लाल करो प्रतिपाल, मूरति विशाल गिरिजानंदन॥

—मक्खनलाल

चौंताल

नीके सभी साज, सभी अजूवा अंदाज,
लिये संग में समाज, सखी नंदलाला।
नाचे तोड़े ताल, गावें रागिनी रसाल,
लिये रंग और गुलाल सब ब्रजबाला ॥
— स्वामी नारायणानंद

छोटी

बाईस मात्रा की लावनी छोटी रंगत कहलाती है।†

डिढ़खंभी

लखो एक अचरज, सो हम पै कह्यो न जाय।
सिंधु सीपी में गयो समाय।

सिकश्ता और तबील रंगते भी प्रायः लोग गाते हैं जो कि उर्दू की गजल-लहरों से आई हैं:—

रंगत सिकश्ता—

लसत है मस्तक पै दिव्य चंदा त्रय-नयन बिच ज्योति-ज्वाल की है।
लहरती गंगा जटा में सुख से विचित्र छवि चन्द्रभाल की है।
—स्वामी नारायणानन्द जी।

रंगत तबील:--

करुणानिधि टेरत हौं तुमको मेरी टेर सुनो कहँ देर करी।
भव-सागर बीच भँवर में पड़ी मेरी नैया को पार लगादो हरी।
—पन्नालाल

---

†बाईस मात्रा की लावनी देखो।

कभी एक ही रंगत में कई रंगतों का संमिश्रण हो जाता है। जैसे लंगड़ी रंगत का ख्याल लिखा और उसी चौक के अन्तर्गत तोड़ा दोहा, चौपाई आदि आदि को भी उसमें मिला दिया; परन्तु उसकी मुख्य रगंत वही मानी जावेगी कि जिस रंगत में टेक या धुरपद हो।

पंच पदी और छपदे आदि।

जिस तरह राष्ट्र-भाषा हिन्दी पर मराठी, गुजराती, बंगला आदि प्रान्तीय भाषाओं, और अँगरेजी का प्रभाव पड़ा है। उसी तरह उर्दू— जो खड़ी बोली का ही एक रूप है—का भी प्रभाव पड़ा है। बल्कि यों कहना चाहिये कि हिन्दी पद्य पर अरबी, फ़ारसी की बहरों का भी प्रभाव पड़ा है। और जिस तरह वहाँ मुखम्मस और मुसद्दस लिखे जाते हैं ठीक उसी ढंग पर हिन्दी में भी पद्य रचना होने लगी है। महाकवि हरिऔध जी ने इस तरह की बहुत रचनाएं की हैं। ये पंचपदियाँ और छपदे हिन्दी के संकर पंचपदी' और 'संकर मिलिंदपाद' छन्दों से भिन्न हैं। इन में एक ही छन्द के पाँच-पाँच और छः-छः चरण रहते हैं। पंचपदी मुखम्मस का ठीक शब्दार्थ है और 'छपदे' मुसद्दस का। हम पहले कह आये हैं कि अरबी-फारसी की अनेक बहरें मात्रामुक्तकों के अन्तर्गत आ जाती हैं। इसी से यहाँ पर चरचा की गई है। पंचपदियाँ हिन्दी के मूल छन्दों में भी लिखी जाने लगी हैं। पंचपदियों और छपदियों के कुछ उदाहरण मनोरंजनार्थ दिये जाते हैं:—

पंच पदी

(१)

दुनिया में जो बादशाह है सो है वह भी आदमी।
और मुफ़लिसो गदा है सो है वह भी आदमी।
ज़रदार बेनवा है सो है वह भी आदमी।
नेमत जो खा रहा है सो है वह भी आदमी।
टुकड़े जो माँगता है सो है वह भी आदमी ॥१॥

—नज़ीर

(२)

नव यौवन की चिता बना कर।
आशा कलियों को स्वाहा कर।
भग्न-मनोरथ की समाधि पर।
तपस्विनी बैठी निर्जन में।
जीवन के इस शून्य सदन में ॥

— दिनकर

टिप्पणी—इस छन्द में प्रत्येक चरण चौपाई का है।

छपद

(१)

चमकती हुई धूप किरणें सुनहली।
उगा चाँद और चाँदनी यह रुपहली।
हवा मंद बहती धरा ठीक सँभली।

सभी पौध जिनसे पली और बहली।
सकल लोक की जिस तरह है कहाती।
सभी की उसी भाँति हैं बेद थाती॥
—'हरिऔध'

टिप्पणी—इसका प्रत्येक चरण बीस मात्रा के नांदीमुख छन्द का है।

(२)

देख कर जो विघ्न बाधाओं को घबराते नहीं।
भाग पर रह कर के जो पीछे हैं पछताते नहीं
काम कितना ही कठिन हो पर जो उकताते नहीं।
भीड़ पड़ने पर भी जो चंचल हैं दिखलाते नहीं॥
होते हैं यक आन में उनके बुरे दिन भी भले।
सब जगह सब काल में रहते हैं वे फूले फले॥
— हरिऔध'

इसका प्रत्येक चरण गीतिका छन्द का है।

(३)

वेद कहते हैं कि निर्धन के हैं धन गिरधारी।
सच्चिदानन्द सगुन ब्रह्म हैं मंगलकारी॥
चश्मये-फ़ैज़ दो आलम में है उनका जारी।
सब्ज़ रहती है सख़ावत की सदा फुलवारी॥
कोई उस बाग़ से, महरूम नहीं आता है।
फूल लेने कोई जाता है तो, फल लाता है॥
—संतोषी सुदामा

सार-मिलिन्दपाद

भाव-राशि को रूप राशि के अभिनव साँचे ढाली।
नव-रस मय यौवन तरंग की लेकर छटा निराली॥
मंजु-अलंकारों से सजकर जगमग-जगमग करती।
कोमल-कलित-ललित-छन्दों के नूपुर पहन थिरकती॥
गज-गामिनि ! अनुपम शोभा की दिव्य-प्रभा दरसाओ।
छम-छम करती हृदय-कुंज में आओ कविते ! आओ !!

—श्यामसुंदर खत्री

रूपसवैया-मिलिन्दपाद

घर घर में जगदीशचन्द्र बसु होना काम हमारा ही है।
बन कर कृषक, गर्व से कृषि को बोना काम हमारा ही है॥
शिल्प बढ़ाकर ताजमहल फिर रचकर के दिखलाने होंगे।
व्यापारी बन देश देश में अपने पोत घुमाने होंगे॥
रेल तार आकाश-यान ये हम क्या कभी बना न सकेंगे।
शुद्ध स्वदेशी पीताम्बर क्या माधव को पहना न सकेंगे॥

—भारतीय आत्मा

कलाधरात्मक-मिलिन्दपाद

विरले ध्रुव-धर्म धारते हैं। शुभ कर्म नहीं बिसारते हैं॥
तरसें वह वीर रोटियों को। चिथड़े न मिलें लँगोटियों को॥

कुलबोर-प्रथा पुजा रहे हैं।
उलटे हम हाय ! जा रहे हैं॥
—नाथूराम 'शंकर' शर्मा

शुद्धगा-मिलिन्दपाद

बड़ों के मंत्र मानेंगे प्रसंगों को न भूलेंगे।
कहो क्या ऊँच ऊँचों की, उँचाई को न छूलेंगे॥
बढ़ेंगे प्रेम के पौधे, दया के फूल फूलेंगे।
भरे आनन्द से चारों, फलों के झाड़ झूलेंगे॥
सबों को 'शंकरानंदी' अनिष्टों से उबारेंगे।
बिगाड़ों को बिगाड़ेंगे, सुधारों को सुधारेंगे॥
—नाथूराम "शंकर" शर्मा

लावनी

कुछ ग्रन्थ किसी भाषा के पढ़ लेते हैं।
टूटी फूटी कविता भी गढ़ लेते हैं॥
मिथ्याभिमान-कुंजर पर चढ़ लेते हैं।
लड़भिड़ कलंक माथे पर मढ़ लेते हैं॥
इनका घमंड जिसकी ठोकर खाता है।
वह वीर समालोचक पदवी पाता है॥

सखी-मिलिन्दपाद

पत्थर तुम मुझे बनाओ; दृढ़ता का पाठ पढ़ाओ।
साहस सुकर्म सिखलाओ; पथ उन्नति का दिखलाओ॥

हाँ ऐ प्यारी विपदाओ !
आती हो, आओ ! आओ !!

—विपन्न

सरसी-मिलिन्दपाद

जहाँ एक भी जन रोता है पाकर कोई क्लेश;
हो बस उस विभुवर के वर से वही हमारा देश।
पोंछे जहाँ एक स-करुण कर दुःखी के दो नेत्र;
वही हमारा और तुम्हारा बने जीवन-क्षेत्र।
मातृ-भूमि के सहित वहीं है प्रकृति-पुरुष का देश।
नील गगन-सा मुक्त चतुर्दिक् विस्तृत और सु-वेश॥

—भारतीय

प्रसाद-मिलिन्दपाद

(१)

पाप का क्षणिक प्रभाव विलोक,
लोभ यदि सके न कोई रोक।
शोक, तो उसकी मतिपर शोक !
बना क्या, बिगड़ा जब परलोक॥
विजय है वही कि सब संसार—
करे पीछे भी जय-जयकार॥

—मैथिलीशरण गुप्त

(२)

जहाँ अलि गुंजन करता आज,
कूकती पिक छाता ऋतुराज!
वहीं है कल पतझड़ का राज;
नाचता दस-दिशि नाश-समाज।
क्षणिक है उन्नति-सम्मेलन।
अरे मेरे अस्थिर जीवन॥

—अशोक

प्रज्वलया-सप्तपदी

जिन आँखों का नीरव अतीत,
कहता है मिटना मधुर जीत,'
जिन पलकों में तारे अमोल
आँसू से करते हैं किलोल,
उस चिन्तित चितवन में विहास
बन जाने दो मुझ को उदार!
फिर एक बार, बस एक बार!

—महादेवी वर्मा

मात्रिक छन्दों के अन्तर्गत

आर्या और गाथा छन्द

बरवै, दोहा, छप्पय, कुण्डलिया आदि के अतिरिक्त संस्कृत में कुछ मात्रिक अर्द्धसम और विषम छन्द हैं जिन्हें आर्या कहते

हैं। प्राकृत में यही गाथा के नाम से प्रसिद्ध हैं। ये दो दलों में लिखे जाते हैं। संस्कृत, मराठी और प्राकृत में इनका विशेष चलन है। अब हिन्दी में भी इनका व्यवहार होने लगा है। इन के अनेक सूक्ष्म-भेद हैं। यहाँ मूल और प्रचलित छन्द लिखे जाते हैं।

इन छन्दों में चौकलों (डगण) का ही प्रयोग होता है। प्रस्तारानुसार चौकलों (डगण) के ऽऽ, ।।ऽ, ।ऽ।, ऽ।। और ।।।। ये पाँच रूप हैं।

*आर्या (गाहा, गाथा)

इस के विषम (पहले-तीसरे) चरणों में बारह-बारह मात्राएँ, दूसरे में अठारह और चौथे में पन्द्रह मात्राएँ होती हैं और

---

* दोहे की भाँति गुरु-लघु के हेरफेर से आर्या के भी छब्बीस भेद होजाते हैः—

सत्ताइस गुरु तीनि लघु, लच्छी अच्छर तीस।
गुरुहि घटे लघु बिय बढ़े, सो सो नाम छबीस॥
रिद्धि, बुद्धि, लज्जा गनो विद्या, क्षमा विभाँति।
देही (वैदेही), गौरी, धात्रियो, चुन्ना, छाया, क्रान्ति॥
महामाय पुनि क्रित्ति, सिधि, मानिन, रामा मानि।
गाहिनि, बिस्वा, वासिता, सोभा, हरिना जानि॥
चक्की, सारसि, कुररि अरु, सिंही, हँसी लेखि।
लच्छि सहित सत्ताइसे, गाहा भेद विशेषि॥

चरणान्त में गुरु रहता है। इसके विषम (पहले, तीसरे, पाँचवें और सातवें) गणों (चौकलों) में जगण का निषेध है:—

(१)

ııऽ ऽ ऽ, ऽ ऽ ऽ॥ ऽऽ। ऽ। ॥ ॥ ऽ
पहले आँखों में थे मानस में कूद मग्न† प्रिय अब थे।
१ + २ + ३ , ४ + ५ + ६ + ७ +

ऽऽ ।ऽ।ऽऽ ।ऽ। ऽ ऽ। ऽ ॥ ऽ
छींटे वही उड़े थे बड़े बड़े अश्रु * वे कब थे॥
१ + २ + ३ , ४ + ५ ६ + ७ +

—साकेत

(२)

कवि निर्धन भी होकर, शठ की सेवा कभी न करता है।
रत्नाकर में जाकर, हंस कभी क्या विचरता है?

—रामचरित उपाध्याय

(३)

दल हैं तो बास नहीं, बास नहीं तो न प्रचुर मकरंद।
मधुप एक कुसुम में, गुण दो या तीन तो नहीं मिलते॥

—चन्द्रधर शर्मा

---

† तीस मात्रा वाले पहले दल के छठे गण में जगण रहता है या चारों ही वर्ण लघु रहते हैं।

* सत्ताईस मात्रा वाले दूसरे दल में छठा गण एक लघु का ही मान लिया जाता है।

गीति[1] (उग्गाहा उद्गाथा)

इस के विषम (पहले-तीसरे) चरणों में बारह-बारह और सम (दूसरे चौथे) चरणों में अठारह-अठारह मात्राएँ होती हैं। चरणान्त में गुरु रहता है। प्रत्येक दल के विषम (पहले, तीसरे, पाँचवें, सातवें) गणों (चौकलों) में जगण का निषेध है। छठे गण में जगण रहता है अथवा चारों वर्ण लघु रहते हैं:—

(१)

रघुबर तब यश समता चन्द करै कहहु कौन भाँतिन तैं[2]।
दोषान्वेषी वह नित, यह निर्मल है प्रकाश कान्तिन तैं॥

—गदाधर

(२)

करुणे, क्यों रोती है? 'उत्तर' में और अधिक तू रोई—
'मेरी विभूति है जो, उसको 'भव-भूति' क्यों कहे कोई?

—साकेत

उपगीति (गाह)

इस के विषम (पहले-तीसरे) चरणों में बारह-बारह और सम (दूसरे और चौथे) चरणों में पन्द्रह-पन्द्रह मात्राएँ होतीं

---

१. पथ्या आदि विपुला, आदि गीति के सोलह उपभेद हैं।

२. आर्या छन्द में पहले उदाहरण में गुरु-लघु द्वारा चौकलों को दिखा दिया गया है। उसी तरह लक्षण के अनुसार उदाहरणों में चौकल समझ लेने चाहिएँ।

हैं। विषम (पहले, तीसरे, पाँचवें, सातवें) गणों में जगण का निषेध है। चरणान्त में गुरु रहता है :—

हरि मुख सुखद ससी सो, हासी मृदु अमिय[1] सी बासी।
नवला नजरि चकोरी, छबि रस पीवै तऊ प्यासी॥

—समनेस

उद्गीति (विग्गा, विगाथा)

इस के विषम (पहले, तीसरे) चरणों में बारह-बारह, दूसरे में पन्द्रह और चौथे में अठारह मात्राएँ होती हैं। विषम (पहले, तीसरे, पाँचवें, सातवें) गणों में जगण का निषेध है:-

मन में रख समता को, पर-हित कर जीवन[2] सफल हो।
जो प्रश्न सामने हो, हल हो जब तक नहीं तुझे कल हो॥

—मान

आर्यागीति* (खंधा, स्कंधक, साहिनी)

इसके विषम (पहले-तीसरे) चरणों में बारह-बारह और

---

१. सत्ताईस मात्रावाले सब वृत्तों में छठा गण एक लघु का मान लिया जाता है। अतः यहाँ 'य' एक लघु वर्ण का ही छठा गण है।

२. देखो टिप्पणी तीसरी।

---

* आर्यागीति (खंधा) के सत्ताईस भेद हैं :—

राजसेना

णंदउ भद्दउ सेस सरंग,

सिव बंभ बारण वरुण,

सम (दूसरे चौथे) चरणों में बीस-बीस मात्राएँ होती हैं। चरणान्त में गुरु रहता है। विषम (पहले, तीसरे, पाँचवें, सातवें) गणों (चौकलों) में जगण का निषेध है :—

(१)

स्वामि सहित सीता ने, नन्दन माना सघन कानन भी।
वन उर्मिला बधू ने, किया उन्हीं के हितार्थ निज उपवन भी ॥

—साकेत

(२)

स्त्री चिन्ता की सीमा, बहुत हुई तो द्वार देहरी तक है।
अगणित चिन्ताओं से, घूमा करता पुरुषों का मस्तक है ॥

—चन्द्रहास

णीलु मअण तालंक सेहरु
सरु गअणु सरहु बिमई,
खीर णअणु णरु णिद्ध णेहलु।
मअगलु भोअलु सुद्ध सरि
कुंभ कलस ससि जाण।
सरह सेम ससहर गुणहु
सत्ताइस खंधाण ॥

—प्रा० पिं०

अर्थात् नंद, भद्र, शेष, सारंग, शिव, ब्रह्मा, वारण, वरुण, नील मदनताडंक, शेखर, शर, गगन, शरभ, विमति, क्षीर, नगर, नर, स्निग्ध, स्नेहल, मदकल, लोल, शुद्ध, सरि, कुंभ, कलश, और शशि ये सत्ताईस भेद खन्धान (आर्यागीति) के हैं।

गाहिनी और सिंहनी*

गाहिनी

इसके विषम (पहले-तीसरे) चरणों में बारह-बारह, दूसरे चरण में अठारह और चौथे चरण में बीस मात्राएँ रहती हैं। चरणान्त में गुरु रहता है प्रत्येक दल में मात्राओं के पश्चात जगण रहता है :-

न कुछ कह सकी अपनी, न उन्हीं को पूछ मैं सकी भय से,
अपने को भूले वे, मेरी ही कह उठे सखेद हृदय से॥

—साकेत

---

* पुब्बद्ध तीस मत्ता
पिंगल पभणेइ मुद्धिणि सुणेहि ।
उत्तद्धे बत्तीसा
गाहिनि बिबरीअ सिंहिणी भणु सच्चं ॥

—प्रा० पिं०

अनुवाद

पूर्वार्द्धे त्रिंशन्मात्राः पिंगलो भणति हे मुग्धे शृणु ।
उत्तरार्द्धे द्वात्रिंशद् गाहिनी, विपरीतां सिंहनीं भणंति सर्वे ॥
अर्थात् गाहिनी का उलटा सिंहिनी छन्द होता है ।

सिंहिनी

इसके विषम (पहले-तीसरे) चरणों में बारह-बारह, दूसरे चरण में बीस और चौथे में अठारह मात्राएँ रहती हैं। चरणान्त में गुरु रहता है। प्रत्येक दल में बीस-बीस मात्राओं के पश्चात् जगण रहता है:—

राम हमैं हू तारौ, तुम बहु पातकीन कौ करौ उबारौ।
इतनौ नैक बिचारौ, अपने मुख सों आपनौ उचारौ॥

—गदाधर

वर्ण-वृत्त

सम

१ वर्ण के छन्द—२

श्री*

(ग)

सी, धी। री, धी॥

—रामचन्द्रिका

*जितने वर्णों का छन्द है आरंभ में शीर्षक दे दिया है। उस शीर्षक के भीतर उतने ही वर्णों के छन्द समझने चाहिएँ। इसी तरह छन्दों की विस्तृत परिभाषाएँ न लिखकर गुरु, लघु और वर्णिक गणों के आदि के सांकेतिक अक्षर दे दिये हैं। कितने वर्णों पर विराम होगा, इसके लिए अंकों में संख्या देदी गई है और दूसरे नाम कोष्ट में दे दिए गये हैं। उदाहरणार्थ 'इन्दिरा वृत्त', का लक्षण यों लिखा गया है।

इन्दिरा (कनक मंजरी)

(न र र ल ग) ६, ५

इसी की विस्तृत परिभाषा यों हो जाती है:—

नगण (।।।), रगण (ऽ।ऽ), रगण (ऽ।ऽ), लघु (।) और गुरु (ऽ) के क्रम से ग्यारह वर्ण का 'इन्दिरा' अथवा कनक-मंजरी वृत्त होता है; छः और पाँच वर्णों पर विराम रहता है।

(११ वर्ण के छन्दों के उदाहरण देखो।)

२ वर्ण के छन्द—४

कामा

(ग ग)

ध्याये, राधा । त्यागे, बाधा ॥

—मान

महि

(ल ग)

सबै, तजौ । हरी भजौ ॥

—कन्हैयालाल मिश्र

सार

(ग ल)

(१)

राम, नाम । सत्य धाम ॥

(२)

और, नाम । को न, काम ॥

—रामचन्द्रिका

मधु

(ल ल)

छल, तज । हर, भज ॥

—कन्हैयालाल मिश्र

३ वर्ण के छन्द—८

नारी (ताली)

(म*)

रागी सो, रोगी है। त्यागी सो, योगी है।

—मान

शशी

(य)

दुखी को ?, कुपंथी। सुखी को ?, सुपंथी॥

—मान

प्रिया

(र)

त्यागिये, काम को। ध्याइये, श्याम को।

—मान

रमण

(१)

जग है, सपना। कब है अपना।

(२)

दुख क्यों, टरि है। हरिजू, हरि है॥

—रामचंद्रिका

---

* यहाँ 'म' मगण का बोधक है। इसी प्रकार आगे सभी छन्दों में 'ल' लघु का 'ग' गुरु का और उनके अतिरिक्त वर्ण अपने गण के बोधक हैं।

पंचाल

(त)

जो धीर । सो बीर ।
जो दीन । सो हीन ॥

—मान

मृगेन्द्र

(ज)

कृपालु, दयालु ।
उमेश, रमेश ॥

—मान

मंदर

(भ)

गावहिं, रामहिं ।
पावहिं, धामहिं ॥

—गदाधर

कमल

(न)

कमल, नयन ।
शरण, भय न ॥

—मान

५ वर्ण के छन्द–३२

गंभीरा (रति)

(स ल ग)

सुखकंद हैं । रघुनंद जू ।
जग यों कहै । जग बंद जू ।।

—रामचन्द्रिका

हारी

(त ग ग)

गोपाल आओ । गीता सुनाओ ।
वीरत्व जागे । क्लीवत्व भागे ।।

—मान

हंस (पंक्ती)

सूरज बानी । सो सब मानी ।
कूच करायो । देर न लायो ।।

—सुजान चरित्र

जम्बूनद (यशोदा)

(ज ग ग)

दगा न दोगे । सुखी रहोगे ।
भला करोगे । भला भरोगे ।

—मान

रमल

(र ल ल)

बाँसुरी सुर । बेधि कै उर ।
साथ लै मन । जातु है बन ॥

—सुमनेस

यपक

(न ल ल)

हरि भजहु । छल तजहु ।
सरन गहु । मगन रहु ॥

६ वर्ण के छन्द—६४

शेषराज (विद्युल्लेखा)

(म म)

श्यामै श्यामै ध्यावै । सो नौ निद्धै पावै ।
जानो साधो सोई । छाँड़ो माया मोही ॥

—हरदेव

सोमराजी (शंखनारी)

(य य)

गुनो एक रूपी, सुनो वेद गावैं ।
महादेव जाको, सदा चित्त लावैं ॥

—रामचन्द्रिका

विजोहा (विमोहा, जोहा, विज्जोहा)

(र र)

शंभु को दण्ड दै। राजपुत्री जितै।
टूक द्वै तीन कै। जाहुँ लंकाहि लै॥

—रामचन्द्रिका

तिलका (तिल्ला, तिल्लना)

(स स)

हरि को जु भजे। खल संग तजे।
सब काज सरे। भव-सिंधु तरे॥

—गदाधर

मंथान

(त त)

बाणी कही जान। कीन्हीं न सो कान।
अद्यापि आनी न। रे बंदि कानीन॥

—रामचन्द्रिका

मालती

(ज ज)

जपो नित नाम। रमापति राम।
कटै दुख द्वन्द। बढ़ै सुखकंद॥

—हरदेव

मोहन

(स ज)

जन राजवंत । जग योगवंत ।
तिन को उदोत । केहि भाँति होत ।।

—रामचन्द्र

अपरभा

(ज स)

दुखी जनन को । सुखी करन को ।
हरी अवतरैं । धरा दुख हरैं ।।

—भाँ

शशिवदना (चण्डरसा)

(न य)

शुभ सर शोभै । मुनि मन लोभै ।
सरसिज फूले । अलि रस भूले ।।

—रामचन्द्र

७ वर्ण के छन्द—१२८

शीर्षरूप (शिष्या)

(म म ग)

शुद्धात्मा था ज्ञानी था । प्राणों का भी दानी था ।
ऊँचा हिन्दू पानी था । राणा सच्चा मानी था ।।

मदलेखा

(म स ग)

मैला चित्त न राखे। झूठी बात न भाखे।
सच्चा है तप ये ही। मानो बात सनेही॥

—मान

समानिका

(र ज ग)

देखि देखि कै सभा। विप्र मोहियो प्रभा।
राज-मण्डली लसे। देव-लोक को हँसे॥

—रामचन्द्रिका

कुमार ललिता

(ज स ग)

विरंचि गुण देखैं। गिरा गुणनि लेखैं।
अनंत मुख गावैं। विशेषहिं न पावैं॥

—रामचन्द्रिका

करहंस (करहंच, वीर वर)

(न स ल)

इक दिवस अंत। भज मन अनंत।
शरण भगवन्त। रहत सब संत॥

—गदाधर

मधुमती

(न न ग)

भव-भय हरना। असरन सरना।
हरि गुरु चरना। निसि दिन ररना॥

—मान

सुवास (सवासन)

(न ज ल)

सब सुख धामहिं । रट मन रामहिं ।
तज जग कामहिं । लहहु अरामहिं ।।

८ वर्ण के छन्द—२५६

विद्युन्माला

(म म ग ग) ४, ४

मोहै, द्रोहे, कोहै, कामैं । नासै की है शक्ती जामैं ।
राधे-कृष्णा गाओ गाओ । निश्चै साधो मुक्ती पाओ ।।

मल्लिका (समानी)

(र ज ग ल)

(१)

देश देश के नरेश । शोभिजै सबै सुवेश ।
जानिये न आदि अंत । कौन दास कौन संत ।।

—रामचन्द्रि

(२)

बोलि यों मराल राज । साजि कै दुहूँ सुकाज ।
माँगि कै विदा विनोद । जाति भो विरंचि कोद ।।

—नैषधका

नगस्वरूपिणी (प्रमाणिका, प्रमाणी)

(ज र ल ग)

(१)

सुनो न ज्ञान कारिका। शुकी पढ़ैं न सारिका।
न होम धूम देखिये। न गंध बंधु पेखिये॥

—केशव

(२)

नमामि भक्त वत्सलं। कृपालु शील कोमलं।
नमामि ते पदाम्बुजं। अकामिनां स्वधामदम्॥

—रामचरितमानस

कुमार ललिता† (कुमार लहरी)

(ज स ल ग)

(१)

रटो जु नँद नंद को। तजो जु भव फंद को।
हरो जु दुख द्वंद को। भजो जु सुख कंद को॥

—गदाधर

(२)

भजो जु ब्रजचंद को। तजो जु दुख द्वन्द को।
सजो जु सुख कंद को। लहो बहु अनन्द को॥

—कन्हैयालाल

---

† कोई कोई 'ज स ग' के क्रम से इसे सात वर्ण का मानते हैं।

(३)

हमें तब बरै यहै । प्रभुत्व जब तो लहै ।
न दीठि यहु धौं परै । सु कौन चरचा करै ॥

—गुमान मिश्र

चित्रपदा

(भ भ ग ग)

सीय जहीं पहिराई । रामहिं माल सोहाई ।
दुंदुभि देव बजाये । फूल तहीं बरसाये ॥

—रामचन्द्रिका

तुरंगम (तुंग)

(न न ग ग)

बहुत बदन जाके । बिबिधि बचन ताके ।
बहु भुजयुत जोई । सबल कहिय सोई ॥

—रामचन्द्रिका

पद्म (कमल, मान, क्रीड़ा)

(न स ल ग)

(१)

हरि हर ररो ररो । भव-नद तरो तरो ।
दुख दल दरो दरो । सुख भल भरो भरो ॥

—हरदेव

दुरद

(ज ज ग ग)

भलो महराज ह्वै है। विजै हरदेव दैहै॥
करौ तदबीर सोई। नहीं अब ढील होई॥

—सुजान चरित्र

माणवक (माणव का क्रीड़)

(भ त ल ग) ४, ४

पालक गो विप्रन को। शालक है शत्रुन को।
शत्रु अनी, पच्छिन को। बाज-सिवा दच्छिन को॥

—मान

नराचिका

(त र ल ग)

हो बात सत्य सो कहे। पै स्नेह में सनी रहे।
पाले सदा स्वधर्म को। औ मानवीय-कर्म को॥

—मान

दिगीश (ईश)

(स ज ग ग)

बर मैं गुपाल मागौं। पद-पद्म प्रेम पागौं।
हर ध्याइ जो अनन्दै। दिग ईस जाहि बन्दै॥

—दास

वितान

(स भ ग ग)

अपनी ही हठ ठाने। पर की बात न माने।
वह है मूरख मानी। निहचै लो यह जानी॥

—मान

९ वर्ण के छन्द—५१२

पाईता

(म भ स)

ताके दोनों कुल गनिये। औ दोनों लोचन मनिये।
जो ते नारी गुण गनियौ। सो हैं लागे श्रुति सुनियो॥

—नैषधकाव्य

बिम्ब

(न स य)

फल अधर बिंब जासो। कहि अधर नाम तासों।
लहत द्युति कौन मूँगा। बरणि जग होत गूँगा॥

—नैषधकाव्य

रतिपद (कमला, कुसुद)

(न न स)

दरस मिलत रबि सों। तपति गहत छबि सों।
परसि परसि हम कों। शशि बढ़त तम कों॥

—नैषधकाव्य

सारंगिका

(न य स)

यतन करी ही रचि कै। सुरपति काजै सचि कै।
तेहि पर यों सोचति हौ। तुम न मृषा रोचति हौ॥

—नैषधकाव्य

महालक्ष्मी

(र र र)

जंग कै हौं दिली सैं करौं। नेसनाबूद बैरी करौं।
नाहिं तौ सीस टोपी धरौं। हाल ही जाइ मक्कै मरौं॥

—सुजानचरित्र

मणिबन्ध (मणिमध्या)

(भ म स)

आपुहि राख्यो जो न चहै। कर्म लिख्यो तौ पाइ रहै।
कर्महिं लागै हाथ सोऊ। जो मनि बाँध्यो गाँठि कोऊ॥

—दास

हलमुखी

(र न स) ३, ६

धन्य जन्म निज कहती। प्राण वार तहि रहती।
देखि ख्वारि लहि सुख को। मैन गर्व हर मुख को॥

—दास

भुजग शशिभृता (भुजग शुभ्रता, भुजग शिशुसुता युक्ता)

(न न म) ७, २

दुख पर दुख भी पाओ। पर सत-पथ ही जाओ।
भव-भय-हर को ध्याओ। अनत न चित ले जाओ॥

—मान

१० वर्ण के छन्द—१०२४

संयुत (संयुक्ता)

(स ज ज ग)

(१)

हनुमंत लंकहि लाइ कै। पुनि पूँछ सिंधु बुझाइ कै।
शुभ देखि सीतहि पाँ परे। मनि पाइ आनँद जी भरे॥

—रामचन्द्रिका

सारवती

(भ भ भ ग)

लक्ष्मण हाथ हथ्यार धरो। यज्ञ वृथा प्रभु को न करो।
हौं हय को कबहूँ न तजौं। पट्ट लिख्यो सोइ बाँचि लजौं॥

—रामचन्द्रिका

अमृत गति (त्वरित गतिः)

(न ज न ग) ५, ५

सुमति महा मुनि सुनिये। जग महँ सुक्ख न गुनिये।
मरणहिं जीव न तजहीं। मरि मरि जन्म न भजहीं॥

—रामचन्द्रिका

वामा (सुषमा)

(त य भ ग) २, ८

दीनों-दुखियों से प्रेम करे। सेवा करने का नेम धरे।
आये दिन कष्टों से न डरे। भाखे न कभी यों 'हाय मरे'॥

—मान

चम्पक माला (रुक्मवती)

(भ म स ग) ५, ५

याचक है तेरे हम आये। देखत ही चारौ फल पाये।
मारग को आयासु बितावैं। कारज को तौ आपु बतावैं॥

—नैषधकाव्य

कीर्ति

(स स स ग)

अब देव सँदेस न भाखौ। यह दंतकथा धरि राखौ॥
हम माँगत अंजलि जोरे। यह बोलि रही मुख मोरे॥

—नैषधकाव्य

मनोरमा (सुंदरी)

(न र ज ग) ६, ४

समय-साधता सुधी वही। समय-साध ना कुधी वही।
बचन पालता व्रती वही। वच न पालता व्रती नहीं॥

—मान

प्रत्ता

(म भ स ग) ४, ६

मोमें होवे अवगुण कोई। काटो, केशो सुमिरहुँ तोही।
रामा कृष्णा प्रभु कह जोई। होवे ऊँचा सब पर सोही॥

—गदाधर

शुद्ध विराट्

(म स ज ग)

हे शंभो ! भव-यातना हरो। जी में ये शुभ-भावना भरो।
दीनों के हित में लगा रहूँ। जीते जी सब का सगा रहूँ॥

—मान

मयूर सारिणी (मयूरी)

(र ज र ग)

दीनबंधु दीनबन्धु रामें। रामचन्द्र रामचन्द्र नामें।
कृष्णचन्द्र, कृष्णचन्द्र-धामें। कीजिये सदा सदा प्रणामें॥

—गदाधर

उपस्थिता

(त ज ज ग) २, ८

बीरा करुणाकर सागरं। धीरा कमलापति आगरं।
बंशीधर बामन नागरं। धाता धन धाम उजागरं॥

—गदाधर

पणव

(म न ज ग)

पूर्णानन्दहि हित जो भजै। देवाधीशहि मन से सजै।
क्रोधै कामहि छिन में तजै। ताके ही घर पटहा बजै॥

—गदाधर

११ वर्ण के छन्द—२० ४८

शालिनी *

(म त त ग ग) ४, ७

धामै-धामै, रत्न-वेदी सुहावैं।
वेदी-वेदी, भक्त संवाद भावैं॥
वादै ही सों, बोध चित्तै प्रकासै।
बोधै पाये, शंभु की मूर्त्ति भासै॥

—पूर्ण

(२)

कैसी कैसी, ठोकरें खा रहे हो।
कैसी कैसी, यातना पा रहे हो॥
तो भी हा ! हा !! गीत क्या गा रहे हो?
चेतो मित्रो ! हा ! कहाँ जा रहे हो?

—मान

---

* शालिनी और इन्द्रवज्रा के योग से 'मुक्ति' उपजाति बनता है। उपजाति प्रकरण में देखो।

इन्दिरा (कनक मंजरी)

(न र र ल ग) ६, ५

(१)

महर नंद का, पुत्र तू नहीं ।
निखिल सृष्टि का, साक्षि रूप है ॥
उदित है हुआ, वृष्णि-वंश में ।
व्यथित विश्व के, त्राण के लिये ॥

(२)

तव सुधा-मयी, प्रेम-जीवनी ।
अघ-निवारिणी, क्लेश-हारिणी ॥
श्रवण-सौख्यदा, विश्व-तारिणी ।
मुदित गा रहे; धीर अग्रणी ॥

—श्रीधर पाठक

दोधक (नील स्वरूपा, वन्धु)

(भ भ भ ग ग)

देखि फिरो सगरो जग मैं हूँ ।
जानत है मन की गति तैं हूँ ॥
देखि परयो न कहूँ प्रभु तो सों ।
दीनदयालु न दीन न मो सों ॥

—हरदेव

स्वागता (गंगाधर)

(र न भ ग ग)

राज राज दशरत्थ तनै जू ।
रामचन्द्र भुवचन्द्र बनै जू ॥
त्यों विदेह तुम हू अरु सीता ।
ज्यों चकोर तनया शुभ गीता ॥

—रामचन्द्रिका

मोटनक (मोटक)

(त ज ज ल ग)

सो हैं घन स्यामल घोर घनं ।
मोहैं तिन में बक-पाँति मनैं ॥
संखावलि पी बहुधा जल स्यों ।
मानो तिन को उगिलै बल स्यों ॥

—रामचन्द्रिका

अनुकूला

(भ त न ग ग)

पावक पूज्यो समिध सुधारी ।
आहुति दीनी सब सुखकारी ॥
दै तब कन्या बहु धन दीन्हों ।
भाँवरि पारि जगत् जस लीन्हों ॥

—रामचन्द्रिका

सुमुखी

(त ज ज ल ग)

सब नगरी बहु सोभ रये।
जहँ तहँ मंगलचार ठये॥
बरनत हैं कविराज बने।
तन मन बुद्धि विवेक सने॥

—रामचन्द्रिका

रथोद्धता

(र न र ल ग)

(१)

चित्रकूट तब राम जू तज्यो।
जाय यज्ञ थल अत्रि को भज्यो॥
राम लक्ष्मण समेत देखियो।
आपनो सफल जन्म लेखियो॥

—रामचन्द्रिका

(२)

कौशलेन्द्र पदकंज मंजुलौ।
कोमलाम्बुज महेश वंदितौ॥
जानकी कर सरोज लालितौ।
चिंतकस्यमनभृंग संगिनौ॥

—रामचरित मानस

भुजंगी

(य य य ल ग)

(१)

बड़ाई न बाँटी बड़ों के लिये।
कड़ी तान ली टुकड़ों के लिये॥
समालोचको नम्रता धारिये।
महावीरता यों न विस्तारिये॥

—नाथूराम शंकर शर्मा

(२)

नहीं लालसा है विभो! वित्त की।
हमें चेतना चाहिये चित्त की॥
भले ही न दो एक भी सम्पदा।
रहे आत्म-विश्वास पूरा सदा॥

—मैथिलशरण गुप्त

कली (हाकलिका)

(भ भ भ ल ग)

शोभत दण्डक की रुचि बनी।
भाँतिन भाँतिन सुंदर घनी॥
सेव बड़े नृप की जनु लसै।
श्रीफल भूरि भयो जहँ बसै॥

—रामचन्द्रिका

श्येनिका

(र ज र ल ग)

आठ ओर आठ दीठि दै रह्यौ।
लोकनाथ आश्चर्य वै रह्यो॥
भूलि विश्व कर्म हू सु-चातुरी।
राजथान देखि चित्त आतुरी॥

—नैषधकाव्य

विध्वंक माला (धीर)

(त त त ग ग) ६, ५

योद्धा भगे वीर, शत्रुघ्न आये।
कोदण्ड लीन्हें, महा रोष छाये॥
ठाढ़ो तहाँ एक, बालै विलोक्यो।
रोक्यो तहीं जोर, नाराच मोक्यो॥

—रामचन्द्रिका

इन्द्रवज्रा

(त त ज ग ग)

(१)

पाके तुम्हें शेष न और पाना।
हो क्योंकि, सारे सुख का खजाना॥
होते तुम्हीं से नर पूर्ण काम।
हे रौप्य-मुद्रे ! तुझको प्रणाम॥

—मैथिलीशरण गुप्त

(२)

तेजस्वियो ! तेज़ ज़रा दिखादो ।
सच्छास्त्र विद्या सब को सिखा दो ॥
जो सो रहे हैं उनको जगा दो ।
आलस्य सारा उनका भगा दो ।

—गिरधर शर्मा

उपेन्द्रवज्रा*

(ज त ज ग ग)

(१)

बड़ा कि छोटा कुछ काम कीजै ।
परन्तु पूर्वापर सोच लीजै ॥
बिना विचारे यदि काम होगा ।
कभी न अच्छा परिणाम होगा ॥

—मैथिलीशरण गुप्त

(२)

बलाभिमानी धरणी धनेश ।
कहो कहाँ हैं अब वे जनेश ?
चले गये हैं सब आप आप ।
हुआ न दो ही दिन का प्रताप ॥

—मैथिलीशरण गुप्त

* इन्द्रवज़ा और उपेन्द्रवज़ा के मेल से चौदह उपजाति छन्द बनते हैं, उपजाति प्रकरण में इन्हें देखिये ।

वातोर्मि *

(म भ त ग ग) ४, ७

राका बोली, शशि से नाथ आओ।
मेरे काले, कच तो गूँथ जाओ॥
फूलों को ला, उनमें ही सजाओ।
मेरे जी में, रस-धारा बहाओ॥

—गिरीश

उपस्थित

(ज स त ग ग) ६, ५

प्रमाद उर में, मैं ही भरूँगा।
प्रसाद मन का, मैं ही हरूँगा॥
विषाद जग में, मैं ही धरूँगा।
विमुक्त उस से, मैं ही करूँगा॥

—गिरीश

पथस्थित

(त ज ज ग ग)

पाखंड न छू हम को गया था।
थे चित्त सनेह-सने हमारे॥

---

* वातोर्मि और शालिनी के योग से 'द्विज' उपजाति बनता है। उपजाति प्रकरण में देखो।

हैं आज न तौर न वे तरीके ।
हा ! हा ! अब वे दिन ही हवा हैं ॥

—मान

भ्रमर विलसिता

(म भ न ल ग) ४, ७

तेरा मेरा, यह सब सपना ।
माया को तू, समझ न अपना ।
हो जी में हो, भव-नद तरना ।
तो तू प्यारे, हरि-हर ररना ॥

—मान

गगन

(स स स ग ग)

वह भी दिन थे जब थे त्यागी ।
अब तो हम हैं गहरे रागी ॥
मन से शुचिता, समता भागी ।
ह ! ह ! मोह-मयी-ममता जागी ॥

—मान

शील

(स स स ल ल)

फटके भय पास न रे मन !
घर हो अथवा बन निर्जन ।

निज लक्ष न भूल कभी क्षण !
पर-काज लगा अपना तन !!

—मान

चपला

(त भ ज ल ग)

साथी न धैर्य यदि हो अपना।
तो लक्ष्य-सिद्ध समझो सपना ।।
हाँ, कीर्ति प्राप्त नर वे करते।
निश्शंक जोकि जग में चरते ।।

—मान

श्री पति

(भ भ न ग ल)

मोहन हे! जब द्रवत आप ।
मोह न द्रोह न रहत पाप।
हैं मिटते सब कठिन ताप।
भूल नहीं लग सकत शाप।

—मान

१२ वर्ण के छन्द—४०९६

मोदक

(भ भ भ भ)

राज तज्यो धन धाम तज्यो सब ।
नारि तजी सुत सोच तज्यो तब ॥

आपनपौ जु तज्यो जग बंद है।
सत्य न एक तज्यो हरिचंद है॥

—रामचन्द्रिका

तोटक (त्रोटक)

(स स स स)

जय राम सदा सुखधाम हरे।
रघुनायक सायक चाप धरे॥
भव-वारण दारण सिंह प्रभो।
गुण-सागर नागर नाथ विभो !!

—रामचरित मानस

(२)

तप में तनु-दाहक चण्ड हुए।
हिम की ऋतु में हिम-खण्ड हुए॥
कुछ भी सुविचार किया न अरे!
तुम आखिर पत्थर ही ठहरे॥

—मैथिलीशरण गुप्त

स्रग्विणी (लक्ष्मीधर, शृंगारिणी, कामनी, मोहन)

(र र र र)

राम आगे चले मध्य सीता चली।
बंधु पाछे भये सोभ सो भै भली॥

देखि देही सबै कोटिधा कै भनो ।
जीव जीवेश के बीच माया मनो ॥

—रामचन्द्रिका

तामरस

(न ज ज य)

जब सब वेद पुरान नसैहैं ।
जप तप तीरथ हू मिटि जैहैं ॥
द्विज सुरभी नहिं कोउ बिचारै ।
तब जग केवल नाम अधारै ॥

—रामचन्द्रिका

प्रमिताक्षरा

(स ज स स)

अब भी समक्ष वह नाथ खड़े ।
बढ़ किन्तु रिक्त यह हाथ पड़े ॥
न वियोग है न यह योग सखी ।
कह कौन भाग्य मम भोग सखी ॥

—साकेत

भुजंग प्रयात

(य य य य)

(१)

कहूँ किन्नरी किन्नरी लै बजावैं ।
सुरी आसुरी बाँसुरी गीत गावैं ॥

कहूँ पद्मिणी पद्मिणी लै पढ़ावैं।
नगी कन्यका पन्नगी को नचावैं॥

—रामचन्द्रिका

(२)

चतुर्वर्ग-धामं चतुर्धाम-धन्यम्।
चतुर्धर्म-वर्णाश्रमाणां शरण्यम्॥
चतुर्दिक्षु-रम्य-स्थली-भूरि पुण्यम्।
भजे-भू-शिरो-भूषणं भू वरेण्यम्॥

—भारतगीत

इन्द्रवंशा*

(त त ज र)

योंही बड़ा हेतु हुए बिना कहीं।
होते बड़े लोग कठोर यों नहीं।
वे हेतु भी यों रहते सुगुप्त हैं।
जो अद्रि अंभोनिधि में प्रलुप्त हैं॥

—चन्द्रदास

वंशस्थविलम्

(ज त ज र)

मुकुन्द चाहें यदुवंश के बने।
रहें सदा या वह गोप वंश के॥

* इन्द्रवंशा और वंशस्थ विलम् के मेल से अनेक उपजाति छन्द बनते हैं, उपजाति छन्दों में देखो।

न तो सकेंगे व्रज-भूमि भूलि वे।
न भूलि देगी व्रज-मेदिनी उन्हें।

—हरिऔध

(२)

बना रहे प्रेम सदा स्व-देश का,
तथा रहे ध्यान सदा स्व-वेश का।
बुरा हमारा न प्रभो चरित्र हो,
विचार-धारा अति ही पवित्र हो॥

—मणिराम गुप्त

द्रुतविलंबित (सुंदरी)

(न भ भ र)

(१)

ठुमुकते गिरते पड़ते हुए,
जननि के कर की उँगली गहे।
सदन में चलते जब श्याम थे,
उमड़ता तब हर्ष-पयोधि था॥

—प्रिय-प्रवास

(२)

जय रमापति श्री पति धी विधे।
जगत-जीवन श्री करुणानिधे॥
जन न जानत ताप-त्रयी कहाँ ?
सतत रक्षत आप खड़े जहाँ॥

—'सिरस'

मोतियदाम

(ज ज ज ज)

(१)

अदेवन की उर-आनि अनीति।
निवाहन को सुर-पालन-रीति॥
सुधारन को जन को अधिकार।
धरयो हरि बामन को अवतार॥

—पूर्ण

(२)

तमाल के ऊपर है बक पाँति।
कि नील शिला पर संत जमाति॥
नक्षत्रनि अंक लिये घनश्याम।
कि श्याम हिये पर मोतियदाम॥

—भिखारी दास

(३)

गिरे चरणों पर थे कपिनाथ।
उठा अपने कर से भुज थाम॥
लगा उरसे उर को कर प्यार।
मिले कपिनायक से सुख-धाम॥

'सेत'

कुसुम विचित्रा

(न य न य) ६, ६

जब कवि-राजा रघुपति देखे।
मन नर-नारायण सम लेखे॥
द्विज-बपु कै श्री हनुमत आये।
बहु बिधि दै आशिष मन भाये॥

--रामचन्द्रिका

चन्द्रवर्त्म

(र न भ स)

स्नान दान तप जाप जो करियो।
सोधि सोधि उर माँझ जो धरियो॥
जोंग जाग हम जा लगि गहियो।
रामचन्द्र सबको फल लहियो॥

--रामचन्द्रिका

वारिधर

(र न भ भ)

राजपुत्रि यक बात सुनौ पुनि।
रामचन्द्र मन माँह कही गुनि॥
राति दीह जमराज जनी जनु।
जातनानि तन जानत कै मनु॥

--रामचन्द्रिका

गौरी

(त ज ज य)

(१)

तातें ऋषिराज सबै तुम छाँड़ौ।
भूदेव सनाढ्यन के पद माँड़ौ॥
दीन्हों तिनको तुमही बरु रूरो।
चौहूँ युग होय तपोबल पूरौ॥

(२)

सुग्रीव कहा तुमसों रण माँड़ौ।
तोकों अति कायर जानि कै छाँड़ौं॥
बाली सब तो कहँ नाच नचायो।
तौ ह्याँ रन मंडन मोसन आयो॥

--रामचन्द्रिका

सारंग (मेनावली)

(त त त त)

जो जीव के दान को देत संसार।
तौ आपनो जीव दैहौं तु उद्धार॥
तू देतु है मोहि को जीव ते बाढ़ि।
हौं देउँ का तोहि दारिद्र सो डाढ़ि॥

—नैषधकाव्य

मोहन

(भ न ज य)

देखहु भरत चमू सजि आये।
जानि अबल हमको उठि धाये॥
हींसत हम बहु वारन गाजे।
दीरघ जहँ तहँ दुंदुभि बाजे॥

—रामचन्द्रिका

मंदाकिनी

(न न र र) ८, ४

कुमुद विसुद देख री भामिनी।
गत सकल विलोक री यामिनी॥
उड़ गण उड़ से गये व्योम से।
फ़ट हृदय गया महा शोक से॥

—गिरीश

मालती (यमुना)

(न ज ज र) ७, ५

अहह ! यही वह, धर्म-भूमि है।
अहह ! यही वह, कर्म-भूमि है ?
अब हम में वह, जान है कहाँ ?
अब हम में वह, आन है कहाँ ?

—मान

शैल

(य थ य ज)

उमानाथ सा नाथ कोई न और।
नहीं शान्तिदा है कहीं और ठौर॥
सदानंद की है नहीं और मुक्ति।
इन्हीं के भजे से मिले भुक्ति मुक्ति॥

—मान

प्रभा

(न न र र)

मधुरिपु मधु सूदना माधवा।
हरि प्रभु अज वामना साधवा॥
सब जग सुख में सुनो यादवा।
तुम सब दुख के अहो बाधवा॥

—गदाधर

नव मालिती (बन मालिका)

(न ज भ य) ८, ४

रघुपति दीनबन्धु मम स्वामी।
निज पद प्रीति देहु प्रभु नामी॥
हर करि घोर अंश अविवेकू।
कब करिहौ हमार सुधि नेकू॥

—गदाधर

प्रियम्वदा

(न भ ज र)

तुरत ही करत मान खंडना।
दनुज नाश कर सन्त मंडना॥
अधिक शोक हर लोक सोहना।
परम सुंदर त्रिलोक मोहना॥

—गदाधर

उज्वल

(न न भ र)

कमल-नयन पावन राम को।
जलधि-शयन गोकुल-धाम को॥
सुगति करन मोहन श्याम को।
भजन करहु सोहन नाम को॥

—गदाधर

मधुर गति

(न न स स)

गगन-सघन-घन छाय रहे।
रिमि-झिमि जल बरसाय रहे॥
कलित-ललित-लतिका लहरें।
मगन-मगन सब ही बहरें॥

—मान

ललिता

(त भ ज र)

सोहै बसंत सखि आज लाल के।
गोपी मुख लगि गुलाल लाल के॥
बाजै मृतंग धुनि छाय के रही।
गावे नचै सुनि सबै सु मैं कही॥

—गदाधर

मृदुगति

(न न न य)

घन उमड़ि घुमड़ि नभ छाये।
बरसत सरसत मन भाये॥
लाखियत चहुँ दिसि धुरवा हैं।
बन-बन कुहकत मुरवा हैं॥

—मान

तरल नयन

(न न न न) ६, ६

विघनहरन, भगत-सरन।
सरन सुखद, जलद-बरन॥
जगत-बिपिन, विपति हरन।
कमल-नयन, भजहु चरन॥

—कन्हैयालाल

श्रवण-प्रिय

(न न न र)

सत-जन-सतत कलपायगा।
खल-नर न वह कल पायगा॥
पर-हित-निरत तन जायगा।
मर कर अमर बन जायगा॥

—मान

विलास

(भ न य भ)

जीवन सफल उसी का है बस।
दे पर-हित अपना जो सर्वस॥
मान-सहित मरना श्रेयस्कर।
मान-रहित नर जीवे ज्यों खर॥

—मान

रमण

(ज र ज र)

जिसे न ध्यान जाति का न देश का।
जिसे न भान है स्वदेश-वेष का॥
महान नीच मातृ-भूमि भार है।
पशू समान ज़िंदगी असार है॥

—मान

धारी

(ज ज ज य)

मयूर पखा सिर सोभित नीको।
सुभाल सजो भल चंदन टीको॥
सुपीत-पटी बन-माल लसी है।
भली अधरान लसै बनसी है॥

—मान

नभ

(न य स स)

समर-धनी को सुख क्या! दुख क्या!!
अमर बने तो जय है, भय क्या?
नर-वर भागे न कभी रन से।
विचलित होता न कभी पन से॥

— मान

वासना

(न स ज र)

मन सरल-शुद्ध जो रहा करे।
दुख-अनल-बीच क्यों दहा करे॥
भुख-मरन अन्न जो दिया करे।
फल परम-पुण्य का लिया करे॥

—मान

जलोद्धति गति

(ज स ज स) ६, ६

असार जग को, स सार समझो।
प्रपंच लख के, उदास मत हो॥
डिगो न विचलो, चलो सँभल के।
प्रसन्न मन से, स्वधर्म-पथ में॥

—मान

प्रभासुखसार

(भ भ भ स)

देख घिरे दल-बादल दुख के-
वीर नहीं टुक धीरज तजते॥
देख रुकावट रंचक मग में-
कायर कंपित हों चल-दल से॥

—मान

द्रुतपदा *

(न भ ज य)

बचन-वीर जग में बहुतेरे।
करम-वीर बिरले कहुँ हेरे॥
धरम कर्म्म सन है मुख मोड़े।
सबन सत्य-श्रुति मारग छोड़े॥

—मान

* कोई कोई आचार्य 'न भ न य' के क्रम से द्रुतपदा मानते हैं।

रत्नविचित्रा

(न य स य)

अब न बिसारो घनश्याम प्यारे।
बहुत तुम्हारे बिन हैं दुखारे॥
दरस बिना है बहु काल बीता।
तनिक सुनाओ फिर नाथ गीता॥

—मान

कंठ भूषण

(म य य य)

बोलो बात जो सो सदा सत्य-सानी।
मीठी हो, खरी हो, गठी हो, प्रमानी।
त्यागी हो न रागी बनो स्वाभिमानी।
जायें प्राण ही किन्तु जाये न पानी॥

—मान

श्रीदाम

(भ न न स)

चाह न तनिक धनिक-रुख की।
चाह न सरग-वरग सुख की॥
चाह न धन-जन निज-पन की।
चाह फकत हरि-दरसन की॥

—मान

सुभगपुट (पुट)

(न न म य) ८, ४

चलकल तन पै हा ! वस्त्र धारे ।
बन-बन फिरते हैं पुत्र प्यारे ॥
उन बिन अब भी मैं जी रहा हूँ ।
अधम निलज हूँ पापी महा हूँ ॥

—मान

साधु

(न स त ज) ७, ५

रटन जिस के लागी सिय राम ।
मिलत निहचै वाको हरि धाम ॥
भजन बिन को जाता भव-पार ?
भजन इक है सच्चा सुख-सार ॥

—मान

तारिणी

(न स य स)

शुचि सरल चित्त में शान्ति रहे ।
तन निरुज पुष्ट हो कान्ति रहे ॥
मन अभय और निर्भ्रान्त रहे ।
सुखवलित झोपड़ी प्रान्त रहे ॥

—मान

१३ वर्ण के छन्द—८१९२

मंजु भाषणी

(स ज स ज ग)

चुप बैठ राम शुभ नाम लीजिए।
गुण-से अतीत-गुण-गान कीजिए॥
मत बाम दाम पर ध्यान दीजिए।
गत राग-द्वेष पय-प्रेम पीजिए॥

—गिरीश

कन्द

(य य य य ल)

कितै को धमंकी धमाधम्म बन्दूक।
कितै को गये लूकि के ते गये सूकि॥
कितै बीर दै तीर चीरैं घनी भीर।
मिलै छीर में छीर ज्यों नीर में नीर॥

—विनायक

(२)

फबै फैल कै छूट यों भाल पै वार।
जनो चंद पै चारसी बाल के तार॥
लसै बीच ठोढ़ी भलो सामरो बिन्दु।
मनो कंज पै सोभजै भौंर को नन्द॥

—हरदेव

तारक

(स स स स ग)

तुम ही जग हौ जग है तुम ही में।
तुम ही विरची मरजाद दुनी में॥
मरजादहिं छोड़त जानत जाको।
तब ही अवतार धरो तुम ताको॥

—रामचन्द्रिका

कलहंस (सिंहिनी, सिंहनाद, नन्दिनी)

(स ज स स ग)

हति इन्द्रजीत कहँ लक्ष्मण आये।
हँसि रामचन्द्र बहुधा उर लाए॥
सुनि मित्र पुत्र सुभ सोदर मेरे।
कहि कौन कौन सुमिरों गुन तेरे॥

—रामचन्द्रिका

पंकज वाटिका (कंज अवलि, पंकावली, एकावली)

(भ न ज ज ल)

सूरज चरण विभीषण के अति।
आपुहि भरत पखारि महामति॥
दुंदुभि धुनि करि कै बहु भेवनि।
पुष्प वरषि हरषे दिवि देवनि॥

—रामचन्द्रिका

माया

(म त य स ग) ४, ९

लीला ही सो, बासव जी में अनुरागौ।
तीनों लोकै, पालत नीके सुख पागौ॥
जो जो चाहो, सो तुम बासौं सब लीजो।
कीज मेरी, ओर कृपा सो सर भीजो॥

—नैषधकाव्य

विलासी

(भ त भ म ग) ५, ३, ५

कैसे भूलेंगी, लगी जो, गांसी सी बातें।
जी में शालें हैं, अभी भी, जो की थीं घातें॥
सच्चा मानी ही, लगाता, प्राणों की बाजी।
मीठा पानी ही, कराता, है हाँ-जी, हाँ-जी॥

—मान

चंचरीकावली

(य म र र ग) ६, ७

हर माधौ यादौ, बामना पूतनारी।
प्रभू कृष्णा, विष्णा, कंस के प्राण हारी॥
विभू रामा सीता, दास के सुक्ख कारी।
कला शोभा धारी, कूबरी दीन तारी॥

—गदाधर

राधा

(र त म य ग) ८, ५

भूल जाता जो दिये को, पुण्य सो पाता।
डूब जाता है उसीका, जो फिरे गाता॥
मातृ-भाषा मातृ-भू से, है जिन्हें नाता।
धन्य हैं वे गण्य हैं वे, मान्य हैं भ्राता॥

—मान

मनोरमा (राग)

(र ज र ज ग)

हैं महान मूढ़ ही चलें कुपंथ में।
बुद्धिमान जो चलें सदा सुपंथ में॥
वीर्यवान जान जो डरें न युद्ध से।
मित्र हैं वही मिलें जो चित्त शुद्ध से॥

—मान

प्रभावती

(त भ स ज ग) ४, ९

माधौ हरी, धरणि धरी कृपा करी।
यादौ दया करण अघासुरी अरी॥
वंशीधरी, तन-मन गोपिका हरी।
कीन्ही भली, गिरधर कुब्वरी बरी॥

—गदाधर

रुचिरा

(ज भ स ज ग) ४, ६

भजौ भजौ, मन ! अघ-ओघ-भंजने ।
रटौ रटौ, मन ! दुख-दोष-गंजने ॥
कहौ कहौ, मन ! हरि नेत्र-कंजने ।
कहौ गहौ, मन ! तुम भक्त-रंजने ॥

—गदाधर

चण्डी

(त न स स ग)

जय जग-जननि हिमालय-कन्या ।
जयति जयति जय शक्ति सु-धन्या ॥
कलुष कुमति मद-मत्सर खण्डी ।
जयति जयति जन-तारणि चण्डी ॥

—भिखारीदास

चन्द्ररेखा

(न स र र ग) ६, ७

बुध वह लखे, देश को काल को जो ।
शठ निज तजे, चाल को ढालको सो ॥
सदय जन ही, दीन को मानते हैं ।
निरदय नहीं, दर्द को जानते हैं ॥

—मान

चन्द्रिका

(न न त त ग) ७, ६

कुरब-कलरवौ हू करै बोलि कै।
द्विरद गति हरै, मंद ही डोलि कै॥
दशन द्युति लजीली करै दामिनी।
हसनि सन जितै, चन्द्रिका भामिनी॥

—भिखारीदास

पुष्पमाला

(न न र र ग) ९, ४

मन-क्रम-बच-से बने, राम का जो।
निसि-दिन जप भी करे, नाम का जो॥
भव-निधि चट पार हो जायगा सो।
परम-सुखद मोक्ष भी, पायगा सो॥

—मान

मध्य

(न न न न ग)

धरम-करम कछु बनत नहीं।
पर-हित महँ मन लगत नहीं॥
हरि-हर-गुरु-पद भजत नहीं।
वह नर भव-निधि तरत नहीं॥

—मान

रमाबिलास

(र र र र ग)

अम्बिके ! अन्नपूर्णे ! उमे ! कालिका हे !
दुष्ट की घालिका, सृष्टि की पालिका हे !
चण्डिके ! शैलजे ! देवि ! दुर्गे भवानी।
'मान' के 'मान' को रक्ष हे शुभ-रानी॥

—मान

चंपकली

(ज ज ज ज ग) ५, ८

करे न कभी, नर काम निकाम को।
भजे नित ही, मनमोहन श्याम को॥
मिले न कलेश, उसे फिर नाम को।
बिना श्रम सो, पहुँचे हरि धाम को॥

—मान

बेला

(न य र र ग) ६, ७

समझ सके हैं, प्रेम का तत्व कोई।
बस कि पतंगे, मीन हैं दीन दोई॥
स्व-तन दिये पै, एक है वार देता।
स्व-घर छुटे ही, दूसरा प्राण देता॥

—मान

केसरी

(य य र र ग) ६, ७

करो काम ऐसे, देश के लाभ के हों।
खड़े गर्व से हो, सभ्य संसार आगे ॥
पढ़ो मातृ-भाषा, वेष-भूषा न भूलो।
भला क्या रखा है, व्यर्थ आडम्बरों में ॥

—मान

विलेप

(न न न ज ल)

अति सदय-हृदय-मन-मोहन ।
गत-मद-मन रिपु पर कोह न।
शुचि सहज चरित अति पावन।
नर-रतन, जगत-मन-भावन ॥

—मान

पाटीर

(स न न स ग)

कहना सठ सन मरम न जी का।
रहना सदय-हृदय सँग नीका।
लगता खल सँग अपयश टीका।
बिन दौलत जग समझहु फीका ॥

- मान

१४ वर्ण के छन्द—१६३८४

वसंत तिलका (वसंत तिलक, सिंहोन्नता)

(त भ ज ज ग ग)

(१)

कुंजें वही, थल वही, जमुना वही है।
बेलें वही, बन वही, विटपी वही हैं॥
हैं पुष्प पल्लव वही, व्रज भी वही है।
ये किन्तु श्याम बिन हैं न वही जनाते॥

—प्रिय प्रवास

(२)

सारे विहंग नभमण्डल में गये हैं।
भौंरे रसाल-मुकुलों पर जा बसे हैं॥
एरे तड़ाग! तव क्षीण दशा हुए हा?
दीनातिदीन यह मीन अहो! करे क्या?

—कन्हैयालाल पोद्दार

चक्र (चक्र विरति)

(भ न न न ल ग)

जा बन मृगपति रव भयकर है।
पौन सुतपत बहत सर सर है॥
घूमत फिरत निकर निसिचर हैं।
ता बन फिरत लखन सिय-बर हैं॥

—समनेस

मनोरमा (मनोरम)

(स स स स ल ल)

हम हैं दसरत्थ महीपति के सुत।
सुभ राम सुलच्छन नामन संजुत॥
यह सासन दै पठयें नृप कानन।
मुनि पालहु घालहु राछ्रस के गन॥

—रामचन्द्रिका

हरिलीला (मुकुन्द)

(त भ ज ज ग ल) ८, ६

फूली लवंग लवली लतिका विलोल।
भूले जहाँ भ्रमर विभ्रम मत्त डोल॥
बोलैं सुहंस शुक कोकिल केकिराज।
मानो वसंत भट बोलत युद्ध काज॥

—रामचन्द्रिका

इन्दु वदना

(भ ज स न ग ग)

गो सुतनि लीलिन अघासुर अघानो।
बालकनि खाक लखि कान्ह अनखानो॥
लाल चख लाल मुख के भृकुटि बाँकी।
पैठि मुख मारि किय देवनि निसाँकी॥

—समनेस

प्रहरणि कालिका

(न न भ न ल ग) ७, ७

दशरथ-सुत को, सुमिरन करिये।
बहु जप तप में, भटकि न मरिये॥
विरद विदित है, जिन चरनन को।
प्रहरन कलि काटन दुख-गन को॥

—भिखारीदास

चारु (सुखदा)

(त य स त ल ल) ७, ७

केसौ हरि गोपाल, सु जै जै श्यामघन।
केसी बक चानूर, निपाती बीर रन॥
राधावर श्री कृष्ण, सु राखो आप पन।
गोपीपति गोविंद, हरौ जू पाप तन॥

—भिखारीदास

मदनमयंक

(र र ज र ल ग)

राम का नाम ले, न भूल कृष्ण नाम को।
लोभ को त्याग दे, विरोध क्रोध काम को॥
शंभु की शक्ति की, उपासना किया करे।
प्रेम से नेम से, सुसंग भी किया करे॥

—श्रीमाली

अपराजिता

(न न र स ल ग) ७, ७

रघुबर सर सैन, रावन की हई।
छन महिं महि मुंड रुंडन सों छई॥
हर-गन बहु मुंड-माल बनावहीं।
रुधिर पियत प्रेत-मण्डल गावहीं॥

—समनेस

हंसश्रेणी

(म भ न य ग ग)

फोरो भाँड़ो हरि महरि छरी लै धाई।
काँपे केसौं अँग अँग भरि आँखें आईं॥
जो मा जो हो सुत मुख भय भीनो दीनो।
सो ढीलो हाथ उठत गहि आली लीनो॥

—समनेस

अंश (अनन्द)

(ज र ज र ल ग)

पियो नृसिंह रक्त पेट देत फारि कै।
लपेटि मेद गात आँत ग्रीव धारि कै॥
प्रताप ज्वाल माल आसमान लौं लगी।
सिकोरि नासिका मुदे मुखै रमा भगी॥

—समनेस

नागराज

(न न न न ल ल)

हरि नख पर गिरिवर तकि तकि।
इक रहहिं अचल अँग जकि जकि॥
इक कहत भरत गर थकि थकि।
इक उठत सुरपतिहि बकि बकि॥

—समनेस

वासन्ती

(म त न म ग ग) ६, ८

वाणी-द्वारा प्रेम-प्रणय की हाला पीते।
वाणी-द्वारा कोप-अनल की ज्वाला पीते॥
वाणी-द्वारा शक्ति, गठन की भी पाते हैं।
वाणी-द्वारा 'मान', परम मानी पाते हैं॥

—मान

मंजरी (वसुधा, पथा)

(स ज स य ल ग) ५, ९

द्विजराज हैं, न अथ वेद को मानते।
यहि पालते, न नृप-नीति को जानते॥
सब चाहते, सहज ख्याति हो नाम की।
दिन रात है, सनक प्राप्ति हो दाम की॥

—मान

रेवा (लक्ष्मी)

(म स त न ग ग) ८, ६

वाणी से पर नेत्रों की, सरनि[1] न आया।
कानों में पड़ मूढ़ों के, मन न समाया॥
जाने जो जड़ जीवों में, अविदित माया।
देखे सो त्रिगुणातीता, त्रिभुवन काया॥

—ज्वालाराम नागर 'विलक्षण'

चन्द्रौरस

(म भ न य ल ग) ४, १०

भीनी भीनी, सुमन-सुरभि आई जहाँ।
बौरी बौरी, मधुप-अवलि धाई वहाँ॥
ज्यों-ज्यों होठों, हँस हँस वह फूली कली।
त्यों-त्यों डालों, झुक झुक कर झूले अली॥

--ज्वालाराम नागर 'विलक्षण'

नदी

(न न त ज ग ग) ७, ७

कर युग जिनमें, स्वर्ण था कान्ति पाता।
लख मृदुल पना, सून[2] भी था लजाता॥
विधि वश उनकी, आज हैं सम्पदाएँ।
कठिन तर पड़ीं, लौह की शृङ्खलाएँ॥

--ज्वालाराम नागर 'विलक्षण'

---

१. मार्ग। २. पुष्प।

१५ वर्ण के छन्द

चामर

(र ज र ज र)

(१)

बोलिये न झूठ ईठि मूढ़ पै न कीजिये।
दीजिये जु वस्तु हाथ भूलि हू न लीजिये॥
नेहु तोरिये न देहु दुःख मंत्रि मित्र को।
यत्र तत्र जाहु पै पत्याहु जैं अमित्र को॥

—रामचन्द्रिका

(२)

वेद मंत्र तंत्र शोधि अस्त्र शस्त्र दै भले।
रामचन्द्र लक्खनै सुविप्र छिप्र लैं चले॥
लोभ छोभ मोह गर्व काम कामना हई।
नीद भूख प्यास त्रास वासना सबै गई॥

—रामचन्द्रिका

मालिनी

(न न म य य)

(१)

विकल अति क्षुधा से देखि के पुत्र प्यारा।
जननि हृदय से है छूटती दुग्ध-धारा॥

लखकर कु-दशा त्यों दीन दुःखी जनों की।
सहज प्रकट होती है दया सज्जनों की॥

—लक्ष्मीधर वाजपेयी

(२)

विलसित उर में है जो सदा देवता लौं।
वह निज-उर में है ठौर भी क्यों न देता॥
नित वह कलपाता है मुझे कान्त हो क्यों?
जिस बिन कलपाते हैं नहीं प्राण मेरे॥

—'हरिऔध'

निसिपाल (निशिपालिका)

(भ ज स न र)

(१)

गान बिन मान बिन हास बिन जीवहीं।
तप्त नहिं खाय जल सीत नहिं पीवहीं॥
तेल तजि खेल तजि खाट तजि सोवहीं।
सीत जल न्हाय नहिं उष्ण जल जोवहीं॥

(२)

खाय मधुरान्न नहिं पाय पनही धरैं।
काय मन बाच सब धर्म करिबो करैं॥
कृच्छ्र उपवास सब इन्द्रियन जीत हीं।
पुत्र सिख लीन तन जौ लगि अतीत हीं॥

—रामचन्द्रिका

सुप्रिया (शशिकला, माला, चन्द्रावती, मणिगुण, शरभ)
(न न न न स) ६, ६

कहुँ द्विजगण मिलि सुख श्रुति पढ़हीं।
कहुँ हरि हरि हर हर रट रढ़ हीं॥
कहुँ मृगशिशु मृगपति पय पिय हीं।
कहुँ मुनिगण चितवत हरि हिय हीं॥

—रामचन्द्रिका

भ्रमरावली (नलिनी, मनहरण)
(स स स स स)

तबहीं भहराइ भजे खग हैं सरसों।
बहु सोरनि साजत हैं मिलि कै डर सों॥
लगि मारुत चंचल पंकज सुंदर सों।
सर मानहुँ भूपति को बरजै कर सों॥

—नैषधकाव्य

मनहंस (मानसहंस, रणहंस)
(स ज ज भ र)

तप आगि में तनु होमि कै सब संत हैं।
सुर लोक के फल लेन को बिलसंत हैं॥
सुरलोक सों तुम ओर आवत चाइ सों।
तुम ताहि क्यों न चहौ कहो केहि भाइ सों॥

—नैषधकाव्य

(२)

अलि जोग सीखन की नहीं परवाह है।
अब भोग भूषन की हमें नहिं चाह है॥
बलि बार बारहि माँगती बिधि सों यहै।
कित हूँ रहैं नँदलाल आनँद सो रहैं॥

—समनेस

सारंगी

(म म म म म) ८, ७

देखो रे देखो रे कान्हा, देखी देखा धावो जू।
कालिंदी में कूद्यो कालीनागै नाथ्यो लावो जू॥
नच्चैं बाला नच्चैं ग्वाला, नच्चैं कान्हाँ के संगी।
बज्जै भेरू रूदंगी तम्बूरा चंगी सारंगी॥

—भिखारीदास

प्रभद्रिका

(न ज भ ज र)

रघुबर आज मातु पितु छाँड़ि के गये!
अवधपुरी में दुःख द्वंद आय के छये॥
जगत कहै भले कुयश कैकई लये।
हम सब शोक के विपिन आज ते भये॥

—गदाधर

चित्रा

(म म म य य) ८, ७

फूले-फूले फूले बारी, सेज में जो बिहारै।
सीतैं धूपै डाभै काँटे, में सु क्यों पाँव धारै॥

सोचै भाखै रोवै झंखै, कौशल्या औ सुमित्रा।
कैसे सैहैं दु:खै सीता, कोमलांगी विचित्रा॥

—भिखारीदास

विपिन तिलका

(न स न र र)

डुलत नहिं गात नहिं बोलती बाँक ही।
सुरति तन की न गति जाति है ना कही॥
अनमिष सुनैन छबि साँवरी छै रही।
निरखि सिय राम कहँ चित्र सी ह्वै रही॥

—समनेस

चन्द्रलेखा

(म र म य य) ७, ८

राधा भूले न जानो, यों है लवन्या न मेरी।
जेहा तेहा तिहारी, सी तौ प्रभा है घनेरी॥
भौहैं ऐसी कमाने, हैं नैन सो कंज देखो।
नासा ऐसो सुआतुएडै आस्य[1] सो चन्द्र लेखो॥

—भिखारीदास

ऋषभ

(स य स स य) ६, ६

मन में कभी भी न रखो, छल-छिद्र भाई।
सपने पड़ीं वस्तु कभी, न छुओ पराई॥

---

१. मुख।

करते रहो काम भले, रुचि पूर्ण प्यारे।
खम ठोक हो आप खड़े अपने सहारे॥

—मान

चन्द्रकान्ता

(र र म स य) ७, ८

मार्ग काटों भरा है, छूटे सब साथ वाले।
घोर काली निशा है, झंझानिल भी झकोरे॥
हिंस्र-व्याघ्रादि भी हैं, सारे बन-बीच डोले।
मौत का सामना है, हे मोहन आ बचाओ॥

—मान

नल*

(न न र म र)

सुजन वचन सत्य, मीठे प्यारे बोलते।
श्रवण सु-मन-बीच, मिश्री मानो घोलते॥
सदय हृदय वीर, पक्के होते बात के।
सहन करते घाव, भारी वज्राघात के॥

—मान

---

* इसकी गति कुछ कुछ 'मिताक्षरी' से मिलती है। वर्णिक समवृत्तों में मिताक्षरी को देखो।

१६ वर्ण के छन्द—६५५३६

नरांच (पंच चामर, नागराज)

(ज र ज र ज ग)

जुवा न खेलिए कहूँ जुबान बेद रक्षिए।
अमित्र भूमि माहिं जैं अभक्ष भक्ष भक्षिए॥
करौ न मंत्र मूढ़ सों न गूढ़ मंत्र खोलिए।
सुपुत्र होहु जैं हठी मठीन सों न बोलिए॥

—रामचन्द्रिका

(२)

बिलोकि लोल कुण्डले, प्रभा कपोल पै बनी।
मुखारबिन्द पै अमंद, बंसिका फबी घनी॥
गवै सु-राग-रागिनी, मृदंग बीन बाजहीं।
कलिंद-नंदिनी समीप, नन्दलाल राजहीं॥

—हरदेव

विशेषक (नील, लीला, अश्वगति)

(भ भ भ भ भ ग)

साधु कथा कथिये दिन केशव दास जहाँ।
विग्रह केवल है मन को दिन मान तहाँ॥
पावन बास सदा ऋषि को सुख को बरषै।
को बरणै कविताहि विलोकत जी हरषै॥

—रामचन्द्रिका

चंचला (ब्रह्मरूप, चित्र)

(र ज र ज र ल)

एक सों यकै कहै भली खुली कपाल-माल ।
साल वारि दीजिये यकै कहै निहारि खाल ॥
दूलहै अदूलहै बनो दुकूल ऊन जाल ।
माँड़ये गिरीस के हँसै सिवै बिलोकि बाल ॥

—समनेस

रसवत्स

(त न भ भ भ ग)

कोई कह सरसीरुह में अरसी कि कली ।
कोई कहत गुलाब प्रसून अलोल अली ॥
कोई कह कनकै कलसा मनि नील जड़ी ।
ठोढ़ी तिलनहिं मो मत मोहन दीठि गड़ी ॥

—समनेस

कमलबंद

(म स भ म स ग) ७, ६

कूदे कान्ह कलिन्दी, व्रज काहू आनि पुकारो ।
द्वारे दौरि गिरी है, जसुदा लीन्हें दुख भारो ॥
धाए नंद अचेतै, नहिं जातो सोक सम्हारो ।
रोवै हाथनि मींजे, सब गोपी गोप न चारो ॥

—समनेस

मदन ललिता

(म भ त म न ग)

हारे देखे कपि रिछन रोषे राम रन हैं।
मारे सारे निसिचर पवारे बान घन हैं॥
बेधे लंकापति सिर लसे यों सोन सर हैं।
मानो कारे कमलनिनि फारे भानु कर हैं॥

—समनेस

गुरुड़रुत

(न ज भ ज त ग)

वृक तकि छाग ज्यों भजत वृद्ध औ बाल को।
मृगपति देखि ज्यों भजत झुण्ड शुण्डाल को॥
हर हर के कहे भजत पाप को ब्यूह ज्यों।
गरुड़ रुतै सुने भजत व्याल को जूह ज्यों॥

—भिखारीदास

सुधावेलि

(न य त य स ग) ८, ८

मुनि थल आगे त्यागे, सवरी गेह सिधाये।
अहिरन ही के काजै, मघवा मान मिटाये॥
सुपच बड़ाई पाई, मख घंटा बजवाये।
जग महँ ऐसो को है, प्रभु दीनै अपनाये॥

—समनेस

वाणिनि

(न ज भ ज र ग)

रघुबर बान काटि सिर रावनै गिराये।
छुधित पिसाच झुंड बहु रुंड मास खाये॥
उगिलत जात एक एक खात सीस नाये।
लखन गये जे कीस चख मूँदि भाजि आये॥

—समनेस

चकिता

(भ स म त न ग) ८, ८

कै हर जग नासै कै, टंकोरो धनु दुनि कै।
कै सुरपति के गाजे, बेई लैं धनु पुनि कै॥
आवतु न मनै एकौ, संकै यों सब गुनि कै।
काँपत ब्रज के बासी, केसी को रव सुनि कै॥

—समनेस

सुखसार

(भ त य ज र ल) ६, ५, ५

कोकिल की कूक, भली आम्र की, विसाल डार।
नेह सने चातक, हैं पी कहाँ, रहे पुकार॥
पावस को पौन, बहै मंद सी, परै फुहार।
बागन के बीच, परे झूलना, खरी बहार॥

—मान

वाणी हास

(न य म म स ग) ८, ८

कर लकुटी लै धाई, सारी भूली अटपाई।
थर थर देही काँपै, आँखों में है डर छाई॥
विय कर नोई बाँधे, देखो री सूध कन्हाई।
ब्रज सिगरे सों जीते, मा सों एकौ न बसाई॥

—सम्मनेस

१७ वर्ण के छन्द—१३१०७२

मन्दाक्रान्ता

(म भ न त त ग ग) ४, ६, ७

(१)

ए-आँखें हैं जिधर फिरतीं, चाहती श्याम को हैं।
कानों को भी मुरलि-रव की, आज लौ लगी है।
कोई मेरे हृदय तल को, पैठ के जो बिलोकै।
तो पावेगा लसित उस में, कान्ति प्यारी उन्हीं की॥

—प्रियप्रवास

(२)

प्यारी न्यारी प्रभु-पद-रता कान्त चिन्ता उपेता।
पाई जावे परम मधुरा मानवी-प्रीति-पूता॥
सद्भावों से विलस सरसे सारभूता दिखावे।
होवे सारे रुचिर रस से सिक्त साहित्य सत्ता॥

—हरिऔध

शिखरिणी

(य म न स भ ल ग) ६, ११

(१)

कुचालों ने मारे, मनुज मतवाले कर दिये ।
कुपंथों में सारे, विकट कटु-भाषी भर दिये ॥
हठीले होने को, हठ न अगुओं की मति हरे ।
हमारे रोने को, सुनकर कृपा शंकर करे ॥

--नाथूराम 'शंकर' शर्मा

(२)

हिमांशू चन्दा सों, कुसुमशर तो सों कहत क्यों ।
नहीं साँचे दोऊ, इन गुनन मोसे जनन कों ॥
खरी छोड़े ज्वाला, वह किरन पाला सँग धरी ।
तुहू बज्राकारी; निज सुमन के बानन करे ॥

—अभिज्ञान शकुन्तला-नाटक

पृथ्वी

(ज स ज स य ल ग) ८, ६

(१)

अगस्त ऋषिराज जू, बचन एक मेरो सुनो ।
प्रशस्त सब भाँति भूतल सुदेश जी में गुनो ॥
सनीर तरु-खण्ड मण्डित समृद्ध शोभा धरैं ।
तहाँ हम निवास की बिलम पर्णशाला करैं ॥

--रामचन्द्रिका

(२)

समीर अति शीतला सुखद मन्द ऐसी चले।
मतंग-मद से भरे गमन झूमते ज्यों करे॥
सुवासित सरोज यों स्व-मुख खोल यों थोड़े हिले।
नये शिशु पढ़ें यथा तनिक घूमते घूमते॥

—गोविंददास

रूपक्रान्ता (भालचन्द्र)

(ज र ज र ज ग ल)

अशेष पुन्य पाप के कलाप आपने बहाय।
विदेहराज ज्यों सदेह भक्त राम को कहाय॥
लहै सुभुक्ति लोक लोक अंत मुक्ति होहि ताहि।
कहै सुनै पढ़ै गुनै जु रामचन्द्र चन्द्रिकाहि॥

—रामचन्द्रिका

मालाधर

(न स ज स य ल ग) ६, ८

बचन सुनिकै तहीं कनक हंस मोह्यो महा।
सरस नहिं दाख यों पिक नवीन वाणी कहा॥
बदन लचि लाज सों नृप-कुमारि जानी जहीं।
मुदित मन ह्वै तहीं चतुर चारु-वाणी कही॥

—नैषधकाव्य

हारिणी (द्रोहारिणी)

(म भ न म य ल ग) ४, ६, ७

मेधा देवी, सुचित करनी, आनन्द विस्तारिणी ।
प्रायश्चित्तो, बहु जनम को, दण्डार्ध में टारिणी ॥
दोषै खण्डी, दुरित हरणी, संताप संहारिणी ।
राधा माधो, चरित-चरचा, संद्रोह द्रोहारिणी ॥

—भिखारीदास

हरिणी

(न स म र स ल ग) ६, ४, ७

लजित करता, जे हैं अंभोज खंजन मीन के ।
बसत निज जे, ही में गोपाल लाल प्रवीन के ॥
फिरत बन में, वे तौ पाले, परे पशु हीन के ।
त्रिय दृगन से, कैसे नैंना, कहो हरिणीन के ॥

—भिखारीदास

वंशपत्र पतिता

(भ र न भ न ल ग) १२, ५

दीन दयाल वंश कुल तारण, भय हरना ।
मोद प्रदान कंस बक मारण, सुख करना ॥
माधव संत दीन जन कारण, गिरि धरना ।
श्रीपति चक्रपाणि मणि धारण, भजु चरना ॥

—गदाधर

भाराक्रान्ता

(म भ न र स ल ग) ४, ६, ७

नीकी लागै, सरस कविता, अलंकृत सूनियों।
सोहै है ज्यों, बिधु बदनि साज-बाज बिहूनियों॥
नाहीं भावै, अरस कबहूँ, सुधी न एकौ घरी।
भाराक्रान्ता अभरननि, ज्यों विभूषित पूतरी॥

—दास

तरंग

(स म स म म ग ग) ५, ५, ७

उनकी मीठी प्यार भरी वे बातें भूलूँगी कैसे ?
रस की प्यासी मैं विष के प्याले को छूलूँगी कैसे ?
श्रवणों में गूँजा करतीं वे रोकूँगी आली कैसे ?
मधु ही देतीं जो उनको मानूँगी मैं व्याली कैसे ?

—गिरीश

मंजीरा

(म म भ त य ग ग) ६, ८

ऐसी क्या बातें हैं री कह, क्यों तू मुदमत्ता ऐसी।
फूली फूली भूली होकर, भूली रस मग्ना जैसी॥
मेघों सी शोभावाले बनमाली कर-लाली पायी।
क्या, जो प्यारे फूलों के मिस, तेरे मुख लाली छायी॥

—गिरीश

१८ वर्ण के छन्द—२६२१४४

चंचरी (चरचरी, विधु-प्रिया)

(र स ज ज भ र) ८, १०

छूटि गोल कपोल कुंतल स्वेद सोहत बिन्दु है।
स्याम बारिज से बड़े दृग पूर आनन इन्दु है॥
गुच्छ कान मयूर पच्छ किरीट दच्छिन नै रह्यौ।
आजु यों व्रजराज जोहत जन्म को फल मैं लह्यौ॥

—समनेस

हीरक (हीर)

(भ स न ज न र) १०, ८

पंडित गण मंडित गुण, दंडित मति देखिये।
क्षत्रिय वर धर्म प्रवर, क्रुद्ध समर लेखिये॥
वैश्य सहित सत्य रहित, पाप प्रगट मानिये।
शूद्र संकति विप्र भगति, जीव जगत जानिये॥

—केशव

महामोदकारी (क्रीड़ा चक्र)

(य य य य य य)

हरे कृष्ण केसौ कृपासिंधु माधौ मुकुन्दो मुरारी।
हृषीकेश केशीरिपो नन्दनन्दा धरा चक्र धारी॥
प्रभो प्राणदाता परब्रह्म विष्णो वली कैटभारी।
हरौ जू हरौ वेदना पूतना प्राणहारी हमारी॥

—भिखारीलाल

मंजीर

(म म भ म स म) ६, ६

मोह्यौ री आली मेरो मन, श्री वृन्दावन शोभा देखे।
देखे रीझैगी तोहूँ अति, मैं ही भाखत रेखा रेखे॥
ऐ री कान्हाजू को निर्तन, कोऊ चित्त न राखै धीरा।
जोटी जोटा नचैं ग्वालिनी, बज्जै झालरि औ मंजीरा॥

—दास

नन्दन

(न ज भ ज र र) ११, ७

मनु सुनि मो कह्यो चहत जो, दरयो बिथा के गनै।
तजि सब आसरै जगत को, करै एही तू धनै॥
भव-भ्रम को हनै भगति सों, सनै तनै औ मनै।
जसुमति नंद ने गरुड़स्यन्दने करै बंदनै॥

—दास

नाराच (महामालिका)

(न न र र र र) ९, ६

हरि गिरधर कोकिला, कंठधारी महारूप तू।
त्रिभुवन सुखदा महा, दैत्यमारी बड़ो भूप तू॥
विपति-दहन तू बली, नासकारी सुधा कूप तू।
पतित पुरुष और पापीन को धर्म का यूप तू॥

—गदाधर

कुसुमित लतावेल्लिता

(म त न य य य) ५, ६, ७

जै जै गोविंदा, यदुपति हरी, माधवो दीन रागी।
जै जै गोपाला, त्रिभुवनपती, साधवा भूरि भागी॥
जै जै श्रीधामा, जगत अयना, संत के चित्त पागी।
जै जै आनंदा, हितकर दया, कीजिये मोह लागी॥

—गदाधर

सिंह विस्फूर्जिता

(म म भ म य य) ५, ६, ७

भक्तों के प्यारे, अारे! रखवारे, देवकी के दुलारे।
पापी संहारे, संसार-सहारे, शंख चक्रादि धारे॥
तेरी है माया, वर्षों दुख पाया, काल ने हाय घेरा।
हे शोभाशाली, दे दे बनमाली, श्रीपदों में बसेरा॥

—ज्वालाराम नागर 'विलक्षण'

हरिणप्लुता

(म स ज ज भ र) ८, ५, ५

गोविंदा मनमोहना, यसुदालला, यदुनाथ जू।
हे माधौ कमलापते, बक घालका, ब्रजनाथ जू॥
अानंदा परिपूरणा, मधुसूदनामर नाथ जू।
चक्रपाणि हरे हरी, प्रभु यादवा-कुल-नाथ जू॥

—गदाधर

अश्वगति (तीव्र)

(भ भ भ भ भ स) ८, १०

माधव गोकुलचंद, गदाधर पावन निरता।
केशव पूरन धाम, हरीहर दूषन हरता॥
दीनन के प्रतिपाल, दया चित भावन धरता।
जो सुमिरे तव नाम, भला वह क्यों दुख भरता॥

—गदाधर

त्रिपुरारि

(न य न य न य) ६, ६, ६

कल हियरा मैं, गजमनि दामैं, जनु उडु ग्रामैं।
पियर पगा मैं, लसत ललामैं, अति अभिरामैं॥
मुख ससि भामैं, दृग रसना मैं, छबि सुखधामैं।
करि मन भोरैं, चखनि चकोरैं, दरसन स्यामैं॥

—समनेस

१६ वर्ण के छन्द—५२४२८८

शार्दूल विक्रीड़ित

(१)

(म स ज स त त ग) १२, ७

फूले कंज-समान मंजु दृगता, थी मत्तता-कारिणी।
सोने सी कमनीय-कान्ति तन की, थी दृष्टि उन्मेषिनी॥

राधा की मुसकान की मधुरता, थी मुग्धता-मूर्ति सी।
काली-कुंचित-लम्बमान-अलकें, थी मानसोन्मादिनी॥

—प्रियप्रवास

(२)

आ बैठी उर मोह जन्य-जड़ता, विद्या बिदा हो गई।
पाई कायरता मलीन मन को, हा! वीरता खो गई॥
जागी दीन-दशा दरिद्रपन की, श्री सम्पदा सो गई।
माया शंकर की हँसाय हमको, रुद्रा बनी रो गई॥

—नाथूराम 'शंकर' शर्मा

छाया

(य म न स त त ग) ६, ६, ७

अरी मेरी प्यारी, सजनि रविजे पी की कथा तो कहो।
कभी बीती बातें, हृदय उनका भी बेधती हैं अहो॥
बड़े निर्मोही हैं, न छन भर को, आते यहाँ श्याम हैं।
यहाँ खाना सोना, सकल बिसरा, आहों भरे याम हैं॥

— गिरीश

मणिमाल

(स ज ज भ र स ल) १२, ७

हम क्या रहे कब? क्या हुए अब? है नहीं कुछ भान।
किस ओर सब हैं जा रहे इसका नहीं कुछ ज्ञान॥
अब भी रहे यदि ऊँघते बस, मान लो अवसान।
सँभलें, बढ़ें यदि चाहते जग-जीवितों-बिच 'मान'॥

—'मान'

शंभु

(स त य भ म म ग) ५, ७, ७

त्रिशिरा के खण्डन जे भूमण्डन, केसी कंसा के काला ।
बनगोचारी, गिरि के धारी हरि, जै माधौ श्री गोपाला ॥
गणिका के तारण गीधो वारन, मैं तो हूँ चेरी तेरी ।
सुन दीनानाथ दया के सागर, भौ बाधा खोवो मेरी ॥

—हरदेव

रसाल

(भ न ज भ ज ज ल) ९, १०

मोहन मदन गुपाल, राम प्रभु शोक विदारन ।
सोहन परम कृपाल, दीन-जन आप उधारन ॥
प्रीतम सुजन दयाल, केशि बक दानव मारन ।
पूरण करुणा सुजान, दीन दुख दारिद टारन ॥

—गदाधर

चन्द्रमाला

(न न न ज न न ल) ११, ८

रघुबर नर हरि भजिये, तजि सब घर पुर ।
चरण शरण गहि रहिये, तिहि छबि रखि उर ॥
जगत-जनित-भय मिटि हैं, यह समझु लखि ।
जनम-करम सब सरि हैं, करहु भगति सखि ॥

—गिरवर सहाय

मेघस्फूर्जिता

(य म न स र र ग) ६, ६, ७

हरे रामा कृष्णा, सुजन सुखदा, राम आनंदकारी।
कृपा धारी ज्ञाता, भव-भय-हरी, दीन के दुःख टारी ॥
रमाधीशा त्राता, जगमति हितू, संत के शोक हारी।
दयासिन्धू मेरे, सुजन चित से, दीजिये पाप जारी ॥

—गदाधर

२० वर्ण के छन्द—१०४८५७६

गीतिका (गीत मुनिशेखर)

(स ज ज भ र स त ग) १२, ८

कुश मुद्रिका समिधै श्रुवा कुश, औ कमंडल को लिये।
कटि मूल श्रोननि तर्कसी भृगुलात-सी दरसै हिये ॥
धनु बान तिक्त कुठार केशव, मेखला मृग चर्म स्यों।
रघुवीर को यह देखिये रसवीर सात्विक धर्म स्यों ॥

—रामचन्द्रिका

दण्डिका

(र ज र ज र ज ग ल)

टार के अपार धार वार को सुधार कै गिरिन्द्रि पान।
ग्वाल बाल जान कै अधीन हाल टाल के सुरेन्द्रमान ॥
केशि कंस कंदना कृपालु दीन बंदना हरो जु दोख।
गोप गाय पाल जू दयालु नन्दलाल जू सुदेहु मोख ॥

—हरदेव

सुवदना (सर्ववदना)

(म र भ न य भ ल ग) ७, ७, ६

पूजा कीजै यशोदा, हरि हलधर को, मो सों सुनति हौ।
बाँधी मारो वृथा ही, इन कहँ अपनो, जायो गुनति हौ॥
पालै मारै सजावै, सकल जग यहै, है दैत्य कदनै।
थाके जाके बखानै, करत सरस्वती, स्यो सर्व वदनै॥

—दास

सुधा (शोभा)

(य म न न त त ग ग) ६, ७, ७

बसै शंभू माथे, विमल शशि कला, पेलि ह्वाँते कढ़ी है।
मरे हू प्राणी को, अमर करति है, साँचु या ते बढ़ी है॥
कहै याको पानी, गुन गनत न को, दास जान्यो न जाको।
स्रवै सीरो सोतो, सुरसरि महि आँ, स्वच्छ साँचो सुधा को॥

—दास

धवल

(न न न ज न न ल ग) ११, ९

रघुकुल रवि रघुबर को, वपुष निरखि, हरषे।
भरत पुलक अति सिगरे, नयन सलिल बरसे॥
प्रिय तर पिय अँग सुषमा, पट हठ दृग परसे।
निज सुकृत प्रथम तनु की, तनु धर जनु दरसे॥

—गदाधर

रमणक

(भ भ भ भ भ स ल ग) १२, ८

जो तिय लै हरि गो अरि बंधुहि, लंका दीन्ह बखानि है।
कै कुबरी सबरी अमरी गति, गोधै दीस न मानि है॥
देव सुदामहिं संकित श्री गहि, लीन्हो श्रीपति पानि है।
रे मन मंद! भज नंद-नंदहि, को ऐसो जग-दानि है॥

—समनेस

२१ वर्ण के छन्द—

स्नग्धरा

(म र भ न य य य) ७, ७, ७

(१)

हे दुर्गे, विश्वधात्री, जननि, भगवती हे शिवे, हे भवानी!
आर्ये, कल्याणि, वाणी, भव-भय-हरणी, चण्डि त्रैलोक्य रानी!
पाके भी हाय! माता, हम सब तुम-सी, ईश्वरी शक्तिशाली!
होंगे संसार में क्या, न अब फिर सुखी, तोड़ दुःखार्त्तिजाली?

—मैथिलीशरण गुप्त

(२)

हिंसा, आलस्य, ईर्ष्या, कलह, रुज, घृणा, फूट, चिन्ता, विषाद,
हो जावें लोप सारे व्यसन, अघ, व्यथा, मोह, माया, प्रमाद।
काम-क्रोधादि, तृष्णा तज, जगत करे धर्म-स्वातंत्र्य-पान,
पावे संसार सारे सुख, नित करते शान्ति-संगीत-गान॥

—लोचनप्रसाद पाण्डेय

नरेन्द्र (समुच्चय)

(भ र न न ज ज य) १३, ८

भाल विशाल पीन इभ इव भुज, काम सरानन भौंहैं।
लाजत देखि लाल नव जलरुह, भ्राजत नैन जु सौंहैं॥
पादप चीर काम तरुवर जनु, विश्व मनोरथ दाता।
देव अदेव सेव्य सरसिज पद, भूरि कृपा जन धाता॥

—गदाधर

मन विश्राम

(भ भ भ भ भ न य) १२, ६

मंजु लतानि वितान तरे घन, राजत रुचिर अखारे।
कान्ह कृपा सब कोम दहै तरु, हेरत सुर तरु हारे॥
सिद्ध बधू अँगराग सुगंधित, सोहत सुर सर न्यारे।
मंदर मेरुहि आदि महा गिरि, गोवरधन पर वारे।

—समनेस

सुखवितान

(भ भ भ त न भ स) ११, १०

मंजुल पानिप पानि भरो है, छबि लहरै लहरति है।
लोचन वारिज फूलि रहे हैं, बिहँसनि सौरभ मति है॥
कुंचित केस अली अवली त्यों, धुनि मुरली रव तति है।
मोहन आनन इन्दु सरै में, मगन रहै अलि मति है॥

—समनेस

कविमयूर मुदकर

(भ भ भ भ भ भ र) १२, ६

नील घटा घन सी तन की दुति, विज्जु घटा पट पीयरे।
वै धनु लौं बनमाल रही बक, पाँति मनों मुकता लरे॥
ज्यों घहराति बजै मुरली बरसै रस बूँद सु हीयरे।
पावस सों मन भावन आवत, ताप भरे हियरा हरे॥

—समनेस

२२ वर्ण के छन्द—४१९४३०४

हंसी

(म म त न न न स ग) ८, १४

श्री को चाहौ औरै दीनों, अतिथिन पर अति करुण करी है।
इच्छा ही सों भोगै सागौ, नयन सहस सब सिधि सिधरी है॥
तेरी बातें मीठी मीठी, सुनि सुनि तरल सुचित गति तेरी।
तीनौं लोकै पालौ नीकै, धनि धनि धनि हरि मति तेरी॥

—नैषधकाव्य

भद्रक

(भ र न र न र न ग) १०, १२

राम गुपाल दीन कुशला, हरे परम पावना भज मना।
दीनदयालु कृष्ण भय हा, बली धरम धारना दुखहना॥
पाप विदार केशि बकहा, घनी परम सुंदरा नरतना।
प्रेम प्रतीत नेम हित दा, सुखी करन पाप काटहु घना॥

—गदाधर

मोद
(भ भ भ भ भ म स ग)

गोकुल-नायक जै सुखदायक गोविंद गोपीप्रान अधारा।
कंस-बिहंडन जै अघ-खण्डन जै जय श्री स्वामी करतारा॥
स्याम सरोरुह लोचन सुंदर श्रीपति सोभा धाम अपारा।
माधव जादव वंश विभूषन दानौ दारन देव उदारा॥

—भिखारीलाल

मदिरा* (चकोर)
(भ भ भ भ भ भ भ ग)

(१)

सिंधु तर्यौ उनको बनरा तुम पै धनु रेख गई न तरी।
बाँदर बाँधत सो न बँध्यो उन वारिधि बाँधि के बाट करी॥
श्री रघुनाथ प्रताप की बात तुम्हैं दसकंठ न जानि परी।
तेलहु तूलहु पूँछ जरी न जरी, जरि लंक जराइ जरी॥

—केशव

(२)

किंचित कोप के कारण सों जिहि, आनन ओप अनूपम सो।
गुंजित सिञ्जनि को धनु लै जुग छोरनि मंजु टकोरत जो॥
चंचल पंच-शिखानि किये बरसावत सैंन पै बान बिभो।
चूइ रह्यो रन-रंग महा यह बालक वीर बतावहु को॥

—उत्तर-रामचरित-नाटक

* बाईस से छब्बीस वर्ण तक के गणवद्ध छन्द प्रायः सवैया ही कहलाते हैं।

२३ वर्ण के छन्द—८३८८६०८

सुमुखी (मल्लिका, मानिनी)

(ज ज ज ज ज ज ज ल ग)

हिये बनमाल रसाल धरे, सिर मोर-किरीट महा लसिबौ।
कसे कटि पीत पटी लकुटी कर आनन पै मुरली बसिबौ।
कलिंदिन तीर खड़े बलवीर सुबालन की गहि बाँह सबौ।
सदा हमरे हिय मंदिर में यहि बानक सों करिये बसिबौ॥

—हरदेव

मत्तगयंद (मालती, इन्दव)

(भ भ भ भ भ भ भ ग ग)

(१)

हाथ गहे हैं कुठार कठोर जटा सी लसैं जहँ जोति की ज्वाला।
काँधे निषंग है बाँधे जटा कटि चीर कसे तन पै मृगछाला॥
हाथ में बान कलाई पै सोहत डोलत पावन अक्ष की माला।
राजत हैं इक संग मिले जनु शान्ति सरूप औ वेष कराला॥

—लाला सीताराम 'भूप'

(२)

किंचित कोप के कारण सों जिहि, आनन ओप अनूपम सो है।
गुंजित सिञ्जनि को धनु लै जुग छोरनि मंजु टकोरत जो है।
चंचल पंच-शिखानि किये बरसावत सैन पै बान बिमोहै।
चूइ रह्यो रन-रंग महा यह बालक बीर बतावहु को है॥

—उत्तर-रामचरित-नाटक

अद्रितनया (अश्व ललित)

(न ज भ ज भ ज भ ल ग) ११, १२

घट घट में तुही बसति है, तुही बसति है स्वरूप मति के।
तुश्र महिमा अरी रहित है, सदा हृदय में त्रिलोक पति के।
निज जन को बिना भजन हू, कलेस हननी बिथानि हनिनी।
जय जय श्री हिमाद्रि-तनया, महेश घरनी गनेश जननी॥

—दास

चकोर

(भ भ भ भ भ भ भ ग ल)

जो कोउ दूर सों आवें थके, तिन के दुख दूर करें ततकाल।
दै निज शीतल छाँह मनोहर हेतु बिना सुख देत कमाल॥
कौन तिहारी कहै महिमा जन-सीदन जो लखि होत निहाल।
पाहन हूँ सों हन तिन को तुम, देत अमीफल धन्य रसाल॥

—जनार्दन 'झा'

२४ वर्ण के छन्द—१६७७७२१६

गंगोदक (गंगाधर, लक्ष्मी, खंजन)

(र र र र र र र र)

मेघ मंदाकिनी चारु सौदामिनी रूप रूरे लसै देहधारी मनो।
भूरि भागीरथी भारती हंसजा अंश के हैं मनो, भोग भारे भनो॥
देवराजा लिये देवरानी मनो पुत्र संयुक्त भूलोक में सोहियो।
पक्ष द्वै सन्धि सन्ध्या सँधी है मनो लक्षिये स्वच्छ प्रत्यक्ष हीं मोहियो॥

—रामचन्द्रिका

मुक्तहरा

(ज ज ज ज ज ज ज ज)

सिया रघुनंदन की उनहारि गयो यह बाल महा सुखदाय।
मनो प्रतिबिम्बित है यहि माहिं रही उनकी दुति आकृति छाय॥
मिलै उनसों यहि को सब भाँति बिनैमय बोल सुशील सुभाय।
वृथा चित चंचल क्यों मन दैव, कुमारग में भटक्यो इत आय॥

—उत्तर-रामचरित नाटक

वाम (मंजरी, मकरंद, माधवी,)

(ज ज ज ज ज ज ज य)

बिनै सिसुता सों सुहावन चारु लसै महि में अति तेज निकाई।
लखैं जिह सूछम देखनहार परै न अजानहिं रंच लखाई॥
विमोह हरै मन मो बलवान रहै तप सों जिय में थिरताई।
यथा लघु चुम्बक-खण्ड स्व-ओर कुधातुहिं खेंचतु है बरि आई॥

—उत्तर-रामचरित नाटक

तन्वी

(भ त न स भ भ न य)

बोलत कैसे, भृगुपति सुनिये, सो कहिये तन मन बनि आवै।
आदि बड़े हो, बड़पन रखिये, जाहित तूँ सब जग जस पावै॥
चंदन हू में, अति घन घिसिये, आगि उठै यह गुनि सब लीजै।
हैहय मारो, नृप जन सँहरे, सो यश लै किन युग-युग जीजै॥

—रामचन्द्रिका

अरसात (आलसा)

(भ ७+र)

(१)

लाज धरौ सिव जू सों लरौ सब सैयद सेख पठाय पठाय कै।
'भूषन' ह्याँ गढ़-कोटन हारे उहाँ तुम क्यों मठ तोरे रिसाय कै॥
हिन्दुन के पति सों न बसात सतावत हिन्दु गरीबन पाय कै।
लीजै कलंक न दिल्लि के बालम आलम आलमगीर कहाय कै॥

—भूषण

(२)

जा थल कीन्हें बिहार अनेकन ता थल काँकरी बैठि चुन्यों करैं।
जा रसना तें करीं बहु बातनि ता रसना तें चरित्र गुन्यों करैं॥
'आलम' जौन से कुंजन में करी केलि तहाँ अब सीस धुन्यों करैं।
नैननि में जो सदा बसते तिनकी अब कान कहानी सुन्यों करैं॥

--आलम

किरीट

(भ ८)

वालि बली न बच्यौ पर खोरिहि क्यों बचि हौ तुम आपनि खोरिहि।
जा लगि छीर समुद्र मथ्यौ कहि कैसे न बाँधिहै वारिध थोरहि॥
श्री रघुनाथ गनौ असमर्थ न देखि बिना रथ हाथिन घोरहि।
तोरयो सरासन संकर को जेहि सोऽब कहा तुव लंक न तोरहि॥

—केशव

दुर्मिल (चन्द्रकला)

(स ८)

(१)

अति हेय परिग्रह को समझा जप-यज्ञ ही के अभिमानी रहे।
यश फैल गया महि-मण्डल में निगमागम के गुरु ज्ञानी रहे॥
धन पै नहिं बेच दिया मन को तन प्राण दिये वह दानी रहे।
अब पूर्वजों के वह कृत्य कहाँ कविता रहे राम कहानी रहे॥

—सनेही

(२)

महिमा उमड़े लघुता न लड़े जड़ता जकड़े न चराचर को।
शठता सटके मुदिता मटके प्रतिभा भटके न समादर को॥
विकसे विमला शुभ कर्म-कला पकड़े कमला श्रम के कर को।
दिन फेर पिता वर दे सविता कर दे कविता कवि शंकर को॥

—नाथूराम 'शंकर' शर्मा

(३)

बन राम रसायन की रसिका, रसना रसियों की हुई सफला।
अवगाहन मानस में कर के, जन मानस का मल सारा टला॥
बने पावन भाव की भूमि भली, हुआ भावुक भावुकता का भला।
कविता करके तुलसी न लसे, कविता लसी या तुलसी की कला॥

—हरिऔध

महा भुजंग प्रयात

(य ८)

करो संत को संग त्यागो बिकारो,
मुरो मोह सों कोह सों जो नकारो।
कहो सत्य को झूठ को ना उचारो,
दया राखिये जो महा पुण्य सारो॥
कृपासिंधु श्रीराम संसार नाथं,
सदा प्रेम से नाम को लै पुकारो।
कटै कोटि बाधा लहै मोद सारो,
अनायास भौसिंधु के जाव पारो॥

—गोस्वामी साधो गिरि

२५ वर्ण के छन्द—३३५५४४३२

सुंदरी (मल्ली, सुखदानी)

(स ८ + ग)

हम दीन दरिद्र-हुताशन में, दिन-रात पड़े दहते रहते हैं।
बिन मेल विरोध-महानद में, मन बोहित से बहते रहते हैं।
कवि 'शंकर'! काल-कुशासन की, फटकार कड़ी सहते रहते हैं।
पर भारत के गत-गौरव की, अनुभूत-कथा कहते रहते हैं॥

—नाथूराम 'शंकर' शर्मा

अरविन्द

(स ८ + ल)

फटकारि कै दूर भगावत है, खल काक उलूकन को सब काल।
फल उन्नति हेतु उपाय घने, रचि प्रान समान करै प्रतिपाल।
जनसीदन जो कछु पाक्यौ गिरै, फल पाय तिन्हें अति होत निहाल।
धनि है एहि बाग को माली अहो, जिन सेवै सुजीवन सींचि रसाल ॥

—जनार्दन 'झा'

लवंगलता

(ज ८ + ल)

चढ़ीं प्रति मंदिर सोभ बढ़ी तरुणी अवलोकन को रघुनन्दनु।
मनों गृह दीपति देह धरे सु किधौं गृह देवि विमोहति हैं मनु।
किधौं कुल देवि दिपैं अति केशव कै पुर देविन को हुलस्यों गनु।
जहीं सु तहीं यहि भाँति लसैं दिवि देविन कों मद घालति हैं मनु ॥

— रामचन्द्रिका

२६ वर्ण के छन्द—६७१०८८६४

सुखद (किशोर, कुंदलता)

(स ८+ल ल) १२, १४

तृनहू सम तीनहुँ लोकनि को बल, जो नहिं आँखिन के तर लावत।
अति उद्धत धीर गती सों मनौ, अचला को चले वुह धीर नवावत'

निज बालक बैस ही में गिरि के सम गौरवता की छटा छिटकावत।
तपधारी किधौं यह दर्प लसै, अथवा वर वीरता को मद आवत॥

—उत्तर-रामचरित नाटक

महामंजीर

(स ८+ल ग)

नव दारुन वा अपमान सों तू, निहचै दृग नीरहि ढारति होइगी।
सिसु होन समै पै सिये बन में, कहुँ बेहद पीड़ा सों आरति होइगी॥
घिरि हाय अचानक सिंहनि सों, किमि बेबस धीरज धारति होइगी।
करिकें सुधि मेरी डरी हिय में, कहुँ तातहि तात पुकारति होइगी॥

—उत्तर-रामचरित नाटक

उपजाति वृत्त

इन्द्रवज्रा (त त ज ग ग) और उपेन्द्रवज्रा (ज त ज ग ग) के मेल से सोलह वृत्त बनते हैं। इनमें इन्द्रवज्रा और उपेन्द्रवज्रा को छोड़ शेष चौदह उपजाति वृत्त कहलाते हैं। यहाँ प्रस्तार सहित उनके उदाहरण दिये जाते हैं:—

प्रस्तार *

क्रम-संख्या	रूप	मूलवृत्तके संकेताक्षर	नाम उपजाति	क्रम-संख्या	रूप	मूलवृत्तके संकेताक्षर	नाम उपजाति
१	ऽ ऽ ऽ ऽ[1]	इ इ इ इ	इन्द्रवज्रा	९	ऽ ऽ ऽ ।	इ इ इ उ	बाला
२	। ऽ ऽ ऽ	उ इ इ इ	कीर्ति	१०	। ऽ ऽ ।	उ इ इ उ	आर्द्रा
३	ऽ । ऽ ऽ	इ उ इ इ	वाणी	११	ऽ । ऽ ।	इ उ इ उ	भद्रा
४	। । ऽ ऽ	उ उ इ इ	माला	१२	। [illegible] ऽ ।	उ उ इ उ	प्रेमा
५	ऽ ऽ । ऽ	इ इ उ इ	शाला	१३	ऽ ऽ । ।	इ इ उ उ	रामा
६	। ऽ । ऽ	उ इ इ उ	हंसी	१४	। ऽ । ।	उ इ उ उ	ऋद्धि
७	ऽ । । ऽ	इ उ उ इ	माया	१५	ऽ । । ।	इ उ उ उ	सिद्धि
८	। । । ऽ	उ उ उ इ	जाया	१६	। । । ।[2]	उ उ उ उ	उपेन्द्रवज्रा[3]

* प्रस्तार के प्रत्येक रूप में आये हुए गुरु लघु के चारों चिन्हों में से हर एक अपने मूल-वृत्त का सूचक है। गुरु चिन्ह इन्द्रवज्रा का और लघु उपेन्द्रवज्रा का द्योतक है। 'इ' से इन्द्रवज्रा और 'उ' से उपेन्द्रवज्रा का बोध होता है; जैसे:—। ऽ ऽ ऽ इससे यह समझना चाहिए कि इस रूप वाले उपजाति का पहला चरण उपेन्द्रवज्रा का और शेष तीन चरण इन्द्रवज्रा के होंगे। १ यह रूप मूलवृत्त इन्द्रवज्रा का है। २. यह रूप मूलवृत्त उपेन्द्रवज्रा का है। ३. इन्द्रवज्रा के चरण का आदि वर्ण लघु होने पर वह उपेन्द्रवज्रा का चरण बनजाता है।

१. कीर्त्ति (।ऽऽऽ)

उ इ इ इ

(१)

दयादि जो सद्‌गुण विश्व में है। वे भी तुम्हीं से मिलते हमें हैं ॥
हे ग्रंथ ! कर्मण्य, उदार धीर। होते तुम्हीं से हम शूर वीर ॥

—मैथिलीशरण गुप्त

(२)

नहीं कटैगी वह खूब जो लों। देगी न रंभा फल मिष्ट तौ लों॥
भूलो न माली ! यह किम्बदन्ती। "त्रासं विना नैव गुणाः श्रेयन्ति"

—मैथिलीशरण गुप्त

२. वाणी (ऽ।ऽऽ)

इ उ इ इ

होता न जो जन्म कहीं तुम्हारा। अकार्य होता अति ही हमारा।
संताप, हे ग्रंथ ! बिना तुम्हारे। पाते अनेकों हम लोग सारे ॥

—मैथिलीशरण गुप्त

३. माला (।।ऽऽ)

उ उ इ इ

तजो निरी भोजन भट्टता को। स्वदेश को शीश सभी झुकाओ ॥
हे ब्राह्मणो ! "हैं हम अग्र जन्मा"। संसार को आज यही बता दो ॥

—गिरिधर शर्मा

४. शाला (ऽऽ।ऽ)

इ इ उ इ

जो जीर्ण होने पर भी अपार। त्यागे न, हे ग्रंथ ! परोपकार ॥
बिना तुम्हारे अति धन्य धन्य। है कौन ऐसा जगबीच अन्य ॥
—मैथिलीशरण गुप्त

५. हंसी (।ऽ।ऽ)

उ इ उ इ

जहाँ हुए व्यास मुनि-प्रधान; रामादि राजा अति कीर्तिमान।
जो थी जगत्पूजित धन्य-भूमि; वही हमारी यह आर्य-भूमि ॥
—महावीरप्रसाद द्विवेदी

६. माया (ऽ।।ऽ)

इ उ उ इ

(१)

श्रीमान, धीमान, वही यशस्वी। वही सुसम्पन्न वही मनस्वी ॥
परोपकारी नर-रत्न जो है। स्वर्गीय है, जीवन-मुक्त सो है ॥
—मान

(२)

यस्यास्ति वित्तं सनरः कुलीन। सपंडितः सश्रुतवान् गुणज्ञः ॥
सएव वक्ता सचदर्शनीयः। सर्व्वेगुणाः कांचनमाश्रयन्ति ॥

७. जाया (।।।ऽ)

उ उ उ इ

गिने हुए सज्जन-वृन्द का तो ; कभी कभी मैं करता सु संग ।
परन्तु है पुस्तक मित्र ऐसा ; होता कभी जो मुझसे न न्यारा ॥

—गिरधर शर्मा

८. बाला (ऽऽऽ।)

इ इ इ उ

वीरांगना भारत-भामिनी थीं ; वीर-प्रसू भी कुल-कामिनी थीं ।
जो थी जगत्पूजित वीर-भूमि ; वही हमारी यह आर्य-भूमि ॥

—महावीरप्रसाद द्विवेदी

९. आर्द्रा (।ऽऽ।)

उ इ इ उ

सुजान जो हैं अति धैर्य वाले ; उद्देश्य से भ्रष्ट कभी न होते ।
प्राणान्त चाहे उनका भले हो ; अवश्य पूरी करते प्रतिज्ञा ॥

—गोविंददास

१०. भद्रा (ऽ।ऽ।)

इ उ इ उ

सद्धर्म का मार्ग तुम्हीं बताते; तुम्हीं अघों से जग में बचाते ।
हे ग्रंथ, विद्वान तुम्हीं बनाते, तुम्हीं दुखों से इसको छुड़ाते ॥

—मैथिलीशरण गुप्त

(२)

हे क्षत्रियो ! क्षत्रियता तुम्हारी; छिपी नहीं है जन-ताप-हारी।
मालिन्य सारा उसका उड़ा दो; अनैक्य का मूल सभी मिटा दो॥
—गिरधर शर्मा

११. प्रेमा (।।ऽ।)

उ उ इ उ

जहाँ सभी थे निज-धर्म धारी; स्वदेश का भी अभिमान भारी।
जो थी जगत्पूजित पूज्य-भूमि; वही हमारी यह आर्य-भूमि॥
—महावीरप्रसाद द्विवेदी

१२. रामा (ऽऽ।।)

इ इ उ उ

है मौनिते ! मंगल-कारिणी तू; शीलेश्वरी शान्ति-विहारिणी तू।
विरोध-विद्वेष-निवारिणी तू; विषाक्त-वाणी-विष-हारिणी तू॥
—सत्कविदास

१३. ऋद्धि (।ऽ।।)

उ इ उ उ

सदैव हे चातक-सूनु ! जी से; आशा लगाना घनश्याम ही से।
न भूल जाना यह वंश-सन्था; "महाजनो येन गतः सपन्था॥"
—मैथिलीशरण गुप्त

१४. सिद्धि वा बुद्धि (ऽ।।।)

इ उ उ उ

तू जान के भी अनल-प्रदीप; पतंग ! जाता उस के समीप।
अहो ! नहीं है इस में अशुद्धि; "विनाश काले विपरीत बुद्धिः ।।"

—मैथिलीशरण गुप्त

द्विज

(म त त ग ग) + (म भ त ग ग) ४, ७

शालिनी और वातोर्मि के मेल से 'द्विज' उपजाति बनता है:—

वीरात्मा-है धीर जो निमित्त। न्यायी है श्रीमान है सत्यवक्ता।
धर्मात्मा है सुधी जो उदार। सो सच्चा है, नर भू·रत्न·सार[1] ॥

मुक्ति (त त ज ग ग)+(म त त ग ग)

इन्द्रवज्रा और शालिनी[2] के मेल से 'मुक्ति' उपजाति बनता है:—

स्वर्गीय आनंद स्वतंत्रता है।
मानी को तो नर्क है दासता ही ।।
कैसी हीं हे नाथ दो यातनाएं।
छीनो ना स्वाधीनता हाँ किसी की ।।

—मान

---

१. इस वृत्त का चौथा चरण वातोर्मि का शेष तीन शालिनी वृत्त के हैं।

२. इस उपजाति का पहला चरण इन्द्रवज्रा का और शेष शालिनी के हैं।

माधव[1]

(ज त ज र) + (त त ज र)

वंशस्थ विलम् और इन्द्रवंशा के मेल से 'माधव' उपजाति बनता है:—

दया[3] मया छू जिसको नहीं गई;
पाषाण जी का नर क्रूर निर्दई।
है ढोर ही पुच्छ विषाण हीन है;
है भार भू का खल दीन हीन है॥

—मान

---

१. श्री पं० लोचनप्रसाद जी पाण्डेय ने अपने स्वर्गीय बालक के स्मरणार्थ इस उपजाति वृत्त का नाम 'माधव' रखा है।

२. जिस तरह इन्द्रवज्रा और उपेन्द्रवज्रा के मेल से चौदह उपजाति बन जाते हैं उसी तरह इन वृत्तों के मेल से भी अनेक उपजाति बन सकते हैं। उदाहरण में दिये गये उपजाति का पहला चरण 'वंशस्थ-विलम्' का और शेष तीन इन्द्रवंशा के हैं।

उपजाति सवैया

१. मत्तगयंद *

इसका केवल तीसरा चरण सुंदरी सवैया का है और शेष मत्तगयंद के चरण हैं:—

(१)

गर्भ के अर्भक काटन को पटुधार कुठार कराल है जाको।
सोई हों बूझत राज-सभा धनु को दल्यौ? हों दलि हौं बल ताको॥
लघु आनन उत्तर देत बड़ो लरि है, मरि है, करि है कछु साको।
गोरो गरूर गुमान भरो कहौ कौसिक छोटो-सो ढोटो है काको?

—गोस्वामी तुलसीदास

(२)

या लकुटी अरु कामरिया पर राज तिहूँ पुर को तजि डारौं।
आठहु सिद्धि नवों निधि को सुख नंद की गाय चराय बिसारौं॥
रसखानि कबौं इन आँखिन सों ब्रज के बन बाग तड़ाग निहारौं।
कोटिन हूँ कलधौत के धाम करीर के कुंजन ऊपर वारौं॥

—रसखानि

---

* किसी उपजाति सवैया में जिस मूल छन्द के चरण अधिक हों, उसी नाम से उसे उपजाति कहना चाहिए और यदि दो-दो चरण दो-दो मूल छन्दों के हों तो दोनों नामों से उपजाति सवैया कहना चाहिए।

२. मदिरा

इसका तीसरा चरण दुर्मिल सवैया का है और शेष चरण मदिरा के हैं:—

सिंधु तरयो उन को बनरा तुम पै धनु रेख गई न तरी।
बानर बाँधन सो न बँध्यो उन बारिधि बाँधि कै बाट करी॥
अज हूँ रघुनाथ प्रताप की बात तुम्हें दसकंठ न जानि परी।
तेलनि तूलनि पूँछ जरी न जरी जरी लंक जराइ जरी॥

—केशव

३. दुर्मिल

इसका पहला चरण मंदिरा सवैया का और शेष तीनों दुर्मिल के हैं:—

(१)

भारत में बन ? पावन तू ही तपस्वियों का तप-आश्रम था।
जग-तत्व की खोज में लग्न जहाँ ऋषियों ने अभग्न किया श्रम था॥
जब प्राकृत विश्व का विभ्रम था और सात्विक जीवन का क्रम था।
महिमा बन-वास की थी तब और प्रभाव पवित्र अनूपम था॥

(२)

चारु हिमाचल आँचल में, एक साल विसालन कौ वन है।
मृदु मर्मर शील झरें जल-स्रोत हैं पर्वत-ओट है निर्जन है॥
लिपटे हैं लता द्रुम, गान में लीन प्रवीन-विहंगन कौ गन है।
भटक्यौ तहाँ रावरो भूल्यौ फिरै, मद बावरौ सौ अलि को मन है॥

—श्रीधर पाठक

वर्णिक दण्डक *

गण-बद्ध ‡

चण्ड वृद्धि प्रयात

(न न + र ७)

चरण शरण हो सदा ताहि कीनों
कृपासिंधु गोपाल गोविंद दामोदरो।
सदय हृदय ह्वै हमें पालि है
आपनो जानिके सोई विश्वेश विश्वंभरो॥

---

* दण्डक का शब्दार्थ है—'दण्ड देने वाला'। इन छन्दों के चरण इतने-इतने लम्बे होते हैं कि पढ़ते समय दम टूटने लगती है। इसी से इनका नाम दण्डक रक्खा गया है।

‡ वर्णिक दण्डकों के दो भेद हैं—गण बद्ध और मुक्तक। जिन दण्डकों की वर्ण-संख्या गण-क्रम अथवा गुरु-लघु क्रमानुसार होती है वे गणबद्ध अथवा साधारण दण्डक कहलाते हैं। और जो दण्डक गण-क्रम अथवा गुरु-लघु-क्रम से मुक्त हैं वे मुक्तक कहलाते हैं। इनमें वर्णों की नियत संख्या का होना ही मुख्य है। कहीं कहीं बीच में और चरणान्त में गुरु-लघु का क्रम इन में भी पाया जाता है पर पूरे चरण में नहीं।

सुयश विदित जासु संसार के बीच में
सर्वदा ईस है देव देवेश को।
भजन करिय चित्त में ताहि को नित्य ही
दानि है सिद्धि को लोक लोकेश को॥

—दास

सुधाधर

(भ ४ + त ३ × भ २) १२, १५

कुंजर की जब टेर सुनी तब,
कीनो बिलम्बो न एकौ घरी जु गदाधर।
गीध अजामिल और गणिका द्विज—
नारी तरी जू रह्यो है यहाँ जस भू पर।
धारि लियो गिरि पानिनि ऊपर,
गोपी गुवालो बचाए सबै करुणाकर।
त्यों अब दोष दवानल ने बलि,
राखो हमें हूँ दया के निधान सुनो हर॥

—काव्य कुसुमाकर

मत्त मातंग लीलाकर

(र ६ या इस से अधिक)

योग ज्ञाना नहीं यज्ञ दाना नहीं,
वेद माना नहीं या कली माँहिं मीता कहूँ[1]।
ब्रह्मचारी नहीं दण्डधारी नहीं,
कर्मकारी नहीं है कहा आगमै जो छहूँ।

१. यह ९ रगण का छन्द है।

सच्चिदानंद आनंद के कंद को,
छाँड़ि कैरे मतीमन्द भूलो फिरै ना कहूँ।
याहि तै हों कहौं ध्याय ले,
जानकी नाह को गावहीं जाहि सानंद वेदा चहूँ॥

सिंह विक्रीड़

(य ९ अथवा इस से अधिक)

यकै आतमा आन दूजो न देखै,
अही जीह लौं और दोषै न जीहै चलावै[1]।
न रोवै न गाव किये काल कर्मैं,
सबै सोक औ मोद पावै यहै वेद गावै।
सुआनैन पोषै सरीरै विकारै-
बिनासै, मुनीरीति धारै, न चित्तै चलावै।
चहै सिद्धि नाहीं न है भक्ति माहीं,
सदा ही दसौ बेष धारै धरा ताहि ध्यावै!!
—समनेस

कुसुम स्तवक

(स ६ अथवा इस से अधिक)

विधना बिधि नाना हमें दुख देहु,
न देहु कुवास मलीनन के गन में[2]।
मिलें मीत तो हों मिलै वे जिनकी,
रति हो गति हो रस रीति कवीनन में।

---

१. यह ६ यगण का छन्द है। २. यह ६ सगण का छन्द है।

वरु घोर तें घोर घनेरे सहौं-
दुख, टेक रहे अपनी यह जीवन में॥
मन को मिले 'मान' कहों मन कीं,
न तो गोए रहों सु सदा मन की मन में॥
—'मान'

त्रिभंगी

(न ६ + स स भ म स ग) १६, १८

सजल जलद तनु लसत विमल तनु,
श्रमकन त्यों झलको है उँमगो है बुन्द मनो है
भुव युग मटकनि फिर फिर लटकनि,
अनमिषि नैननि जो है हरषो ह्वै है मनमोहै।
पगि पगि पुनि पुनि खिनखिन सुंनिसुनि,
मृदु मृदु ताल मृदंगी मुरचंगी झाँझ उपंगी।
बरहि बरहि अरि अमित कलनि कीर,
नचत अहीरन संगी बहु रंगी लाल त्रिभंगी॥
--दास

अशोक पुष्प-मंजरी*

(ग ल इच्छानुसार)

पीत झीन झींगुली लसे बसे सो हीय बीच,
गोकुलेश लाड़िलो सुनंद नंद।

---

* यह अशोक-मंजरी ग-ल के क्रम से २८ वर्णों का है।

नैन बीच श्याममूर्त्ति, कान बीच वेणु नाद,
गूँजता रहे सदा सुमंद-मंद।
नाम और चित्त बीच हो कभी न रंच बीच,
यों रहे लगाव ज्यों चकोर चंद॥
राम-कृष्ण राम-कृष्ण राम-कृष्ण ध्यान गान,
चित्त में रहे बसा सदा अनंद॥

—मान

नीलचक्र †

(ग ल के क्रम से ३० वर्ण)

जानि कै समै भुवाल राम राज साज साज,
ता समै अकाज काज कैकयी जु कीन।
भूपते हराय बैन राम सीय बंधु युक्त,
बोल के पठाय बेग काननै सु दीन।
ह्वै रह्यो विलाप को कलाप सो सुन्यों न जाय,
राय प्राण भो प्रयाण पुत्र के विहीन।
आय के भरत्थ ह्वै बिहाल कै नृपाल कर्म,
सोध चित्रकूट गौन हेत नेम लीन॥

—काव्य सुधाकर

सुधानिधि ‡

(ग ल के क्रम से ३२ वर्ण)

का कर समाधि साधि का करै बिराग जाग,
का करै अनेक जोग भोग हू करै सुकाह।

---

† नील चक्र अशोक-मंजरी का ही एक भेद है।

‡ सुधानिधि भी अशोक-मंजरी का ही एक भेद है।

का करे समस्त वेद औ पुरान सास्त्र देखि,
कोटि जन्म लों पढ़ै मिलै तऊ कछू न थाह।
राज्य लै कहा करै सुरेस औ नरेस ह्वै न,
चाहिए कहूँ सु दुःख होत लोकलाज माह।
सात-द्वीप खण्ड-नौ त्रिलोक सम्पदा अपार,
लै कहा सु कीजिये मिलैं जु आय सीयनाह॥
—काव्य सुधाकर

महीधर *

(ल ग के क्रम से २८ वर्ण)

धरी बिशाल पाग है जनौ भरी पराग है,
मनो हिमांशु जाग है सुधा किये।
सुवर्ण गुच्छ हाथ है सुमोर पच्छ माथ है,
रमा जु सुच्छ साथ है बसो हिये।
अनाथ नाथ तात है मनोज पुंज गात है,
सदा हमें सुहात है भलो जिये।
सदैव चक्रपाणि है अधार मानि जानि है,
भरोस आस आनि है हृदै पिये॥
—गदाधर

---

* ल ग क्रम वाले २८ वर्ण से प्रायः बत्तीस वर्णों तक के छन्द अनंगशेखर के अन्तर्गत प्रचलित हैं। महीधर एक तरह से अनंग-शेखर का ही भेद है। ३२ वर्ण से अधिक के भी अनंग शेखर छन्द हो सकते हैं पर उनमें लघु गुरु के जोड़े रहने आवश्यक हैं अर्थात् लघु-गुरु के क्रम से वर्ण संख्या सम रहनी आवश्यक है।

अनंग शेखर (द्विनराच, महानराचिका)

(ल ग के क्रम से इच्छित वर्ण)

(१)

गरज्जि सिंहनाद लों निनाद मेघनाद वीर,
क्रुद्ध मान सान सों क्रसानु बान छंडियं ।
लखी अपार तेज धार लक्खनौ कुमार वारि,
बान सों अपार धार वर्षि ज्वाल खंडियं ।
उड़ाय मेघमाल कों उताल रच्छपाल बाल,
पौन बान अत्र घाल कीस जाल दंडियं ।
भयो न होत होयगो न ज्यों अमान इन्द्रजीत,
रामचन्द्र बन्धु सों कराल युद्ध मंडियं ॥

—लक्ष्मण शतक

(२)

सदा कृपानिधान हौ, कहा कहौं सुजान हौ,
अमानि दान मान हौ, समानि काहि दीजिये ।
रसाल सिंधु प्रीति के, भरे खरे प्रतीति के,
निकेत नीति रीति के, सुदृष्टि देख जीजिये ।
टकी लगी निहारियै सु आप त्यों निहारियै,
समीप ह्वै बिहारिये उमंग रंग भीजिये ।
पयोद मोद छाइये, बिनोद को बढ़ाइये,
विलंब छाँड़ि आइये किधौं बुलाय लीजिये ॥

—घनानंद

बसुधाधर

(स ८ + ल ल)

तजि मान अहै बलि मानि कह्यो करिये-
तनु चारु सिंगार, रचौ सुभ चन्दन।
सज हार मनोहर फूलनि के उर पै,
अति श्वेत दुकूल सम्हार सुछन्दन।
अपने मुख चारु सुधानिधि की कर सों,
मुख सौतिन के करिये अरविन्दन।
चलिये यमुना-तट मंजुल कुंजन में,
जहँ रास सुचारु रच्यो नँद-नंदन॥

—हरदेव

कलाधर

नील चक्र छन्द के चरणान्त में एक गुरु बढ़ा देने से कलाधर छन्द होता है—

जाय के भरत्थ चित्रकूट राम पास बेगि,
हाथ जोरि दीन ह्वै सुप्रेम ते बिनै करी।
सीय तात मात कौशिला वशिष्ठ आदि पूज्य,
लोक वेद प्रीति नीति की सुरीति ही धरी।
जान भूप बैन धर्मपाल राम ह्वै सकोच,
धीर दै गँभीर बंधु की गलानि है हरी।
पादुका दई पठाय औध को समाज साज,
देख नेह राम सीय के हिये कृपा भरी॥

—काव्य कुसुमाकर

मुक्तक ❀

अनियमित दण्डक†

सोलह और चौदह के विराम से तीस वर्ण का अनियमित दण्डक छन्द होता है। इसके चरणान्त में प्रायः गुरु अथवा मगण रहता है:—

(१)

जाके चूड़ा में जो बाँकी गुम्फित कपाल-माल,
रस्कत अररर तहाँ गंग-वारी।
विज्जु छटा तुल्य जो ललाट लोचन की ज्योति,
वासों मिलि जगमगै तासु प्रभा प्यारी।

❀ मुक्तक प्रायः लय प्रधान होते हैं। लय ठीक ठीक रखने के लिए सम पद के बाद सम पद और विषय पद के बाद विषम पद रखने चाहिएँ। पद से तात्पर्य है विभक्ति सहित शब्द; जैसे:—रामहिं, मोहि, आदि वर्णों वाले सम पद कहलाते हैं।

ध्वनि का निर्णय छन्द के प्रथम चरण के आद्यष्टक में ही कर लेना चाहिए। आगे का क्रम उसी के अनुसार ठीक रखने से लय ठीक रहती है। मुक्तकों में यति आठ आठ वर्णों पर होनी चाहिए और यदि ऐसा न हो सके तो मनहरणादि में सोलह, पन्द्रह आदि पर लगाना भी ठीक है।

† महाकवि 'देव' ने ३० वर्ण से लेकर ३३ वर्ण तक के मुक्तक दण्डकों को अनियमित दण्डक भी कहा है क्योंकि गण-क्रम और गुरु लघु आदि का कोई नियम इन पर लागू नहीं होता।

कोमल सु-केतकी कली की कोर ताकौ जहँ,
भ्रम होत चारु बाल चन्द्र को निहारी।
ऐसे चन्द्रमौलि के भुजंग बल्लरी सों चन्दु,
बँधे, जटाजूट हरैं विपति तुम्हारी॥

(२)

आनँद सों नन्दीगन मुरज बजावैं, सुनि-
आवै मानि गरज कुमार मोर प्यारौ।
तिह डर फनहिं सिकोर भाजि प्रविसत,
जिन सूँड़ि रन्ध्र माहिं बासुकी बिचारौ।
चिंघरत तासों, शिव ताण्डव में, गुंजें दिसि,
मद-लोभ भौंर-पुंज डोलै मतवारो।
यहि सों डुलाइबौ स्वसीस गननायक कौ,
होहि सब भाँति सों सहायक तुम्हारौ॥

—कविरत्न सत्यनरायण

मनहरण * (मनहर, घनाक्षरी)

इस छन्द के प्रत्येक चरण में सोलह और पन्द्रह के विराम से इकतीस वर्ण होते हैं और चरणान्त में कम से कम अन्त्य-वर्ण अवश्य गुरु रहता है—

---

* आगे एक नोट में बतलाया जा चुका है कि मुक्तक दण्डकों की लय ठीक रखने के लिए सम के बाद सम और विषम के बाद विषम पद रखने चाहिएँ। घनाक्षरी के शब्द बिठाने के कुछ नियम 'रत्नाकर' जी

(१)

बोधि बुधि बिधि के कमण्डल उठावत ही,
धाक सुर-धुनी की धसी यों घट-घट मैं ।
कहैं 'रतनाकर' सुरासुर ससंक सबै,
बिबस बिलोकत लिखे से चित्र-पट मैं ।
लोकपाल दौरन दसौं-दिसि हहरि लागे,
हरि लागे हेरन सुपात बरबट मैं ।
खसन गिरीस लागे, त्रसन नदीस लागे,
ईस लागे कसन फनीस कटि-तट मैं ॥

—रत्नाकर

ने लिखे हैं वे यहाँ उद्धृत किये जाते हैं । विस्तार भय से उन नियमों के अनुसार उदाहरण नहीं दिये जा सकते ।

नियम

१. मुक्तक दण्डकों (घनाक्षरी आदि) के आदि में तथा चार, आठ, बारह, सोलह, बीस, चौबीस और अट्ठाईस वर्णों के पश्चात् यदि कोई शब्द आरंभ हो तो उस के आदि में जगण (। ऽ ।) तथा रगण (ऽ । ऽ) न पड़ने पावें । साथ ही यह भी ध्यान रहे कि ऐसे शब्द के आरंभ में यगण (। ऽ ऽ) और मगण (ऽ ऽ ऽ) के आ जाने से भी लय मध्यम श्रेणी की होजाती है ।

२. यदि कोई शब्द पाँच, नव तेरह, सत्रह, इक्कीस, पच्चीस, अथवा उन्तीस अक्षर पर समाप्त हो तो उस शब्द के अन्त में लघु-गुरु (। ऽ) पड़ने चाहिएँ और यदि गुरु-गुरु (ऽ ऽ) अर्थात् दो गुरु

(२)

चलो है सुवीर धीर अमंद हँकारे देत,
अंग दहकारे देत दानव ही धर के।
गयो 'ललितेश' तहाँ बैठो दानवेश जहाँ,
दंपति निहारै एक एकै नन भर के।
लंक परो सोर चहूँ ओर खोर खोरन में,
केसरी किसोर फेर आइगो निंदरिके।
तारा पति पूतै तारा पति सम देख तहाँ,
तारा इव मुँदै नन तारा तमीचर के॥

—ललितेश

उस के अन्त में पड़ें तो यद्यपि उस की गति सर्वथा तो नष्ट नहीं होती पर मध्यम श्रेणी की जरूर हो जाती है।

३. पाँच, नव, तेरह, सत्रह, इक्कीस, पच्चीस तथा उन्तीस वर्णों के बाद जो शब्द आवे वह यदि एक ही वर्ण का हो तो चाहे लघु हो चाहे गुरु परन्तु यदि एक अक्षर से अधिक का हो तो उस के आदि में लघु होना चाहिए।

४. दो, छः, दस, चौदह, अट्ठारह, बाइस तथा छब्बीस वर्णों के बाद यदि कोई शब्द आवे तो उसके आदि में जगण (ऽ। ऽ) तगण (ऽ ऽ ।), मगण (ऽ ऽ ऽ) तथा यगण (। ऽ ऽ) मध्यम गति के होते हैं।

५. तीन, सात, ग्यारह, पन्द्रह, उन्नीस, तेईस तथा सत्ताईस अक्षरों के बाद जो शब्द आवे और एक अक्षर से अधिक का हो तो

(३)

देखत ही आसु ताहि काल के हवाले करौं,
बाज के समान त्यों कपोत सो पकरिहौं।
संग 'रामनारायन' जंग को बिरंचि आवैं,
याही रंग-भूमि बीच कीच सो कचरिहौं।
मोचि हौं गुरू को सोच आपनी न राखौं पोच,
भाखौं प्रण पारि भौन फेरि पाँव धरिहौं।
नीलकंठ जू को जिन तोरो है कोदंड चंड,
ताके भुजदंड आज खंड-खंड करिहौं॥

—रामनारायण दास 'अवधूत'

(४)

चीखते थे हाथी हय हींसते थे बार बार,
बैरियों में रल्ला सुन हल्ला पड़ जाता था।
कट्ट कट्ट रुण्ड मुण्ड भुण्ड झख मारते थे,
झट्ट पट्ट बीरता का झण्डा गड़ जाता था।
हेकड़ों की हेकड़ी दबाके दुम भागती थी,
मुग़लों का सारा मद मान झड़ जाता था।
लेकर स्वतंत्रता की तेज तलवार जब,
प्रणवीर प्रबल प्रताप अड़ जाता था॥

--हरिशंकर शर्मा

उसके आरंभ में लघु-गुरु (। ऽ) का होना आवश्यक है। पर यदि एक ही अक्षर का शब्द हो तो उसके लिए कुछ नियम नहीं है।

—कविकौमुदी से उद्धृत

(५)

देते हैं दिखाई सब दृश्य अभिराम यहाँ,
सुषमा सभी की सुधि श्याम की दिलाती है।
फूली फली सुरभित रुचिर द्रुमालियों से,
सुरभि उन्हीं की दिव्य देह की ही आती है।
सुयश उन्हीं का शुक सारिका सुनाती सदा,
कूक कूक कोकिला उन्हीं का गुण गाती है।
हरी भरी दृग-सुखदाई मन-भाई मंजु,
यह ब्रजमेदिनी उन्हीं की कहलाती है॥

—ठाकुर गोपालशरणसिंह

(६)

हाँसी बिन हेत माँहि दीसति बतीसी कछु,
निकसी मनो है पाँति ओछी कलिकान की।
बोलन चहत बात टूटी सी निकसि जति,
लागति अनूठी मीठी बानी तुतलान की।
गोद तें न प्यारो और भावे मन कोई ठाँव,
दौरि दौरि बैठें छोड़ि भूमि अँगनानि की।
धन्य धन्य वे हैं नर मैले जो करत गात,
कनियाँ लगाय धूरि ऐसे सुवनान की॥

—राजा लक्ष्मणसिंह

(७)

सुनसान कानन भयावह है चारों ओर,
दूर दूर साथी सभी हो रहे हमारे हैं।

काँटे बिखरे हैं कहाँ जावें जहाँ पावें ठौर,
छूट रहे पैरों से रुधिर के फुहारे हैं।
आ गया कराल रात्रिकाल, हैं अकेले यहाँ,
हिंस्र-जन्तुओं के चिन्ह जा रहे निहारे हैं।
किस को पुकारें यहाँ रोकर अरण्य-बीच,
चाहे जो करो शरण्य! शरण तुम्हारे हैं॥
—सियाराम शरण गुप्त

रूप घनाक्षरी

इस छन्द के प्रत्येक चरण में सोलह-सोलह के विराम से बत्तीस वर्ण होते हैं और चरणान्त में गुरु लघु अथवा लघु रहता है†: —

(१)

गोरे गोरे पायँन सों कढ़ि रही मंद मंद,
पायल औ घुँघुरू की रसभरी झनकार।
कर बीच कंकन औ कटि बीच किंकिनी हू,
खनकि उठति संग पूरी करि बार बार।
धारि जो सितार हाथ पास पास चलो जात,
आँगुरी चलाय रह्यो भूमि झनकारि तार।
तीर धरि तासु अलबेली मृदु-तान छाँड़ि,
गाय उठीं गीत यह अंग गति अनुसार॥
—रामचन्द्र शुक्ल (बुद्ध चरित)

---

† कहीं कहीं चरणान्त में गुरु भी पाया जाता है, जैसा कि पद्माकर के उदाहरण में दिये हुए तीसरे छन्द से स्पष्ट है।

(२)

छन छन छीजत न देखहिं समाज-तन,
हेरहिं न विधवा छ टूक होत छतियान।
जाति को पतन अवलोकहिं न आकुल है,
भूलि ना विलोकहिं कलंकी होत कुल मान।
'हरिऔध' छिनत लखहिं न सलोने लाल,
लुटत निहारहिं न लोनी-लोनी ललनान।
खोले कछु खुली पै कहाँ हैं ठीक-ठीक खुलीं,
अधखुली अजौं हैं हमारी खुली अँखियाँ न॥

—रसकलस

(३)

चालै क्यों न चंदमुखी, चित में सुचैन करि,
तित वन बागन घनेरे अलि घूमि रहे।
कहै 'पदमाकर' मयूर मंजु नाचत हैं,
चाय सों चकोरिनि चकोर चूमि चूमि रहे।
कदम अनार आम, अगर असोक थोक,
लतनि समेत लोने लोने लगि भूमि रहे।
फूलि रहे फल रहे, फैलि रहे फबि रहे,
झपि रहे झालि रहे, झुकि रहे झूमि रहे॥

—पद्माकर

डमरू

इस छन्द के प्रत्येक चरण में आठ, आठ, अथवा सोलह-सोलह के विराम से बत्तीस वर्ण होते हैं जो सब लघु रहते हैं:—

मख[1] -हन, मरदन-मयन नयन त्रय,
बटतर अयन रजत-परवत-पर।
चरम बसन तन, भसम प्रथम-गन,
ससधर[2]-धरन, गरल-गर-गरधर[3]।
हरन व्यसन[4] जन, करन-अमल-मन,
भज मन ! असरन-सरन अमर-वर।
चढ़त बरद बर, बरद[5] प्रनत-रत,
हरत जगत-भय, जय जय जय हर ॥

—भारती-भूषण

जल हरण

इस छन्द के प्रत्येक चरण के अन्त में सोलह-सोलह के विराम से बत्तीस वर्ण रहते हैं और पदान्त में प्रायः दो लघु रहते हैं:—

चलन हिंडोर की कदम्बन हलाये देति,
फूलन बिछाये देति झूकनि की झमकनि†।
मोतिन की माल बक-पाँतिन उड़ाए देति,
भूषन पराये देति जीगन की चमकनि।
'ललित' सुगान तान पिक सरमाये देति,
भौंरन भ्रमाए देति केशन की लमकनि।

---

१. यज्ञ, २. चन्द्रमा, ३. विष और साँपों को धारण करने वाले।
४. दुःख, ५. वर देने वाले।

† 'म' का हल्वत् उच्चारण होने से उसके पहले के वर्ण का उच्चारण गुरुवत् समझना चाहिए।

साँवरे सलोने कान्ह मेघन हराये देति,
कामिनी दबाये देति दामिनि की दमकनि ॥

—ललित

कृपाण* (किरपान)

इस छन्द के प्रत्येक चरण में आठ, आठ, आठ और आठ के विराम से बत्तीस वर्ण होते हैं । प्रत्येक अष्टक के अन्त्य वर्ण सानुप्रास होते हैं और चरणान्त में गुरु-लघु रहता है:—

चली है के विकराल, महाकाल हू को काल,
किये दोऊ दृग लाल, धाइ रन समुहान।
जहाँ क्रुद्ध है महान, युद्ध करि घमसान,
लोथि लोथि पै लदान, तड़पी ज्यों तड़ितान।
जहाँ ज्वाला कोट भान, के समान दरसान,
जीव जन्तु अकुलान, भूमि लागी थहरान।
तहाँ लागे लहरान, निसिचर हू परान,
वहाँ कालिका रिसान, झुकि झारी किरपान॥

—जानकी समर

विजया

आठ, आठ, आठ, आठ के विराम से बत्तीस वर्ण का छन्द होता है। चरणान्त में लघु गुरु अथवा नगण रहता है। ‡

---

* यह छन्द प्रायः वीर रस में प्रयुक्त होता है । इस छन्द के चरणान्त में 'नकार' अधिक कर्ण-प्रिय लगता है ।

‡ इस छन्द में सम सम के अतिरिक्त दो विषमों के बीच सम पद भी होता है ।

(१)

भार के उतारिवे कों, अवतरे रामचन्द्र,
किधौं केशोदास भूमि, भारत प्रबल दल।
टूटत हैं तरुवर, गिरैं गन गिरिवर,
सूखे सब सरवर, सरित सकल जल।
उचकि चलत कपि, दचकनि दचकत,
मंच ऐसे मचकत, भूतल के थल थल।
लचकि लचकि जात, सेस के असेस फन,
भाग गई भोगवती, अतल वितल तल॥

—रामचन्द्रिका

देव घनाक्षरी

इस छन्द के प्रत्येक चरण में आठ, आठ, आठ और नव के विराम से तेतीस वर्ण होते हैं और चरणान्त में नगण रहता है†—

झिल्ली झनकारैं पिक, चातक पुकारैं बन,
मोरनि गुहारैं उठैं, जुगनू चमकि चमकि।
घोर घन कारे भारे, धुरवा धुरारे धाय,
धूमनि मचाव नाचैं, दामिनी दमकि दमकि॥
झूकनि बयारि बहै, लूकनि लगावै अंग,
हूकनि भभूकनि की, उर में खमकि खमकि।
कैसे करि राखौं प्राण, प्यारे जसवंत बिना,
नान्हीं नान्हीं बूँद झरैं, मेघवा झमकि झमकि॥

—जसवंतसिंह

†चरणान्त में 'नगण' का दो बार आना कर्ण-प्रिय लगता है।

अनुष्टुप*

इस छन्द के प्रत्येक चरण में आठ वर्ण होते हैं। पहले और तीसरे चरण का आठवाँ वर्ण तो अवश्य ही गुरु होता है। और सातवाँ वर्ण सदा लघु रहता है। और यदि आठवाँ वर्ण गुरु रहता है तो छन्द अधिक प्रिय लगता है। ×

(१)

देखो आही गया लोगो, ग्रीष्मकाल भयावना।
संताप नित्य देते ये, मित्र भी शत्रु हो गये॥

—अम्बिकादत्त 'व्यास'

(२)

स्वस्तिवाद विरक्तों का, और ही कुछ वस्तु है।
वाक्यों में उनके होता, ईश का एवमस्तु है॥

—मैथिलीशरण गुप्त

(३)

अपनाके किसी को यों, छोड़ना ठीक है नहीं।
जोड़ के गहरा नाता, तोड़ना ठीक है नहीं॥

—मैथिलीशरण गुप्त

---

* यह छन्द गण-क्रम पर पूरा पूरा नहीं ठहरता। इसी से इसे मुक्तक माना गया है।

× भानुजी इस छन्द का लक्षण इस तरह बतलाते हैं कि इसके प्रत्येक चरण में पाँचवाँ वर्ण लघु और छठा गुरु रहता है। और सम (दूसरे-चौथे) चरणों में सातवाँ वर्ण लघु रहता है।

पयार *

इस छन्द के प्रत्येक चरण में चौदह वर्ण होते हैं। प्रायः चरणान्त का वर्ण लघु रहता है:—

(१)

विकच कमल कमनीय कलाधर।
मंद मंद आन्दोलित मलय पवन॥
तरल तरंग माला संकुल जलधि।
परम आनन्द मय नन्दन-कानन॥

(२)

संघ-शक्ति इस युग का है मुख्य धर्म।
जाति संगठन इस काल का है तंत्र॥
सर्वत्र एकीकरण का है घोर नाद।
सहयोग आज कल का है महामंत्र॥

(३)

किन्तु हम आज भी हैं प्रतिकूल गति।
आज भी विभिन्नता ही में हैं हम रत॥
बची खुची रही सही जो थी संघ-शक्ति।
छिन्न भिन्न हो रही है वह भी सतत॥

---

* यह छंद बँगला का है। अब हिन्दी में भी यह छन्द व्यवहृत होने लगा है। प्रत्येक शब्द के अन्त्य-अकारान्त वर्ण को स-स्वर पढ़ने से लय मधुर हो जाती है। बँगला में अकारान्त वर्ण का स-स्वर ही उच्चारण होता है।

(४)

जातीय सभाएँ जाति जाति के समाज।
नाना जातियों के भिन्न भिन्न पाठागार ॥
जिस भाँति संचालित हो रहे हैं आज।
सहकारिता का कर देवेंगे संहार ॥

(५)

काव्यता को कैसे प्राप्त होगा वह काव्य।
जिस काव्य से न होवे जातीय-उत्थान ॥
वह कविता है कभी कविता ही नहीं।
जिस कविता में न हो जातीयता-तान ॥

—'हरिऔध'

मिताक्षरी* (प्रियाल)

इस छन्द का प्रत्येक चरण पन्द्रह या सोलह वर्ण का होता है। पन्द्रह वर्ण वाले छन्द के चरणान्त में एक गुरु अवश्य रहता है और सोलह वर्ण वाले छन्द के चरणान्त में गुरु लघु रहता है:--

---

* इस छन्द का पन्द्रह वर्ण वाला चरण मनहरण के चरण का उत्तरार्द्ध और सोलह वर्ण का रूपघनाक्षरी के चरण का आधा होता है।

इस छन्द में तुकान्त और अतुकान्त दोनों ही तरह से रचना की जा सकती है। क्षेत्र विस्तृत है। गति के लिए भी स्वतंत्रता है। जहाँ अर्थ की पूर्णता हो अथवा श्वास पतन हो वहीं यति दी जा सकती है।

(१)

आर्यवंश-भूषण शिवाजी महाराज के—
पूज्य चरणों में, इस दासी जेबुन्निसा के,
भक्ति युत शतशः प्रणाम अंगीकृत हों।

— हृदयेश

(२)

चलता चिरानुचर वायु था वसंत का
सुस्वर से, देवी के पदाब्ज-परिमल की
आशा कर। चारों ओर शोभित थे फूल यों-
रत्न ज्यों धनाधिप के धन्य धनागार में।

—'मधुप'

इसी तरह चरण रखने की भी स्वतंत्रता है। तीन, पाँच, आठ आदि कितने ही चरण रख सकते हो! ऊपर कई उदाहरण देकर ये बातें स्पष्ट कर दी गई हैं।

घनाक्षरी शब्दों के होते हुए इस की रचना का हेतु यही है कि घनाक्षरी के चारों चरणों के अन्तर्गत एक बात पूरी कर देने की पुरानी प्रथा है। इस छन्द में धारावाहिक ढंग से विषय का वर्णन कितने ही चरणों में किया जा सकता है।

वास्तव में यह ढंग बँगला से लिया गया है। वहाँ इस तरह का चौदह वर्ण का छन्द है। बँगला में 'में', 'से' आदि विभक्तियों के लिए अलग वर्ण नहीं होते। बँगला के ढंग पर हिन्दी में रचना के लिए पन्द्रह और सोलह वर्ण का यही छन्द उपयुक्त हो सकता है। 'मधुप' जी ने इस छन्द की सृष्टि की है। और वीरांगना, मेघनाद-वध आदि बंगला काव्य-ग्रंथों का इसी छन्द में अनुवाद किया है।

(३)

मन मन सोचता था बैठ अपराह्न में,
आशैशव जीवन की कितनी कथाएँ मैं,
विश्व-मूढ़ क्रीड़ा, सुख-दुःख लौट फेर त्यों,
जीवन का असंतोष, असम्पूर्ण आशाएँ,
मर्त्य मानवों की अन्त-रहित दरिद्रता।

—मुंशी अजमेरी

(४)

थाह लेना चाहता कपोत ज्यों गगन की,
मन में ही किन्तु रह जाती चाह मन की,
त्यों ही उन की मैं व्यर्थ थाह लेना चाहता,
मानो पूर्ण पारावार को हूँ अवगाहता!

—रायकृष्ण दास

(५)

सालता उसी को है कि लगता जिसे है शेल,
दूसरों का रोदन है लौकिक रुदन खेल।
एक का है लक्ष्य होता अन्य के हिये का तीर!
"जिसे न बिवाँई फटी जाने क्या पराई पीर?"

—'मधुप'

अर्द्ध-सम

गण-वद्ध*

सुंदरी

इसके विषम (पहले-तीसरे) चरणों में 'स स ज ग' के क्रम से दस-दस वर्ण और सम (दूसरे-चौथे) चरणों में 'स भ र ल ग' के क्रम से ग्यारह-ग्यारह वर्ण रहते हैं:—

चिरकाल रसाल ही रहा। जिस भावज्ञ कवीन्द्र का कहा।
जय हो उस कालिदास की। कविता-केलि-कलाविलास की।

—साकेत

वेगवती

इस छन्द के विषम (पहले-तीसरे) चरणों में 'स स स ग' के क्रम से दस-दस वर्ण और सम (दूसरे-चौथे) चरणों में 'भ भ भ ग ग' के क्रम से ग्यारह-ग्यारह वर्ण रहते हैं :—

गिरिजापति मो मन भायो। नारद शारद पार न पायो।
कर जोर आधीन अभागे। ठाढ़ भये वर दायक आगे।

—गदाधर

पुष्पिताग्रा (चित्र)

इस छन्द के विषम चरणों में 'न न र य' के क्रम से बारह-बारह वर्ण और सम चरणों में 'न ज ज र ग' के क्रम से तेरह-तेरह वर्ण रहते हैं :—

---

* अर्द्ध-सम छन्दों का चलन बहुत कम है। इसी से यहाँ थोड़े से उदाहरण दे दिये गये हैं।

परिपतति पयोनिधौ पतंगः। सरसिरुहामुदरेषु मत्त भृंगः।
उपवन तरु कोटरे विहंगः। तरुणि जनेषु शनैः शनैरनंगः॥

—भोज और कालिदास

अम्बर

इसके विषम चरणों में 'ज ज ज ल ग' के क्रम से ग्यारह-ग्यारह और सम चरणों में 'भ भ भ ग' के क्रम से दस-दस वर्ण रहते हैं :—

सिखी तिय को ! जन की तिय को ?, मूरिको ? पायल भेद करी।
तपी कहि काहि रमा पियको ? को वर मौन जपै जु हरी ?॥

—समनेस

अपर चक्र

इसके विषम चरणों में 'न न र ल ग' के क्रम से ग्यारह-ग्यारह वर्ण और सम चरणों में 'न ज ज र' के क्रम से बारह-बारह वर्ण रहते हैं:—

अँसुवनि नहिं तोरती लली, सखिहुँ न जान कहा दुखै किये।
लहिय खबरि नैहरो भली, पिय परभातहि ते हिये लिये॥

—समनेस

द्रुतमध्यक

इसके विषम चरणों में 'भ भ भ ग ग' के क्रम से ग्यारह-ग्यारह वर्ण और सम चरणों में 'न ज ज य' के क्रम से बारह-बारह वर्ण होते हैं:—

कौतुक आज कियो बनमाली। जल बिच कूदि परेउ सुनि आली।
नाथि फनिन्दिहि तोषि फनिन्दी। प्रगट भयो द्रुत मध्य कलिन्दी ॥

—दास

उपचित्रक

इसके विषम चरणों में 'स स स ल ग' के क्रम से ग्यारह-ग्यारह वर्ण और सम चरणों में 'भ भ भ ग ग' के क्रम से ग्यारह-ग्यारह वर्ण होते हैं:—

न उठे कर जासु सलाम को। बात कहै मिल उत्तर नाहीं।
न करो दुख मानव जानि कै। मित्र सु है उप चित्रक माहीं ॥

—दास

किरीटमुख *

इसके विषम में आठ भगण और सम चरणों में आठ सगण रहते हैं:—

मा मन गो जकि त्यों हियरो न बिलोकि सकै चख सों बदनै बर।
सरि सिंधु बनै हरि बाघ करी मृग ब्याल सुरी सुर जाल तके।
मानव दानव गोकुल किन्नर वानर भूधर भूचर खेचर।
ब्रज ग्वारि गुवारिनि आपनपौ नँदलाल बिलोकत भीति चके ॥

—समनेस

---

* अनेक सवैयों के मेल से इस तरह अर्द्ध-सम छन्द बन सकते हैं।

अर्द्धसम मुक्तक

विरहा

इस छन्द के विषम (पहले-तीसरे) चरणों में सोलह-सोलह और सम (दूसरे-चौथे) चरणों में दस-दस वर्ण रहते हैं। सम चरणों के अन्त में गुरु-लघु अथवा जगण रहता है:—

(१)

जनम जनम कर पुनवाँक फर मोरे गवरि गुसाँइनि जू हेरि।
मैया जोर करवा मैं माँगों यहै बरवा जे, कीजे बलबिरवा की चेरि॥

—बलवीर

(२)

आज बरसाइत रगरवा मचावो जिन, नहकै झगरवा उठाय।
अपनों ही बरवा मैं पूजौं बलविरवा पी, बरवा पूजन तू ही जाय॥

—बलवीर

---

* सोरहे बरन पर करि विसराम जामें, बहुरि बरन दसलाय।
छबिस अछरिया के रचत चरन जाके, विरहा सो छँदवा कहाय॥
गुरु लघु कर कछु नियम करहिं नहिं, पद अंत गुरु-लघु होय।
चार हू चरन करि कोई कवि विरचहिं, दुइ पद कार कवि कोइ॥

—कन्हैयालाल मिश्र

यह छन्द पुरवी भोजपुरिया भाषा के लिए बहुत उपयुक्त है।

विषम

जो वर्ण वृत्त न तो सम ही हैं और न अर्द्धसम ही ; वही विषम कहलाते हैं।

गणबद्ध (साधारण)

उद्गता (उदाता)

इस छन्द के पहले चरण में 'स ज स ल' दूसरे में 'न स ज ग' तीसरे में 'भ न ज ल' और चौथे में 'स ज स ज ग' का क्रम रहता है :—

कहि काम बाम दिन मास । सत कहि कहै मनोज ई।
संभु सु तिय कहि बानहि । त्रिपुरै हनो को केहि सों रतीस ई॥

—समनेस

सौरभक (सौरभ)

इस छन्द के पहले चरण में 'स ज स ल' दूसरे में 'न स ज ग' तीसरे में 'र न भ ग' और चौथे में 'स ज स ज ग' का क्रम रहता है :—

जड़ कौन को कहत वेद । जगत जन रंक को सही।
कौन नारि पति नेम लिये । कहि ज्ञान काहि जग हीन मानही॥

—समनेस

मंजु माधवी *

इस छन्द के पहले चरण में इन्द्रवंशा के, दूसरे में इन्द्रवज्रा

---

* भानु जी ऐसे छन्दों को जो उपजातियों के मेल से बनते हैं और जिनके विषम चरणों में बारह और सम चरणों में ग्यारह वर्ण

के, तीसरे में वंशस्थविलम् के और चौथे में उपेन्द्र-वज्रा के चरण रहते हैं।

मैंने कहा आज निकुंज शून्य है।
सूनी पड़ी हैं ब्रज वीथिकाएँ॥
न कूल में श्री यमुना निकुंज में।
कभी किसी ने घनश्याम देखे?

—श्रीवर

आपीड़ *

इस छन्द के पहले चरण में आठ, दूसरे में बारह, तीसरे में सोलह और चौथे में बीस वर्ण रहते हैं और प्रत्येक चरण के अन्त के दो वर्ण गुरु और शेष सब लघु रहते हैं:—

प्रभु असुर सु हर्त्ता।
जग विदित पुनि जगत भर्त्ता।
दनुज-कुल अरि जग-हित धरम धर्त्ता।
अस प्रभु कहँ सरवस तज भज भव-दुख हर्त्ता॥

—गदाधर

होते हैं मंजु-माधवी को अर्द्धसम वृत्त मानते हैं। परन्तु जब ऐसे छन्दों के चारों चरणों के गण भिन्न भिन्न हैं तो उन्हें अर्द्धसम मानना ठीक नहीं जँचता। इसी से हम इसे मंजु-माधवी नाम से गणबद्ध विषम में रख रहे हैं। श्रीवर जी ने उपजाति छन्दों के मेल से ऐसे और भी अनेक छन्द रचे हैं।

विषम छन्दों का चलन अभी हिन्दी में नाम को ही है। इसी से यहाँ केवल दिग्दर्शन मात्र कराया गया है।

* इसे भी गण-बद्ध ही समझना चाहिए। ऐसे ही और भी अनेक छन्द हैं।

विषम-मुक्तक

विषम-मुक्तकों का चलन अभी तक हिन्दी में नहीं के बराबर ही है। भानुजी ने 'अनंगक्रीड़ा' और 'सौम्यशिखा' नाम के छन्दों को विषम-मुक्तकों में माना है। पर अनंगक्रीड़ा के पहले दल में सब वर्ण गुरु होते हैं दूसरे दल में सब वर्ण लघु होते हैं। अतः इसे गणवद्ध ही मानना ठीक है। अधिक स्पष्टता के लिए हम यहाँ अनंगक्रीड़ा को उदाहरण स्वरूप रखते हैं:—

आठौ यामा शंभू गावै।
सद्भक्ती तैं मुक्ती पावै॥
सिख मम धरि हिय भ्रम सब तजि कर।
भज नर हर हर हर हर हर हर॥

—छन्दःप्रभाकर

सौम्यशिखा इसका बिलकुल उलटा है उसका उदाहरण देने की आवश्यकता नहीं है।

हाँ मरहठी में अभंग और ओंबी नाम से विषम-मुक्तकों में रचना होती है। उदहरणार्थ हम एक ओंबी छन्द देते हैं:—

ओंबी

इसके पहले चरण में आठ, दूसरे में नव, तीसरे में दस और चौथे में चार वर्ण हैं:—

आतां बंदू कवीश्वर। जे शब्द सृष्टी चे ईश्वर।
नाहीं तरीं हे परमेश्वर। वंदावे ते॥

—समर्थ गुरु रामदास

वर्णिक-मिलिन्दपाद

प्रमाणिका-मिलिन्दपाद

सुधार धर्म कर्म को। बिसार दो अधर्म को॥
बढ़ाय बेलि प्रीति को। कथा सुनीति रीति को॥
सुना करो अनेक से।
मिलो महेश एक से॥

—नाथूराम 'शंकर' शर्मा

भुजंगी-मिलिन्दपाद

(१)

अरे ओ अजन्मा ? कहाँ तू नहीं। न कोई ठिकाना जहाँ तू नहीं॥
किसी ने तुझे ठीक जाना नहीं। इसी से यथा तथ्य माना नहीं॥
शिखा सत्य की झूठ ने काटली।
न विज्ञान फूला न विद्या फली॥

—नाथूराम 'शंकर' शर्मा

(२)

यहीं स्वर्ग चाहे बना लीजिए। यहीं नारकी सृष्टियाँ कीजिए॥
नहीं कौन सी साधना है यहाँ ? वहीं सिद्धि है साधना है जहाँ॥
महा-साधना-क्षेत्र संसार है।
मनुष्यत्व ही मुक्ति का द्वार है॥

—मैथिलीशरण गुप्त

त्रोटक-मिलिन्दपाद

(१)

मत-भेद भयानक-पाप रहा। बिन प्रेम न मेल मिलाप रहा॥
अभिमान अधोमुख ठेल रहा। अधमाधम ढोंग ढकेल रहा॥
सुख-जीवन का मग तंग हुआ।
बस भारत का रस भंग हुआ॥

—नाथूराम 'शंकर' शर्मा

(२)

जल-तुल्य निरंतर स्वच्छ रहो। प्रबलानल ज्यों अविरुद्ध रहो॥
पवनोपम सत्कृति शील रहो। अवनीतलवद् धृतिशील रहो॥
करलो नभ-सा शुचि जीवन को।
नर हो, न निराश करो मन को॥

—मैथिली शरण गुप्त

द्रुतविलम्बित-मिलिन्दपाद

यदि अभीष्ट तुम्हें निज सत्व है। प्रिय तुम्हें यदि मान महत्व है॥
यदि तुम्हें रखना निज नाम है। जगत में करना कुछ काम है॥
मनुज ! तो श्रम से न डरो, उठो।
पुरुष हो, पुरुषार्थ करो, उठो॥

—मैथिलीशरण गुप्त

स्रग्विणी-मिलिन्दपाद

(१)

दूर क्यों भागते हो भले कर्म से ? क्यों घृणा हो गई है तुम्हें धर्म से ?
शून्य ही हो गये नीति के मर्म से; शीश तो भी झुका है नहीं शर्म से॥

तापसंताप से नित्य रोते रहो ;
क्यों जगोगे, अभी देश ! सोते रहो ॥

(२)

ज्ञान से मान से, शक्ति से, हीन हो; दान से, ध्यान से, भक्ति से, हीन हो ॥
आलसी भी महामूढ़ ! प्राचीन हो; सोच देखो सभी से तुम्हीं दीन हो ॥
अंग को आँसुओं से भिगोते रहो ।
क्यों जगोगे, अभी देश ! सोते रहो ॥

—रामचरित उपाध्याय

भुजंगप्रयात-मिलिन्दपाद

अजन्मा न आरंभ तेरा हुआ है। किसी से नहीं जन्म मेरा हुआ है ॥
रहैगा सदा अंत तेरा न होगा। किसी काल में नाश मेरा न होगा ॥
खिलाड़ी खुला खेल तेरा रहैगा ।
मिटेगा नहीं मेल मेरा रहैगा ॥

—नाथूराम 'शंकर' शर्मा

पंचाचामर-मिलिन्दपाद

चलो अभीष्ट मार्ग में सहर्ष खेलते हुए,
विपत्ति विघ्न जो पड़ें उन्हें ढकेलते हुए।
घटे न हेल मेल हाँ बढ़े न भिन्नता कभी,
अतर्क एक पंथ के सतर्क पंथ हों सभी ।
तभी समर्थ भाव है कि तारता हुआ तरे ।
वही मनुष्य है कि जो मनुष्य के लिए मरे ॥

—मैथिलीशरण गुप्त

तीसरा उल्लास

प्रत्ययों की आवश्यकता

प्रायः कहा जाता है कि छन्द-रचना के नियमों के साथ प्रत्ययों के जानने की क्या आवश्यकता है ? यह तो गणित का विषय है, गणित का चमत्कार है ! इस विषय में माथापच्ची करना निरी दिमागी कसरत करना है क्योंकि छन्द-रचना में इसकी आवश्यकता ही नहीं पड़ती ! यह कहना ठीक उसी तरह का है कि गणित के सिद्धान्त हमें जानने की क्या आवश्यकता है क्योंकि रोजमर्रा के कामों में तो उसकी जरूरत ही नहीं पड़ती !

सच बात यह है कि छन्द-शास्त्र भी एक प्रकार से विज्ञान का अंग है और विज्ञान का मूलाधार गणित है । हम पहले बतला आये हैं कि छन्द-रचना के मूल सिद्धान्त गुरु-लघु और गणों की गणना पर निर्भर हैं। छंद-शास्त्र के दशाक्षरों का चमत्कार गणित-मूलक है। गणित के चमत्कार के द्योतक प्रत्यय हैं, अतः हम यहाँ संक्षेप में प्रत्ययों की चरचा करते हैं।

प्रत्यय

जिन के द्वारा छन्दों के प्रकार, संख्या तथा उन के शुद्धा-शुद्ध आदि का सम्यक ज्ञान होता है उन्हें 'प्रत्यय' कहते हैं।

प्रस्तार, सूची, नष्ट, उद्दिष्ट, पाताल, मेरु, खण्डमेरु, पताका और मर्कटी ये नव प्रत्यय हैं। कोई कोई विद्वान्, संख्या, नाम का भी दसवाँ प्रत्यय मानते हैं। इन में प्रस्तार, नष्ट, उद्दिष्ट, मेरु, पताका और मर्कटी इन छः प्रत्ययों का जानना बहुत जरूरी है।

१. प्रस्तार

मात्रिक अथवा वर्णिक प्रत्येक छन्द के भेद तथा रूप जानने की रीति को 'प्रस्तार' कहते हैं।

प्रस्तार की रीति

मात्रिक

१. यदि मात्राओं की संख्या सम हो तो पहली पंक्ति में उन मात्राओं की निश्चित संख्या के सब गुरु रूप रखो और यदि विषम संख्या हो तो पहली पंक्ति के आदि में बाएँ छोर पर एक लघु चिन्ह रख कर उस लघु के आगे शेष मात्राओं के सब गुरु चिन्ह रखो।

२. दूसरी पंक्ति जो पहली पंक्ति के नीचे होगी उस के रूप इस प्रकार रखो कि बाएँ छोर से पहली पंक्ति के पहले गुरु के नीचे लघु चिन्ह रखो और फिर इस लघु चिन्ह की दाहिनी ओर पहली पंक्ति के शेष सब रूप ज्यों के त्यों उतार लो । अब दूसरी पंक्ति के इन रूपों की मात्राएँ गिनकर देखो कि मात्राओं की निश्चित संख्या में कितनी मात्राओं की कमी है । जितनी मात्राओं की कमी रहे, इस दूसरी पंक्ति के बाएँ छोर वाले लघु चिन्ह के बाईं ओर गुरु चिन्हों द्वारा पूर्ति करो । और यदि देखो कि बाईं ओर रखे जाने वाले रूपों की संख्या विषम है तो इस संख्या से जितने गुरु बन सकें उतने गुरु रूप उस बाएँ छोर वाले लघु चिन्ह के बाईं ओर रखो और अन्त में बाएँ छोर पर एक लघु रख दो ।

३. अब तीसरी पंक्ति जो दूसरी पंक्ति के नीचे होगी उसे भी दूसरी पंक्ति की तरह ही भरो । अर्थात् दूसरी पंक्ति के भरने में उस (दूसरी पंक्ति) का जो संबंध पहली पंक्ति से रहा वही संबंध इस तीसरी पंक्ति का, इसके भरने में दूसरी पंक्ति से रहेगा । इसी प्रकार चौथी, पाँचवीं आदि पंक्तियों के रूप रखते जाओ । अन्तिम पंक्ति में निश्चित संख्या के सब लघु रूप आजावेंगे जो प्रस्तार का अन्तिम रूप रहेगा ।

उदाहरण—५ (विषम) और ६ (सम) मात्रा वाले छन्दों के जितने रूप हो सकते हैं वे प्रस्तार द्वारा दिखाते हैं:—

५ मात्राओं के रूप *

रूप	क्रम संख्या
।ऽऽ	१
ऽ।ऽ	२
।।।ऽ	३
ऽऽ।	४
।।ऽ।	५
।ऽ।।	६
ऽ।।।	७
।।।।।	८

६ मात्राओं के रूप

रूप	क्रम संख्या
ऽऽऽ	१
।।ऽऽ	२
।ऽ।ऽ	३
ऽ।।ऽ	४
।।।।ऽ	५
।ऽऽ।	६
ऽ।ऽ।	७
।।।ऽ।	८
ऽऽ।।	९
।।ऽ।।	१०
।ऽ।।।	११
ऽ।।।।	१२
।।।।।।	१३

---

* मात्रिक-छन्दों के प्रस्तार का पहला रूप रखने के लिए ध्यान रहे कि निश्चित संख्या में दो का भाग दे ले। जितने अंक भजनफल में आवें उतने गुरु चिन्ह लगावे और जो शेष रहे उसके बजाय एक लघु चिन्ह अन्त में बाँई ओर रखदे। गुरु वनाने का आगे भी यही ढंग है कि संख्या में दो का भाग देता जाय जितना भजनफल मिलता जाय उतने गुरु चिन्ह रखता जाय, जो १ शेष रहेगा उसके बजाय लघु चिन्ह रखे।

इस तरह प्रस्तार द्वारा ज्ञात हो गया कि ५ मात्रा वाले छन्दों के रूप ८ और छः मात्रा वाले छन्दों के रूप १३ होंगे।

वर्णिक

१- जितने वर्णों का प्रस्तार करना हो पहली पंक्ति में उतने ही गुरु चिन्ह रख दो। प्रस्तार का यह पहला रूप होगा।

२. दूसरी पंक्ति जो पहली पंक्ति के नीचे होगी उसके रूप इस प्रकार रखो कि पहली पंक्ति के बाएँ छोर के गुरु के नीचे लघु चिन्ह रखो और फिर इस लघु चिन्ह की दाहिनी ओर पहली पंक्ति के शेष रूप ज्यों के त्यों उतार लो। यह दूसरा रूप होगा।

३. अब तीसरी पंक्ति जो दूसरी पंक्ति के नीचे होगी उसे इस प्रकार भरो कि दूसरी पंक्ति के बाएँ छोर वाले गुरु के नीचे लघु चिन्ह रखो और इस लघु चिन्ह की दाहिनी ओर दूसरी पंक्ति के शेष सब रूप ज्यों के त्यों रखो। अब देखो कि वर्णों की निश्चित संख्या में कितने वर्णों की कमी है। जितने वर्णों की कमी हो उतने ही गुरु चिन्ह इस तीसरी पंक्ति के बाएँ छोर वाले लघु चिन्ह के बाईं ओर रख दो। यह तीसरा रूप होगा। आगे के चौथे पाँचवें आदि शेष रूप इस तीसरी पंक्ति के ढंग पर ही वहाँ तक भरते जाओ जहाँ तक कि सब लघु रूप आ जावें। यह सब लघु रूप ही प्रस्तार का अन्तिम रूप होगा।

उदाहरण—३ (विषम) और ४ (सम) वर्ण वाले छन्दों के सब रूप प्रस्तार द्वारा दिखाओ।

३ वर्णों के रूप

रूप	क्रमसंख्या
ऽ ऽ ऽ	१
। ऽ ऽ	२
ऽ । ऽ	३
। । ऽ	४
ऽ ऽ ।	५
। ऽ ।	६
ऽ । ।	७
। । ।	८

४ वर्णों के रूप

रूप	क्रमसंख्या
ऽ ऽ ऽ ऽ	१
। ऽ ऽ ऽ	२
ऽ । ऽ ऽ	३
। । ऽ ऽ	४
ऽ ऽ । ऽ	५
। ऽ । ऽ	६
ऽ । । ऽ	७
। । । ऽ	८
ऽ ऽ ऽ ।	९
। ऽ ऽ ।	१०
ऽ । ऽ ।	११
। । ऽ ।	१२
ऽ ऽ । ।	१३
। ऽ । ।	१४
ऽ । । ।	१५
। । । ।	१६

३ वर्ण वाले छन्दों के रूप ८ और ४ वर्ण वाले छन्दों के रूप १६ होंगे।

प्रस्तारों का प्रभाव

प्रस्तार द्वारा अनेक नये छन्द बनाने में सहायता मिलती है। मात्रिक छन्दों के लिए प्रस्तार जानना उतना आवश्यक नहीं है जितना कि वर्ण-वृत्तों के लिए आवश्यक है क्योंकि वर्णिक-छन्दों में केवल वर्णों का ही क्रम देखा जाता है। जो भेद प्रस्तार का होगा वही छन्द के चारों चरणों में रहेगा परन्तु मात्रिक-छन्द के चारों चरणों के प्रस्तार-रूप भिन्न भिन्न होते हैं। उसके लिए तो गति और मात्राओं की पूर्ण संख्या होना ही काफ़ी है।

२. संख्या ×

बिना प्रस्तार किये किसी छन्द के रूपों की गिनती बतलाने की रीति को 'संख्या' कहते हैं।

मात्रिक-संख्या जानने की रीति

१. जितनी मात्राओं के प्रस्तार के रूपों की संख्या निकालनी हो उतनी ही संख्या में दोहरी पंक्ति में कोठे बनालो।

२. पहली पंक्ति के कोठों में क्रम-संख्या अर्थात् निश्चित मात्राओं की संख्या रख लो। अब दूसरी पंक्ति के कोठों में रूप के अंक इस प्रकार भरो कि पहले कोठे में १ का अंक, दूसरे

× कोई कोई संख्या को सूची भी कहते हैं। वास्तव में यह भेदांक सूची है।

कोठे में २ का अंक और तीसरे कोठे में ३ का अंक रखो। अब आगे के कोठों की पूर्ति इस प्रकार करो कि खाली कोठे के पास के बाईं ओर वाले दो दो कोठों के अंक जोड़ते जाओ । और क्रमशः आगे के कोठों में रखते जाओ । बस मात्रिक रूपांक निकल आवेंगे। जिस क्रम-संख्या के कोठे के नीचे वाले कोठे में जो रूपांक रखा है वही अंक उतनी मात्राओं के छन्दों के रूप बतलाता है।

उदाहरण—बिना प्रस्तार किये बतलाओ कि ५ तथा ६ मात्राओं वाले छन्दों की भेद-संख्या अथवा रूपों की संख्या क्या होगी ?

क्रम संख्या	१	२	३	४	५	६
सूची के अंक	१	२	३	५	८	१३

सूची अंक से स्पष्ट हो गया कि ५ मात्रा वाले छन्दों के रूपों की संख्या ८ और ६ मात्रा वाले छन्दों के रूपों की संख्या १३ होगी।

वर्णिक संख्या जानने की रीति

१. जितने वर्णों के प्रस्तार के रूपों की संख्या निकालनी हो उतनी ही संख्या में दोहरी पंक्ति में कोठे बनाओ।

२. पहली पंक्ति के कोठों में क्रमशः वर्ण-संख्या रखलो। अब दूसरी पंक्ति के कोठों में संख्यांक इस प्रकार भरो कि

पहले कोठे में २ का अंक रखो। आगे के कोठे इस प्रकार भरो कि हर खाली कोठे के पास वाले बाईं ओर के कोठे के अंक का दूना करो और खाली कोठे में रखते जाओ। बस वर्णिक रूपांक निकल आवेंगे। अब देखो कि जिस क्रम-संख्या वाले कोठे के नीचे वाले कोठे में जो रूपांक रखा है वही अंक उतने वर्णों के छन्दों के रूप बतलाता है।

उदाहरण—बिना प्रस्तार किये बतलाओ कि ४ तथा ५ वर्णों वाले छन्दों के कितने रूप होंगे?

क्रम संख्या	१	२	३	४	५
सूची के अंक	२	४	८	१६	३२

४. वर्णों के छन्दों के रूपों की संख्या १६ और ५ वर्णों के छन्दों की संख्या ३२ होगी।

३. सूची *

जिस नियम अथवा काँटे से हम प्रस्तार के शुद्धा-शुद्ध की जाँच करते हैं उसे 'सूची' कहते हैं। इस से ज्ञात हो जाता है कि अमुक मात्रिक या वर्णिक प्रस्तार में कितने आदि लघु, अन्त लघु आदि हैं।

मात्रिक सूची जानने की रीति

१. जितनी मात्राओं की सूची निकालनी हो उतनी ही संख्या में कोठे बना लो और इन में क्रमशः मात्राओं की क्रम-संख्या रख दो। यह पहली पंक्ति हुई।

२. अब इस पहली पंक्ति के ऊपर दूसरी पंक्ति रूपांकों की रखो जिस में क्रमशः रूपांकों की संख्या रख दो ।

३. अब दूसरी पंक्ति के ऊपर बाएँ छोर के पहले कोठे को छोड़ कर शेष कोठों के ऊपर कोठे बनाओ यह तीसरी पंक्ति होगी । इस तीसरी पंक्ति में दाहिने छोर से पहले कोठे में रूपांक शब्द लिखो, दूसरे में आदि लघु और अन्त लघु, तीसरे में आदि गुरु, अन्त गुरु तथा आद्यन्त लघु, चौथे में आदि लघु तथा अन्त गुरु, आदि गुरु तथा अन्त लघु और पाचवें * में आद्यन्त गुरु शब्द लिख दो । बस मात्रिक सूची तैयार हो गई ।

इस सूची का अर्थ यह हुआ कि तीसरी पंक्ति में दाहिने छोर वाले कोठे का 'रूपांक' शब्द बतला रहा है कि इतनी मात्राओं के रूपांक उतने होंगे जितने उसके नीचे के दूसरी पंक्ति के कोठे में अंक रखे हैं । और इस 'रूपांक' शब्द वाले कोठे के बाईं ओर के कोठों के शब्द यह बतला रहे हैं कि उसके नीचे वाले दूसरी पंक्ति के कोठों में निश्चित मात्रा वाले छन्दों के

---

* प्रत्येक छन्द का प्रस्तार करने पर उसके रूपों की अधिक से अधिक (१) आदि लघु अन्त लघु, (२) आदि गुरु अन्त गुरु और आद्यन्त लघु, (३) आदि लघु तथा अन्त गुरु और आदि गुरु तथा अन्त लघु और आद्यन्त गुरु ये ही रूप हो सकते हैं जिन के लिए तीसरी पंक्ति में पाँच ही कोठे पर्याप्त हैं ।

जो रूपांक रखे हुए हैं उन रूपांकों में इतने आदि, लघु, इतने अन्त लघु, इतने आदि गुरु, इतने अंत गुरु और इतने आद्यन्त लघु आदि होंगे।

उदाहरण—६ मात्राओं वाले छन्द में रूपों की संख्या क्या होगी ? और इन रूपों में आदि लघु, अन्त लघु, आदि गुरु, अन्त गुरु, आद्यन्त लघु, आदि लघु और अन्त गुरु, आदि गुरु और अन्त लघु तथा आद्यन्त गुरुओं की संख्या क्या होगी ?

तीसरी पंक्ति		आद्यन्त गुरु	आदि लघु तथाअन्तगुरु आदि गुरु तथा अन्तलघु	आदिगुरु अन्त गुरु आद्यन्त लघु	आदिलघु अन्त लघु	रूपांक
दूसरीपंक्ति	१	२	३	५	८	१३
पहलीपंक्ति	१	२	३	४	५	६

६. मात्राओं के प्रस्तार में रूपों की संख्या १३ होगी। इन में आठ रूपों के आदि में लघु तथा आठ रूपों के अन्त में लघु ५ रूपों के आदि में गुरु, पाँच रूपों के अन्त में गुरु तथा पाँच रूपों के आद्यन्त में लघु, तीन रूपों के आदि में लघु तथा अन्त में गुरु, तीन रूपों के आदि में गुरु तथा अन्त में लघु और दो रूपों के आद्यन्त में गुरु चिन्ह होंगे। ❀

❀ ६ मात्राओं का प्रस्तार देखो।

वर्णिक सूची जानने की रीति

१. जितने वर्णों की सूची निकालनी हो उतने कोठे बनालो और उनमें निश्चित वर्णों की क्रमसंख्या रख दो। यह पहली पंक्ति होगी।

२. पहली पंक्ति के ऊपर इस पंक्ति के कोठों से एक कोठा अधिक बनाकर दूसरी पंक्ति बनादो ध्यान रहे कि अधिक कोठा बाएँ छोर पर रहेगा। अब बाएँ छोर से पहले कोठे में १ का अंक लिखकर शेष कोठों में क्रमशः उन वर्णों के रूपांक रख दो।

३. अब दूसरी पंक्ति के ऊपर बाँए छोर के दो कोठों को छोड़ कर शेष कोठों के ऊपर कोठे बनाओ† यह तीसरी पंक्ति होगी। इस तीसरी पंक्ति में दाहिने छोर से पहले कोठे में 'रूपांक' शब्द लिखो। दूसरे में आदि लघु, अन्तलघु, आदिगुरु, अन्तगुरु और तीसरे कोठे में आद्यन्तलघु, आदिलघु तथा अन्तगुरु, आदिगुरु तथा अन्तलघु और आद्यन्तगुरु शब्द लिख दो। बस वर्णिक सूची तैयार हो गई।

---

† प्रत्येक छन्द का प्रस्तार करने पर उसके रूपों की अधिक से अधिक १. आदि लघु, अन्तलघु आदिगुरु, अन्तगुरु २. आद्यन्त लघु, आद्यन्त-गुरु, आदिलघु तथा अन्तगुरु, आदिगुरु तथा अन्तलघु यही रूप हो सकते हैं। जिनके लिए रूपांक सहित तीन कोठे पर्याप्त हैं।

उदाहरण—४ वर्णों के प्रस्तार की सूची बताओ। अर्थात् बताओ कि ४ वर्णों के प्रस्तार में रूपों की संख्या क्या होगी? और इन रूपों में आदिलघु, अन्तलघु, आदिगुरु, अन्तगुरु, आद्यन्तलघु आदिलघु तथा अन्तगुरु, आदिगुरु तथा अन्तलघु और आद्यन्त गुरुओं की संख्या क्या होगी?

			आद्यन्तलघु, आद्यन्तगुरु, आदिलघु तथा अंतगुरु आदि-गुरु तथा अंतलघु	आदिलघु, अंतलघु आदिगुरु, अन्तगुरु,	रूपांक
दूसरी पंक्ति	१	२	४	८	१६
पहिली पंक्ति		१	२	३	४

४. वर्णों के प्रस्तार में रूपों की संख्या १६ होगी। इनमें आठ रूपों के आदि में लघु, आठ रूपों के अन्त में लघु, आठ रूपों के आदि में गुरु आठ रूपों के अन्त में गुरु, चार रूपों के आद्यन्त में लघु, चार रूपों के आद्यन्त में गुरु, चार रूपों के आदि में लघु तथा अंत में गुरु, और चार रूपों के आदि में गुरु तथा अंत में लघु चिन्ह होंगे। †

---

† ४ वर्णों का प्रस्तार देखो।

४. नष्ट

बिना प्रस्तार किये ही किसी मात्रिक अथवा वर्णिक प्रस्तार के किसी भी रूप के जान लेने की रीति को 'नष्ट' कहते हैं।

मात्रिक-नष्ट की रीति

१. जितनी मात्राओं का कोई रूप पूछा गया हो उनकी मात्राओं के बराबर लघु चिन्ह रख कर बाईं ओर से क्रमशः उन लघु चिन्हों पर उतनी ही मात्राओं के रूपों की संख्या लिख दो। क्रिया की यह पहली पंक्ति होगी।

२. अब निश्चित मात्राओं के रूपांक में से प्रश्नांक को घटादो। अब शेष बचे हुए अंक में से अन्तिम रूपांक के बाँई ओर के हरएक रूपांक को घटाने का प्रयत्न करो। जो रूपांक घट जाय उसके नीचे गुरु चिन्ह रखो। अब घटाये जाने पर जो अंक शेष बचे उसमें से बाईं ओर के किसी और रूपांक के घटाने का प्रयत्न करो। जो रूपांक घटता जाय उसके लघु चिन्ह के नीचे गुरु चिन्ह रखते जाओ। यह क्रिया तब तक करते रहो जब तक शेषांक बिल्कुल न घट जाय। जो रूपांक शेषांकों में से नहीं घट सके हैं उनके लघु के नीचे लघु चिन्ह ही रखो। क्रिया की यह दूसरी पंक्ति होगी।

३. अब तीसरी पंक्ति में गुरु-लघु चिन्ह इस प्रकार रखो कि दूसरी पंक्ति में जिस रूपांक के नीचे गुरु चिन्ह रखा है; तीसरी पंक्ति में भी उसके नीचे गुरु चिन्ह ही रख दो पर दूसरी

पंक्ति में उस गुरु चिन्ह के दाहिने जो पहला लघु हो उसे तीसरी पंक्ति में न रखो* और आगे यदि लघु चिन्ह हो तो उन्हें ज्यों का त्यों तीसरी पंक्ति में रख दो। बस तीसरी पंक्ति वाला ही अभीष्ट रूप होगा।

उदाहरण—६ मात्राओं के प्रस्तार में सातवाँ रूप क्या होगा?

	१	२	३	५	८	१३ रूपांक
पहली पंक्ति	।	।	।	।	।	।
दूसरी पंक्ति	ऽ	।	।	ऽ	।	।
तीसरी पंक्ति	ऽ		।	ऽ		।

अभीष्ट रूप ऽ । ऽ । होगा

हल—६ मात्राओं का रूपांक १३ है उसमें से प्रश्नांक ७ घटाने पर शेषांक ६ रहा। ६ में से ८ घट नहीं सका इसके नीचे लघु चिन्ह ही रखा। आगे चल कर ५ घट गया। इसके नीचे गुरु चिन्ह रख दिया। ६ में से ५ घटने पर शेष १ रहा। १ में से रूपांक १ ही घट सका उसके नीचे भी गुरु चिन्ह रख दिया। जो २, ३, ८ अंक नहीं घट सके उनके नीचे ज्यों के त्यों

*ऐसा इसलिए किया जाता है कि अभीष्ट गुरु अपने आगे वाले लघु की सहायता से ही गुरु बन सक्ता है।

लघु चिन्ह रख दिये। अब गुरु चिन्ह के आगे वाले २ और ८ के नीचे रखे हुए पहले लघु लोप कर दिए तो अभीष्ट रूप ऽ । ऽ । आगया।

वर्णिक-नष्ट की रीति

१. जितने वर्णों का कोई रूप पूछा गया हो उतने ही लघु चिन्ह रखो फिर वर्णिक रूपांकों के प्रत्येक अंक को आधा करके इन अंकों को बाईं ओर से क्रमशः लघु चिन्हों के ऊपर रखो। क्रिया की यह पहली पंक्ति होगी।

२. पहले निश्चित रूपों के रूपांक में से प्रश्नांक को घटा दो। अब लघु चिन्हों पर रखे हुए अंकों को दाहिनी ओर से बाईं ओर को क्रमशः बचे हुए शेषांक में से उसी तरह घटाने की क्रिया करो जिस तरह मात्रिक में की है। जो जो अंक घटता जाय उसके लघु चिन्ह के नीचे गुरु चिन्ह रखते जाओ। और जो अंक न घट सकें उनके लघु चिन्हों के नीचे ज्यों के त्यों लघु चिन्ह रख दो। क्रिया की यह दूसरी पंक्ति होगी और यही प्रस्तार का अभीष्ट रूप होगा।

उदाहरण—६ वर्णों के प्रस्तार में ७ वाँ रूप कैसा होगा?

	१	२	४	८	१६	३२
पहली पंक्ति	।	।	।	।	।	।
दूसरी पंक्ति	ऽ	।	।	ऽ	ऽ	ऽ

६ वर्णों के प्रस्तार में ७ वाँ रूप ऽ । । ऽ ऽ ऽ होगा।

हल—९ वर्णों का रूपांक ६४ है और प्रश्नांक ७ है। अतः नियमानुसार ६४ में से सात घटाने पर ५७ शेषांक रहा। पहली पंक्ति के लघु चिन्हों पर दाहिने छोर से रखा हुआ अंक ३२ है इसे ५७ शेषांक में से घटाने पर २५ शेष रहा। २५ में से १६ घटाने पर ९ रहा, ९ में से ८ घटाने पर १ रहा। इस १ में से ४ और २ नहीं घट सकते १ को घटाया तो शेष कुछ नहीं रहा। शेषांकों में से ३२, १६, ८ और १ अंक घट सके हैं इनके नीचे गुरु चिन्ह रख दिये, और शेष २, ४ के नीचे लघु ज्यों के त्यों रख दिये। बस दूसरी पंक्ति वाला ऽ । । ऽ ऽ ऽ यह अभीष्ट रूप निकल आया।

५. उद्दिष्ट

बिना प्रस्तार किये ही मात्रिक अथवा वर्णिक प्रस्तार के किसी भी रूप की स्थान-संख्या जान लेने की रीति को 'उद्दिष्ट' कहते हैं।

मात्रिक-उद्दिष्ट की रीति

१. दिये हुए रूप को ज्यों का त्यों रख लो। अब बाएँ छोर से इस रूप के गुरु चिन्हों के पहले ऊपर फिर नीचे और लघु चिन्हों के केवल ऊपर ही निश्चित मात्राओं के रूपांक क्रमशः रख दो।

२. अब गुरु चिन्हों के ऊपर रखे हुए रूपांको को जोड़ लो और निश्चित मात्राओं के रूपांक में से—जो दिये हुए रूप के

दाहिनी ओर से अन्तिम चिन्ह के ऊपर या नीचे होगा—इस जोड़ को घटा दो। शेषांक दिये हुए रूप की अभीष्ट संख्या होगी।

उदाहरण—६ मात्राओं के प्रस्तार का ऽ । ऽ । यह कौनसा रूप है ?

१	३	५	१३
ऽ	।	ऽ	।
२		८	

हल—∵ १ से ६ मात्राओं तक क्रमशः रूपांक १, २, ३, ५, ८ और १३ हैं। दिये हुए रूप के बाईं छोर के गुरु चिन्ह के ऊपर १ और नीचे २ का अंक रखा। इस गुरु के आगे वाले लघु पर ३, और गुरु के ऊपर ५ तथा नीचे ८ रखा और अन्तिम चिन्ह के ऊपर १३ रखा।

अब गुरु चिन्हों के शीर्षांकों को जोड़ने पर (१+५) अर्थात् ६ मिला। इसे ६ मात्राओं के रूपांक १३ में से घटाया तो ७ शेषांक रहा। बस यही शेषांक दिये हुए रूप की संख्या है।

∴ इस तरह स्पष्ट हो गया कि ६ मात्राओं का ऽ । ऽ । यह ७ वाँ रूप है।*

---

* ६ मात्राओं का प्रस्तार देखो।

वर्णिक-उद्दिष्ट की रीति

१. दिये हुए रूप को ज्यों का त्यों रख लो। अब बाएँ छोर से इन रूप-चिन्हों के ऊपर दिये हुए वर्णों की रूप-संख्याओं के आधे-आधे अंक क्रमशः रख दो।

२. अब गुरु चिन्हों के ऊपर रखे हुए अंकों को जोड़ लो और वर्णों की अन्तिम रूपसंख्या में से इस जोड़ को घटा दो। बस शेषांक दिये हुए रूप की अभीष्ट संख्या होगी।

उदाहरण—४ वर्णों के प्रस्तार का ।ऽ।ऽ यह कौन सा रूप है?

१	२	४	८
।	ऽ	।	ऽ

हल—एक वर्ण से लेकर चौथे वर्ण तक की रूप-संख्याएँ क्रमशः २, ४, ८, १६ हैं। इनके आधे क्रमशः १, २, ४, ८ हुए। बाएँ छोर से अभीष्ट रूप के चिन्हों पर इन अर्द्धाङ्कों को रख लिया। गुरु चिन्हों के ऊपर के अंकों का जोड़ (२+८) अर्थात् १० है। इसे ४ वर्ण के रूपाङ्क १६ में से घटाया तो (१६-१०) अर्थात् ६ शेषांक रहा। बस यही शेषांक दिये हुए रूप की संख्या है।

∴ इस से स्पष्ट हो गया कि ४ वर्णों का ।ऽ।ऽ यह छठा रूप है*।

---

* ४ वर्णों का प्रस्तार देखो।

६. पाताल

जिस रीति से दी हुई मात्राओं के रूपों की संख्या, सर्व लघु, सर्व गुरु, मात्रा और वर्णों की संख्या जानी जाय उस रीति को मात्रिक तथा जिस रीति से इनके सिवाय लघ्वादि, लघ्वन्त, गुर्वादि और गुर्वन्तों की भी संख्या जानी जाय उस रीति को वर्णिक-पाताल कहते हैं।

मात्रिक-पाताल की रीति

१. पाँच पंक्तियों में उतने कोठे बनाओ कि जितनी मात्राओं का छन्द है।

२. पहली पंक्ति के कोठों में दिये हुए छन्द की क्रम-संख्याएँ रख दो।

३. दूसरी पंक्ति के कोठों में संख्या (सूची) की रीत्यानुसार क्रमशः दिये हुए छन्द के रूपांक रखदो।

४. लघु तथा गुरुओं की संख्या बताने वाली तीसरी पंक्ति के कोठों में इस प्रकार अंक भरो कि बाएँ छोर के कोठे में १ का अंक तथा इसके दाहिनी ओर वाले कोठे में २ का अंक रखदो। अब आगे के खाली कोठे इस प्रकार भरो कि खाली कोठे के बाईं ओर जो पहला कोठा हो उसके अंक में उसी के ऊपर

वाले कोठे के रूपांक को जोड़ो और इस जोड़ में इसी कोठे के बाईं ओर वाले पास के कोठे के अंक को भी जोड़लो इस तरह जो योगफल मिलता जाय उसे क्रमशः खाली कोठों में रखते जाओ। बस इस तरह गुरु, लघुओं की अभीष्ट संख्या निकल आवेगी। उन संख्याओं के समझने का ढंग यह है कि इस तीसरी पंक्ति के कोठों में जो अंक जिस क्रम-संख्या वाले अंक के नीचे है वह उतनी ही मात्राओं के छन्द की लघु संख्याओं का बोधक है। और लघुओं की संख्या बताने वाले अंक के बाईं ओर वाले कोठे का अंक उसी लघु संख्या के ऊपर वाले क्रम-संख्या के गुरुओं की संख्या का बोधक है।

५. प्रत्येक क्रम-संख्या के लघु-गुरु अंकों को जोड़कर उसी क्रमसंख्या के नीचे चौथी पंक्ति के कोठों में क्रमशः रखते जाओ। बस दिये हुए छन्द के वर्णों की संख्या ज्ञात होजायगी।

६. प्रत्येक छन्द की रूप-संख्या को उसी क्रम-संख्या से गुणा करो और गुणनफल को उसी क्रम-संख्या के नीचे वाले पाँचवीं पंक्ति के कोठों में क्रमशः रखते जाओ। अथवा छन्द के सर्व गुरुओं के दूने में उसी छन्द के लघुओं को जोड़ देने से जो अंक मिले उसे उसी छन्द की क्रम-संख्यो के नीचे पाँचवीं पंक्ति के कोठों में रखो इसी ढंग से सब कोठे भरते जाओ। बस सर्व मात्राओं की संख्या ज्ञात होजायगी।

उदाहरण—६ मात्राओं के छन्द के सर्व रूपांक, सर्वलघु, सर्वगुरु, सर्व वर्ण और सर्व मात्राओं की संख्या बताओ ?

मात्राओं की क्रमसंख्याएँ	१	२	३	४	५	६	पहली पंक्ति
रूपांक	क १	ख २	ग ३	घ ५	ङ ८	च १३	दूसरी पंक्ति
सर्व लघु तथा सर्व गुरु	छ १	ज २	झ ५	ञ १०	ट २०	ठ ३८	तीसरी पंक्ति
सर्व वर्ण	१	३	७	१५	३०	५८	चौथी पंक्ति
सर्व मात्राएँ	१	४	६	२०	४०	७८	पाँचवीं पंक्ति

हल—पाँच पंक्तियों में से हर एक में छः छः कोठे बनाए और समझने की आसानी के लिए आवश्यकतानुसार दूसरी, तीसरी पंक्ति के कोठों में 'क' 'ख' इत्यादि अक्षर भी रख लिये। अब पहली पंक्ति के कोठों में क्रमशः क्रमसंख्या के १ २, ३, ४, ५, ६, अंक रख लिये। दूसरी पंक्ति के कोठों में क्रमशः ६ मात्राओं के रूपों की १, २, ३, ५, ८ और १३ संख्याएँ रखलीं। तीसरी पंक्ति के पहले कोठे में १, दूसरे में २ का अंक रख लिया। दूसरे कोठे में 'ज' के अंक २ में उसके

ऊपर वाले 'ख' कोठे के रूपांक २ को जोड़ो तो ४ हुए अब इस ४ के अंक में 'ज' के बाएँ कोठे 'छ' के अंक १ को जोड़ा तो योगफल ५ हुआ। इसे दाहिनी ओर के खाली कोठे 'झ' में रखा। इसी रीति से आगे 'ञ' 'ट' 'ठ' कोठों में क्रमशः १०. २० और ३८ अंक रखे। बस समझलो कि ६ मात्राओं के छंद में ३८ सर्व लघु हैं। इस सर्व लघु के बाईं ओर के कोठे 'ट' में २० का अंक है। यह ६ मात्राओं के छंद में सर्व गुरु २० हैं।

६ मात्राओं के छन्द में ३८ लघु और २० गुरु हैं। इनका जोड़ ५८ हुआ इस से सिद्ध है कि अभीष्ट छन्द में कुल ५८ वर्ण हैं। और इस छन्द में २० गुरु हैं। इनके दूने करने पर ४० लघु हुए। इनमें ३८ लघु जोड़ देने से कुल ७८ मात्राएँ हुईं। यदि ६ मात्राओं को इनके रूपांक १३ से गुणा करलें तो भी ७८ मात्राएँ आगईं।

∴ पाताल द्वारा ज्ञात होगया कि ६ मात्राओं के छन्द में रूपांक १३ सर्व लघु ३८, सर्व गुरु २०, सर्व वर्ण ५८ और सर्व मात्राएँ ७८ हैं। †

वर्णिक-पाताल की रीति

१. चार पंक्तियों में उतने कोठ बनाओ कि जितनी मात्राओं का छन्द हो।

---

† ६ मात्राओं के प्रस्तार को देखो।

२. पहली पंक्ति के कोठों में दिये हुए छन्द की क्रमसंख्याएँ रख दो।

३. दूसरी पंक्ति के कोठों में दिये हुए छन्द के रूपांक क्रमशः रख दो।

४. तीसरी पंक्ति के कोठों में छन्द के रूपांकों के अर्द्धांक क्रमशः रख दो।

ये अंक लघ्वादि, लघ्वन्त, गुर्वादि और गुर्वन्त संख्या बतलाते हैं।

५. छन्द की क्रमसंख्याओं में से प्रत्येक को उसी के नीचे वाले तीसरी पंक्ति के अंक से गुणा करके गुणनफल को क्रमशः चौथी पंक्ति के कोठों में रखते जाओ। ये अंक गुरु तथा सर्व लघुओं की संख्यां बतलाते हैं।

६. चौथी पंक्ति के प्रत्येक कोठे के अंक का दूना करते जाओ और उसीके नीचे पाँचवीं पंक्ति के कोठों में क्रमशः रखते जाओ। बस सर्व वर्णों की संख्या ज्ञात हो जायगी।

७. चौथी पंक्ति के प्रत्येक कोठे के अंक का तिगुना करते जाओ और उसीके नीचे छठी पंक्ति के कोठों में क्रमशः रखते जाओ। बस यही अंक सर्वमात्राओं की संख्या बतलाते हैं।

उदाहरण—चार वर्णों के छन्द में कितने रूप, कितने लघ्वादि, कितने लघ्वन्त, कितने गुर्वादि, कितने गुर्वन्त, कितने गुरु, कितने लघु, कितने वर्ण और कितनी मात्राएँ होंगी ?

वर्ण क्रम-संख्या	१	२	३	४	पहली पंक्ति
रूप संख्या	२	४	८	१६	दूसरी पंक्ति
लघ्वादि, लघ्वन्त गुर्वादि, गुर्वन्त	१	२	४	८	तीसरी पंक्ति
सर्व गुरु, सर्व लघु,	१	४	१२	३२	चौथी पंक्ति
सर्व वर्ण	२	८	२४	६४	पाँचवीं पंक्ति
सर्व मात्रा	३	१२	३६	९६	छठी पंक्ति

हल—पहली पंक्ति में ४ वर्णों की क्रमसंख्या १, २ ३, ४ रख लीं।

दूसरी पंक्ति में रूपसंख्याएँ २, ४, ८, १६ रखलीं।

तीसरी पंक्ति में रूप-संख्याओं के अर्द्धांक १, २, ४, ८ रख लिये। इन संख्याओं से ज्ञात हो गया कि ४ वर्णों

के वृत्त में ८ लघ्वादि, ८ लघ्वन्त, ८ गुर्वादि, और ८ गुर्वन्त हैं।

पहली पंक्ति की क्रम-संख्याओं को क्रमशः तीसरी पंक्ति के अंकों से गुणा किया तो क्रमशः १, ४, १२, ३२ अंक मिले। इन्हें क्रमशः चौथी पंक्ति के कोठों में रख दिया। इन से स्पष्ट हो गया कि ४ वर्णों के छन्दों में सर्व गुरु ३२ और सर्व लघु ३२ हैं।

चौथी पंक्ति के प्रत्येक अंक का दूना किया तो २, ८, २४, ६४ अंक मिले। इन्हें क्रमशः पाँचवी पंक्ति के कोठों में रख दिया। इससे ज्ञात हो गया कि ४ वर्ण के छन्दों में सर्व वर्ण ६४ हैं।

चौथी पंक्ति के प्रत्येक अंक का तिगुना किया तो ३, १२, ३६, ९६ अंक मिले। इन्हें क्रमशः छठी पंक्ति के कोठों में रख दिया तो ज्ञात हुआ कि ४ वर्णों के छन्दों में ९६ सर्व मात्राएँ होंगी।

∴ पाताल द्वारा ज्ञात हो गया कि ४ वर्णों के वृत्त में सर्व रूप १६, सर्व आदि लघु ८, सर्व अन्त लघु ८, सर्व आदि गुरु ८, सर्व अन्तगुरु ८, सर्व गुरु ३२, सर्व लघु ३२, सर्व वर्ण ६४ और सर्व मात्राएँ ९६ हैं। (४ वर्णों का प्रस्तार देखो)

७. मेरु

बिना प्रस्तार किये किसी छन्द की संख्या, उन रूपों के

सर्वलघु, एकगुरु, द्विगुरु आदि की संख्या जानने की रीति को 'मेरु' कहते हैं। *

मात्रिक-मेरु की रीति

१. पहले एक कोठा बनाओ। अब उसके नीचे दो दो कोठों की दोहरी इन दोहरे कोठों के नीचे तीन तीन कोठों की दोहरी, और आगे इसी क्रम से नीचे चार चार पाँच पाँच आदि कोठों की दोहरी पंक्ति दी हुई मात्राओं तक बनाओ।

२. इन कोठों के भरने की रीति यह है कि पहले कोठे में १ का अंक रखो। फिर दाहिने छोर के सब कोठों में नीचे तक एक ही अंक रखो और बाएँ छोर के कोठों में अन्त तक क्रमशः १, २, १, ३, १, ४ इत्यादि अन्त तक आवश्यकतानुसार अंक रखो।

अब जो कोठे खाली हैं उनके भरने की रीति यह है कि नकशे में दिशा जानने की जो रीति है उसी नियम से खाली

---

* छन्द के रूपों की संख्या रूपों के सर्वलघु, एकगुरु, द्विगुरु आदि की संख्याएँ एकावली और खंडमेरु द्वारा भी जानी जा सकती हैं। विस्तारभय से हम यहाँ एकावली और खण्डमेरु की रीति नहीं लिख रहे हैं क्योंकि हमारा उद्देश्य मेरु से ही सिद्ध हो जाता है।

कोठे के ऊपर बाईं ओर वाले कोठे के अंक में उसी के नैऋत्य कोण वाले कोठे के अंक को जोड़ो और खाली कोठों में रखो। इस तरह खाली कोठे भर जावेंगे।

३. अब सब से नीचे कोठों के नीचे बाएँ छोर से क्रमशः गुरु लघु चिन्ह इस प्रकार रखो कि बाएँ छोर वाले कोठे के नीचे दी हुई मात्राओं के बराबर सर्वगुरु चिन्ह रखो। और यदि मात्राओं की संख्या विषम हो तो जितने गुरु बन सकें; बनाकर रखो और इन गुरुओं के आगे एकलघु चिन्ह रख दो। अब इस कोठे के दाहिनी ओर के कोठों के नीचे जो चिन्ह रखो उनमें क्रमशः एक एक गुरु कम करते जाओ और दो दो लघु बढ़ाते जाओ, यहाँ तक कि दाहिने छोर वाले कोठे के नीचे सर्वलघु रूप आ जायगा। अब प्रस्तार का जो रूप जिस कोठे के नीचे रखा है उस कोठे का अंक यह बतलाता है कि सर्वलघु, एकगुरु, द्विगुरु आदि रूपों के इतने छन्द होंगे।

४. प्रत्येक पंक्ति की बाईं ओर मात्राओं की क्रम-संख्या रख लो। और अब प्रत्येक पंक्ति के अंकों में बाएँ से आरम्भ कर दाहिने छोर तक जोड़ कर उस पंक्ति के सामने दाहिनी ओर रखते जाओ। ये जोड़ उतनी मात्राओं के छन्दों की रूप संख्या बतावेंगे जो अंक क्रमसंख्याओं के रूप में पंक्तियों के बाएँ छोर पर रखे हैं।

और अब प्रत्येक पंक्ति के अंकों को बाएँ से आरंभ कर दाहिने छोर तक जोड़ कर उसी पंक्ति के सामने दाहिनी ओर रखते जाओ। ये जोड़ उतनी मात्राओं के छन्दों की रूप-संख्या बतावेंगे जो अंक क्रम-संख्याओं के रूप में पंक्तियों के बाएँ छोर पर रखे हैं।

उदाहरण—६ मात्राओं के छन्दों में रूप-संख्याएँ क्या होंगी? और इन रूपों में सर्वलघु, एक गुरु, द्विगुरु इत्यादि रूपों के छन्दों की संख्याएँ क्या होंगी।

६ मात्राओं का मेरु*

१ मात्रा का छन्द	१				१ रूप-संख्या
२ मात्राओं के छन्द	क १	ख १			२ ,,
३ ,,	ग २	घ १			३ ,,
४ ,,	च १	छ ३	ज १		५ ,,
५ ,,	झ ३	ट ४	ठ १		८ ,,
६	ड १	ढ ६	त ५	थ १	१३ ,,
	SSS	SSII	SIIII	IIIIII	

* पहले कोठे के नीचे वाले कोठे इस प्रकार बनाओ कि ऊपर के

हल—दिये हुए नियम के अनुसार ६ पंक्तियों में कोठे बना लिये। और समझने की आसानी के लिए कोठों में आवश्यकतानुसार 'क' 'ख' आदि वर्ण भी रख लिये।

अब सब से ऊपर वाले कोठे में १ का अंक रखा। दाहिने छोर के सब कोठों में भी १ का ही अंक रखा। और बाएँ छोर के कोठों में क्रमशः १, २, १, ३, १ अंक रखे।

∵ कोठा 'छ' खाली है इस के ऊपर बाईं ओर कोठा 'ग' है और इस 'ग' के नैऋत्य कोण में कोठा 'ख' है। इन दोनों 'ग' और 'ख' कोठों के (२+१) अंकों को जोड़ा और जोड़ के अंक ३ को खाली कोठे 'छ' में रख दिया। अब कोठा 'ट' खाली है। इस के ठीक † ऊपर कोठा 'छ' है। इस कोठे 'छ' के नैऋत्य में कोठा 'घ' है। इन दोनों (छ + घ) के अंकों के जोड़ने पर (३+१) = ४ मिले। इसे कोठा 'ट' में रखा। अब कोठा 'ढ' खाली है। इसके ऊपर बाईं ओर कोठा 'झ' है और 'झ' के नैऋत्य में कोठा 'छ' है। 'झ + छ' के जोड़ने पर (३ + ३) = ६ मिले। इस अंक को कोठा 'ढ' में रखा। अब केवल कोठा

कोठों के दाहिने तथा बाएँ छोर की भुजाएँ नीचे के कोठों के बीच बीच में रहें।

† ध्यान रहे कि यदि खाली कोठे के सिर पर एक ही कोठा हो तो उसे ही सिर पर का कोठा मान लिया जायगा। खाली कोठे के बाएँ कोठे की जगह वही प्रयोग में लाया जायगा। जैसा कि ऊपर के मेरु में 'ट' के ऊपर 'छ' है।

'त' खाली है। इसके बाँई ओर ऊपर कोठा 'ट' है और 'ट' के नैऋत्य में कोठा 'ज' है। इन दोनों (ट+ज) के अंकों (४+१) को जोड़ा तो ५ मिला। इसे कोठा 'त' में रख दिया।

अब सब से नीचे बाएँ छोर के १ अंक वाले कोठे के नीचे ऽऽऽ रूप रखा। इस कोठे से दाहिनी ओर ६ अंक वाले दूसरे कोठे के नीचे ऽऽ।। यह रूप रखा। इसी प्रकार ५ अंक वाले तीसरे कोठे के नीचे ऽ।।।। और १ अंक वाले दाहिनी छोर के चौथे कोठे के नीचे।।।।।। रूप रखा। इससे सिद्ध होगया कि ६ मात्राओं वाले छन्दों में एक छन्द सर्वलघु का होगा, ५ छन्द ऐसे होंगे जिनमें १ गुरु और ४ लघु रहेंगे, ६ छन्द ऐसे होंगे जिनमें २ गुरु २ लघु रहेंगे और एक छन्द ऐसा होगा जिसमें ३ गुरु रहेंगे।

∵ पहली पंक्ति में एक कोठा है जिसमें १ अंक है इससे सिद्ध है कि १ मात्रा की रूप संख्या १ ही है। दूसरी पंक्ति में 'क, ख' कोठों के अंकों का जोड़ (१+१)=२ है, इसी तरह तीसरी पंक्ति के कोठों के अंकों का जोड़ ३, चौथी पंक्ति के कोठों के अंकों का जोड़ ५, पाँचवीं पंक्ति के कोठों के अंकों का जोड़ ८ और छठी पंक्ति के कोठों के अंकों का जोड़ १३ है। अतः सिद्ध होगया कि ६ मात्राओं के छन्दों की रूप-संख्या १३ है।

∴ दिये हुए प्रश्न का पूरा उत्तर इस प्रकार हुआ कि ६ मात्राओं के छन्दों में रूप-संख्या १३ होगी और इन रूपों में

एक छन्द सर्वलघु का होगा; ५ छन्द ऐसे होंगे जिनमें १ गुरु ४ लघु रहेंगे, ६ छन्द ऐसे होंगे जिनमें २ गुरु २ लघु रहेंगे और एक छन्द ऐसा होगा जिसमें तीनों ही गुरु रहेंगे। +.

वर्णिक मेरु की रीति

१. जितने वर्णों का मेरु बनाना हो उससे एक अधिक कोठों की पंक्ति बनाओ। ये सब से नीचे की पंक्ति होगी। अब इस पंक्ति के कोठों से एक कोठा कम करके इसके ऊपर एक पंक्ति और बनाओ। इसी प्रकार एक एक कोठा कम करते हुए क्रमशः पंक्तियाँ बनाते जाओ। जब दो कोठों की पंक्ति बने तब उसे ही ऊपर की पहली पंक्ति मान लो। ‡

२. इन कोठों में अंक भरने की रीति यह है कि पहली पंक्ति के दोनों कोठों में और शेष सब पंक्तियों के दाहिने और बाएँ छोर के कोठों में १ का अंक रखो। अब ऊपर से खाली कोठों को इस भाँति भरो कि प्रत्येक खाली कोठे के ऊपर के †

+ ६ मात्राओं का प्रस्तार देखो।

‡ ध्यान रहे कि दो दो कोठों पर ऊपर वाला कोठा इस भाँति बनाओ कि उसकी दाहिनी और बाईं भुजाएँ नीचे वाले कोठों के बीच में रहें।

† मेरु को ध्यान से देखने से समझ में आजायगा कि हर नीचे के कोठे के ऊपर केवल ऐसे दो-दो कोठे ही हैं जिनको इस कोठे की दोनों भुजाएँ स्पर्श करती हैं।

दोनों कोठों के अंकों को जोड़ लो और इस खाली कोठे में रख दो। इस रीति से सब खाली कोठे भर जावेंगे।

३. अब सबसे नीचे की पंक्ति के कोठों के नीचे बाएँ छोर से क्रमशः गुरु लघु चिन्ह इस प्रकार रखो कि बाईं ओर के छोर वाले कोठे के नीचे दिये हुए वर्णों के बरावर सर्वगुरु चिन्ह रखो, अब इस कोठे से दाहिनी ओर के कोठों के नीचे जो चिन्ह रखो उनमें क्रमशः एक एक गुरु कम करते जाओ और एक-एक लघु बढ़ाते जाओ। यहाँ तक कि दाहिने छोर वाले कोठें के नीचे सर्व लघु रूप आजायगा। अब इस प्रस्तार का जो रूप जिस कोठे के नीचे रखा है उस कोठे का अंक यह बतलाता है कि सर्वलघु, एक गुरु, द्विगुरु इत्यादि के रूपों के इतने छन्द होंगे।

४, प्रत्येक पंक्ति की बाईं ओर वर्णों की क्रम-संख्याओं के अंक रख दो और बाएँ छोर के कोठे से लेकर दाहिने छोर के कोठे तक के अंकों को जोड़ कर दाहिनी ओर उसी पंक्ति के सामने रखते जाओ यह रूप-संख्या होगी।

उदाहरण—४ वर्णों के छन्दों में रूपों की संख्या क्या होगी ? और इन रूपों में सर्वलघु, एक गुरु, द्विगुरु इत्यादि रूपों के छन्दों की संख्याएँ क्या होंगी ?

४ वर्ण का मेरु

क्रम-संख्याएँ						रूप-संख्याएँ
१	क १	ख १				२
२	ग १	घ २	च १			४
३	छ १	ज ३	झ ३	ट १		८
४	ठ १	ड ४	ढ ६	त ४	थ १	१६
	SSSS	SSSI	SSII	SIII	IIII	

हल—दिये हुए नियम के अनुसार ४ पंक्तियों के कोठे बना लिये। समझने की आसानी के लिए आवश्यकतानुसार इन पंक्तियों में 'क' 'ख' इत्यादि वर्ण भी रख लिये।

अब पहली पंक्ति के कोठों में १ का अंक रख दिया। और शेष पंक्तियों के दाहिने, बाँए छोर के कोठों में भी १ का ही अंक रख दिया। अब सब से ऊपर 'घ' खाली कोठा है। इस के ऊपर 'क, ख' दो कोठे हैं इन के अंकों (१ + १) का जोड़ २ है। इसे 'घ' कोठे में रख दिया। इसी तरह 'ग, घ' का जोड़ ३ 'ज' में 'घ, च' का जोड़ ३ 'झ' में 'छ, ज' का जोड़ ४ 'ड' में 'ज, झ' का जोड़ ६ 'ढ' में और 'झ, ट' का जोड़ ४ 'त' खाली कोठे में रखा।

अब नीचे की पंक्ति के बाएँ छोर के १ अंक वाले कोठे के नीचे ऽ ऽ ऽ ऽ रूप रखा । इस कोठे के दाहिनी ओर के कोठों के नीचे क्रमशः ऽ ऽ ऽ ।, ऽ ऽ । ।, ऽ । । ।, । । । । रूप रखे । इस से सिद्ध हुआ कि ४ वर्णों के छन्द में एक छन्द सर्वलघु का होगा, चार छन्द ऐसे होंगे जिन में १ गुरु ३ लघु होंगे, ६ छन्द ऐसे होंगे जिन में २ गुरु, २ लघु होंगे, ४ छन्द ऐसे होंगे जिन में ३ गुरु १ लघु होगा और एक छन्द ऐसा होगा जिस में चारों ही गुरु होंगे ।

प्रत्येक पंक्ति के अंकों को जोड़ने से २, ४, ८, १६ अंक मिले । इन्हें क्रमशः इन पंक्तियों के सामने दाहिनी ओर रख दिया । अतः ४ वर्णों की रूप संख्या १६ हुई ।

इस तरह मेरु द्वारा ज्ञात हो गया कि ४ वर्णों के छन्दों की रूप-संख्या १६ होगी । और इन १६ रूपों में १ छन्द सर्व लघु का होगा, ४ छन्द ऐसे होंगे जिनमें १ गुरु ३ लघु होंगे, ६ छन्द ऐसे होंगे जिन में २ गुरु २ लघु होंगे, ४ छन्द ऐसे होंगे जिनमें ३ गुरु एक लघु होगा और एक छन्द ऐसा होगा जिसमें चारों ही गुरु होंगे ।*

८. पताका

छन्दों में एक गुरु द्विगुरु आदि रूपों की संख्याएँ जो मेरु द्वारा प्रकट होती हैं । प्रस्तार श्रेणी में उन का स्थान बनाने की रीति को 'पताका' कहते हैं ।

---

* ४ वर्ण का प्रस्तार देखो ।

मात्रिक पताका की रीति

१. दिये हुए छन्द की मात्राओं के बराबर खड़ी पंक्ति में कोठे[1] बनाओ । और इन कोठों में नीचे की ओर से क्रमशः सूची-अंक[2] रख दो । इस प्रकार ऊपर के कोठे में सूची का अन्तिम अंक (पूर्णांक) रहेगा । अब ऊपर के कोठे की बाईं ओर एक कोठा बनाओ और अब नीचे की ओर सूची-अंक वाले एक कोठे को छोड़ कर उस के नीचे वाले कोठे की बाईं ओर फिर एक कोठा बनाओ । इसी प्रकार नीचे की ओर क्रमशः एक एक कोठा छोड़ते हुए ऊपर वाले कोठों की तरह बाईं ओर जितने कोठे बनसकें बनालो। परन्तु सूची-अंक वाले सब से नीचे के कोठे की बाईं ओर तो जरूर एक कोठा बनाना ही होगा । क्योंकि सर्वलघु की तरह गुरुओं का यह अन्तिम रूप होगा । इन कोठों में मेरु-अंक इस प्रकार रखो—ऊपर के कोठे में सर्वलघु रूपों का मेरु-अंक रखो और अब नीचे की ओर क्रमशः एक गुरु, द्विगुरु इत्यादि रूपों के मेरु-अंक रखो । और इसी क्रम से इन के गुरु-लघु रूप भी इन कोठों की बाईं ओर रख दो।

---

१. यह पंक्ति पताका का दण्ड है ।

२. छन्दों की रूप संख्या को सूची-अंक भी कहते हैं ।

२. जिन कोठों में मेरु अंक रखे हुए हैं उन की दाहिनी ओर आड़ी पंक्ति में मेरु-अंक की संख्या के बराबर कोठे[1] बनालो । इन कोठों में अंक इस प्रकार भरो कि जिस पंक्ति के कोठे भरने हैं उस के सूची-अंक से लेकर नीचे तक के सब सूची-अंक क्रमशः उस ऊपर वाले सूची-अंक में से घटाते जाओ कि जिस की बाईं ओर मेरु का अंक रखा हो। और शेषांकों को क्रमशः इन खाली कोठों में दाहिनी ओर रखते जाओ । और यदि कोठे भरने से बाकी रह जावें तो ऊपर वाली भरी गई पंक्ति के प्रत्येक कोठे के अंक में से उन्हीं सूची-अंकों को—जो ऊपर के सूची-अंक में से घटाये जा चुके हैं—फिर क्रमशः घटाते जाओ, और शेषांक आगे रखते जाओ । अन्त में सब खाली कोठे भर जावेंगे । परन्तु इस बात का ध्यान रहे कि जो अंक ऊपर के किसी कोठे में एक बार आ चुका है वह आगे के कोठों में न रखा जायगा । बस मेरु के अंकों की स्थानीय संख्याएँ ज्ञात हो जायँगी।

उदाहरण—६ मात्रा वाले १३ छन्दों में से एक छन्द सर्वलघु का, पाँच छन्द ऐसे जिनमें एक गुरु, छः छन्द ऐसे

---

१. सूची-अंक वाला कोठा भी आड़ी पंक्ति वाले कोठों की गणना में शामिल है। इसीलिए ऊपर वाले कोठे के दाहिनी ओर कोठा नहीं खींचा गया क्योंकि प्रस्तार का अंतिम रूप सर्वलघु एक ही होता है। (देखो पताका)

जिनमें दो गुरु और एक छन्द ऐसा जिसमें त्रिगुरु रहेंगे। प्रस्तार में इन छन्दों के स्थान कहाँ होंगे? अर्थात् इनकी स्थानीय संख्याएँ क्या होंगी ?

IIIIII	१ त	१३ क					
		८ ल					
SIIII	५ थ	५ ख	८ च	१० छ	११ ज	१२ झ	
		३ म					
SSII	६ द	२ ग	३ ट	४ ठ	६ ड	७ ढ	९ ण
SSS	१ ध	१ घ					

क्रिया—दिये हुए छन्दों की मात्राएँ ६ हैं। खड़ी पंक्ति में छः कोठे बना लिये। इन कोठों में नीचे की ओर से क्रमशः सूची-अंक १, २, ३, ५, ८, १३ रख दिये। ऊपर के कोठे 'क' में अन्तिम सूची-अंक १३ है। अब कोठे 'क' के बाईं ओर कोठा 'त' बनाया। अब नीचे की ओर सूची-अंक वाले कोठे 'ल' को छोड़ उसके नीचे वाले कोठे 'ख' की बाईं ओर

कोठा 'थ' बनाया। इसी क्रम से कोठे 'म' को छोड़ 'ग' की बाईं ओर कोठा 'द' बनाया अब सबसे नीचे के सूची-अंक वाले कोठे 'घ' की बाईं ओर भी एक कोठा 'ध' बनाया।

ऊपर के कोठे 'त' में १, 'थ' में ५, 'द' में ६, और 'ध' में १ का अंक रख दिया। ये सब मेरु-अंक हैं। 'त' कोठे वाला अंक सर्वलघु का सूचक है। आगे 'थ, द, ध' कोठों वाले अंक क्रमशः एक गुरु, द्विगुरु, त्रिगुरु आदि के सूचक हैं जो इन कोठों के बाएँ रखे हुए रूपों से प्रकट हैं।

कोठे 'त' की दाहिनी ओर केवल एक ही कोठा बनाना चाहिए, क्योंकि सर्वलघु की मेरु-संख्या १ है। ∵ 'त' कोठे की दाहिनी ओर एक कोठा 'क' बना हुआ है इसलिए इससे आगे कोठा बनाने की जरूरत नहीं है। 'थ' कोठे की दाहिनी ओर 'ख' समेत 'च, छ, ज, झ' पाँच कोठे बना लिये। इसी प्रकार कोठे 'द' की दाहिनी ओर 'ग' समेत 'ट, ठ, ड, ढ, ण' ये छः कोठे बना लिये। 'ध' × की दाहिनी ओर एक कोठा 'घ' बना हुआ ही है। बनाने की जरूरत नहीं है क्योंकि सर्व गुरु का भी तो एक ही रूप होगा।

∵ मेरु अंक वाले कोठे 'त' के आगे 'क' कोठे में १३ का अंक रखा ही है; भरने की कोई जरूरत ही नहीं है। हाँ, 'थ' कोठे के आगे के 'च, छ, ज, झ' कोठे खाली हैं। उनमें संख्याएँ भरनी हैं। ∵ एक गुरु के मेरु-अंक वाले 'थ' कोठे के ऊपर सूची-अंक १३ है। इसमें से क्रमशः 'ख, म, ग, घ' कोठों के अंक

५, ३, २, १ घटा लिये तो ८, १०, ११, १२ शेष बचे। इन्हें क्रमशः बाईं ओर से खाली कोठों में रख दिया। इसी प्रकार द्विगुरु वाली पताका के कोठे 'द' की दाहिनी ओर वाले 'ट, ठ ड, ढ, ण' खाली हैं। खाली कोठों के ऊपर के सूची-अंक 'ख' के ५ में से कोठे 'ग' के २ को तथा कोठे 'घ' के १ को घटाने से क्रमशः ३ तथा ४ अंक मिले। इन्हें क्रमशः 'ट, ठ' कोठों में क्रमशः रख दिया। अभी कोठे 'ड, ढ, ण' खाली हैं। १ गुरु वाली पताका के कोठे 'च' के ८ में से कोठे 'ग' के २ को घटाया तो अंक ६ मिला। इसे कोठा 'ड' में रखा। फिर कोठे 'च' के ८ में से कोठे 'घ' के १ को घटाया तो ७ बचे इसे कोठे 'ढ' में रखा। अब कोठे 'छ' के १० में से कोठे 'ग' के २ को घटाया तो ८ मिले। यह अंक कोठा 'च' में आ चुका है इसलिए इसे छोड़ दिया। अब कोठे 'छ' के १० में से कोठे 'घ' के १ को घटाया तो अंक ९ मिला। इसे कोठे 'ण' में रख दिया। अब तीसरी त्रिगुरु वाली पताका भरने के लिए कोठे 'ग' के २ में से कोठे 'घ' के १ के घटाने की जरूरत नहीं है क्यों कि सम संख्या वाले छन्दों में पहला रूप सर्वगुरु का होता ही है। जैसा कि 'घ' कोठे में रखा हुआ १ का अंक प्रकट कर रहा है।

∴ इस पताका से ज्ञात हो गया कि ६ मात्रा वाले १३ छन्दों में से तेरहवाँ रूप सर्वलघु का होगा। पाँचवाँ, आठवाँ,

दसवाँ, ग्यारहवाँ, तथा बारहवाँ रूप एक गुरु का, दूसरा, तीसरा, चौथा, छठा, सातवाँ, नवाँ, रूप द्विगुरु का और पहला रूप त्रिगुरु अर्थात् सर्वगुरु का होगा। *

वर्णिक पताका की रीति

१. जितने वर्णों की पताका बनानी हो उसके मेरु-अंकों की मेरु-संख्या के बराबर खड़ी पंक्ति में कोठे बनाओ। अब इन कोठों में ऊपर की ओर से सर्वलघु, एक गुरु, द्विगुरु आदि की मेरु-संख्याएँ क्रमशः रख दो। और इन कोठों के बाहर बाईं ओर सर्वलघु, एक गुरु, द्विगुरु आदि शब्दों में भी लिख दो और उन के रूप भी रख दो। अब इन मेरु-अंक वाले कोठों की दाहिनी ओर ऊपर से दूसरी खड़ी पंक्ति में उतने कोठे बनाओ जितने रूपांक इन वर्णों के हों। और इन कोठों में नीचे से ऊपर की ओर रूपांक क्रमशः रख दो। ध्यान रहे कि अन्तिम रूपांक सब से ऊपर के कोठे में रहेगा। जिन कोठों में मेरु-अंक रखे हुए हैं उन की दाहिनी ओर पड़ी पंक्ति में मेरु-अंकों की संख्या के बराबर कोठे बनाओ। †

---

* ६ मात्राओं का प्रस्तार देखो।

† सूची-अंक वाला कोठा भी पड़ी पंक्ति वाले कोठों की गणना में शामिल है। इसीसे ऊपर के मेरु-अंक वाले कोठे की दाहिनी ओर कोठा नहीं खींचा गया। क्योंकि प्रस्तार का अन्तिम रूप सर्वलघु एक ही होता है। ४ वर्ण का प्रस्तार देखो।

२. इन कोठों में अंक इस प्रकार भरो कि जिस पंक्ति के कोठे भरने हैं उस के सूची-अंक को छोड़ कर नीचे के सब सूची-अंक क्रमशः ऊपर वाले सूची-अंक में से घटाते जाओ। और शेषांकों को क्रमशः इन खाली कोठों में दाहिनी ओर रखते जाओ। और जो कोठे भरने से शेष रह जावें तो ऊपर वाली भरी गई पताका की पंक्ति के प्रत्येक कोठे के अंक में से उन्हीं सूची-अंकों को क्रमशः घटाते जाओ जो ऊपर के सूची-अंक में से घटाये जा चुके हैं। और इस तरह जो शेषांक मिलें उन्हें आगे के खाली कोठों में रखते जाओ। अन्त में सब खाली कोठे भर जावेंगे। परन्तु शेषांकों को खाली कोठों में रखते समय इस बात का ध्यान रखो कि जो अंक ऊपर के किसी कोठे में एक बार आ चुका है वह आगे के कोठों में न रखा जावे बस पताका बन जायगी।

उदाहरण—४ वर्णों के १६ छन्दों में से एक छन्द सर्व-लघु का, ४ छन्द ऐसे जिनमें एक गुरु, ६ छन्द ऐसे जिनमें दो गुरु, ४ छन्द ऐसे जिनमें तीन गुरु और एक छन्द ऐसा जिसमें चार गुरु (सर्वगुरु) रहेंगे। प्रस्तार में इन छन्दों के स्थान कहाँ होंगे ? अर्थात् इनकी स्थानीय संख्याएँ क्या क्या होंगी ?

४ वर्ण की पताका

।।।। सर्वलघु	क १	च १६					
ऽ।।। एक गुरु	ख ४	ट ८	ठ १२	ड १४	ढ १५		
ऽऽ।। द्विगुरु	ग ६	त ४	थ ६	द ७	ध १०	न ११	ल १३
ऽऽऽ। त्रिगुरु	घ ४	प २	फ ३	ब ५	भ ९		
ऽऽऽऽ चतुर्गुरु	ङ १	य १					

क्रिया — ४ वर्ण की मेरु संख्याएँ १, ४, ६, ४, १ हैं। इन्हें क्रमशः क, ख, ग, घ, ङ कोठों में रख दिया और इन मेरु-संख्या वाले कोठों की बाईं ओर सर्वलघु, एक गुरु, द्विगुरु आदि रूप ऊपर की ओर से क्रमशः रख दिये और शब्दों में भी लिख दिये। अब मेरु-अंक वाले कोठों की दाहिनी ओर नीचे से ४ कोठे खड़ी पंक्ति में बना दिये इनमें नीचे से ही क्रमशः २, ४, ८, १६ रूपांक रख दिये। सबसे ऊपर वाले कोठे 'च' में १६ रूपांक रखा गया।

अब कोठे 'क' की दाहिनी ओर कोठा वनाने की जरूरत नहीं क्योंकि सर्वलघु का एक ही रूप होगा और दाहिनी ओर एक कोठा 'च' बना ही हुआ है। 'ख' कोठे की दाहिनी ओर 'ट' समेत 'ठ, ड, ढ' चार कोठे बना लिये। इसी प्रकार 'ग'

कोठे की दाहिनी ओर 'त' समेत 'थ, द, ध, न, ल' ये छः कोठे बना लिये। इसी प्रकार कोठे 'घ' की दाहिनी ओर 'प' समेत 'फ, ब, भ' चार कोठे बना लिये और 'ङ' की दाहिनी ओर एक कोठा 'य' बना लिया।

मेरु-अंक वाले 'ख' कोठे की दाहिनी ओर 'ठ, ड, ढ' कोठे खाली हैं। 'ट' के ऊपर वाले सूची-अंक 'च' १६ में से 'त, प, य' कोठों के अंक घटाये तो क्रमशः १२, १४, १५, अंक मिले। इन्हें क्रमशः 'ट, ड, ढ' कोठों में रख दिया।

मेरु-अंक वाले 'ग' कोठे की दाहिनी ओर 'थ, द, ध, न, ल' कोठे खाली हैं। 'त' के ऊपर 'ट' कोठा है इसके अंक ८ में से 'म, य, के अंक २, १ को घटाया तो क्रमशः ६, ७ अंक मिले। इन्हें क्रमशः 'थ, द' में रखा। अब नियमानुसार 'ठ' के अंक १२ में से 'प, म' के २, १ को घटाया तो १०, ११ मिले। इन्हें 'ध, न' में रखा। अब 'ड' के अंक १४ में से 'प, य' के २, १ को घटाया तो १२, १३ मिले। ∵ १२ अंक 'ठ' कोठे में आ चुका है। इसे छोड़ दिया। अंक १३ को 'ल' कोठे में रखा। यह पताका पूरी हो गई।

अब त्रिगुरु पताका के खाली कोठे भरने के लिए 'त' के ४ में से 'म' के १ को घटाया तो ३ मिले। इस अंक को 'फ' में रख दिया। अब 'थ' के ६ में से 'य' के १ को घटाया तो ५ मिले। इसको 'ब' में रखा। 'द' के ७ में से 'य' के १ को घटाने पर ६ मिले। यह अंक 'थ' में आ चुका है।

इसे छोड़ दिया। 'ध' के १० में से 'य' के १ को घटाने पर ६ आया यह अंक 'भ' में रख दिया। यह पताका भी पूरी होगई।

∵ सर्व गुरु का एक ही रूप होता है इसलिए कोठे 'य' में १ अंक रख दिया। बस अब पताका पूरी हो गई।

∴ अब यह पताका बतला रही है कि ४ वर्णों के १६ छन्दों में से सोलहवाँ रूप सर्व लघु का होगा। आठवाँ, बारहवाँ, चौदहवाँ तथा पंद्रहवाँ रूप १ गुरु का; चौथा, छठा, सातवाँ, दसवाँ, ग्यारहवाँ तथा तेरहवाँ रूप द्विगुरु का, दूसरा, तीसरा, पाँचवाँ तथा नौवाँ रूप त्रिगुरु का और पहला रूप चतुर्गुरु (सर्वगुरु) का होगा। †

६ मर्कटी

जिस क्रिया द्वारा छन्द, मात्रा, वर्ण, लघु, गुरु तथा पिंड की समग्र संख्याएँ ज्ञात होती हैं उसे 'मर्कटी' कहते हैं।

मात्रिक मर्कटी की रीति

१. जितनी मात्राओं की मर्कटी बनानी हो उतनी ही पंक्तियों में खड़े कोठे बनाओ। और इन कोठों को काटती हुई रेखाओं से सात पड़ी पंक्तियों में कोठे बनाओ। अब पड़ी पंक्तियों वाले कोठों की बाईं ओर पहली पंक्ति के सामने मात्राओं

---

† ४ वर्णों का प्रस्तार देखो।

की क्रम-संख्या, दूसरी पंक्ति के सामने भेदांक ×, तीसरी पंक्ति के सामने सर्वकला, चौथी के सामने गुरु, पाँचवीं के सामने लघु, छठी के सामने वर्ण तथा सातवीं के सामने 'पिण्ड' शब्द लिख दो।

२. अब पड़े कोठे वाली पंक्तियाँ इस प्रकार भरो कि पहली पंक्ति के कोठों में १, २, ३, ४ इत्यादि दिये हुए छन्द की क्रम-संख्याएँ रखदो। दूसरी पंक्ति के कोठों में सूची के अंक १, २, ३, ५ इत्यादि रख दो। तीसरी पंक्ति के (सर्व कला वाले) कोठे इस प्रकार भरो कि पहली (क्रमांक) तथा दूसरी (भेदांक) पंक्ति के ठीक ऊपर-नीचे वाले कोठों के अंकों के गुणनफलों को तीसरी पंक्ति के (सर्वकला वाले) कोठों में रख दो। अब चौथी पंक्ति के (गुरु वाले) कोठे इस प्रकार भरो कि बाईं छोर के कोठे में शून्य और उससे आगे दाहिनी ओर वाले दूसरे कोठे में १ का अंक रखो। अब आगे के कोठे इस प्रकार भरो कि खाली कोठे की बाईं ओर वाले कोठे के अंक का दूना करके इस अंक को उसी कोठे के ऊपर वाले (सर्वकला वाले) कोठे के अंक में से घटावे। घटाने पर जो अंक मिले उसे खाली कोठे में रखदे। पाँचवीं पंक्ति के (लघु वाले) कोठे इस प्रकार भरो कि चौथी पंक्ति के (गुरु वाले) कोठों के अंकों को दूना करलो और तीसरी पंक्ति के (सर्वकला वाले) कोठों में से

× इसे सूची अंक भी कहते हैं।

इन्हें क्रमशः घटादो; घटाने पर जो अंक मिलें उन्हें क्रमशः पाँचवीं पक्ति के (लघु वाले) कोठों में रखदो। छठवीं पंक्ति के (वर्ण वाले) कोठे इस प्रकार भरो कि चौथी (गुरु वाली) तथा पाँचवीं (लघु वाली) पंक्ति के ऊपर नीचे वाले कोठों के अंकों को जोड़ ले। और इन के जोड़ को छठी पंक्ति के (वर्ण वाले) कोठों में क्रमशः रखदो। अब सातवीं पंक्ति के (पिण्ड वाले) कोठे इस प्रकार भरो कि तीसरी पंक्ति के (सर्व कला वाले) कोठों के अर्द्धाङ्कों को क्रमशः सातवीं पंक्ति के (पिण्ड वाले) कोठों में रखदो। परन्तु ध्यान रहे कि इस पंक्ति के बाएँ छोर वाले कोठे में शून्य ही रखा जायगा। बस 'मर्कटी' तैयार हो जायगी।

उदाहरण—६ मात्राओं के छन्दों में कुल कितने छन्द, कितनी मात्राएँ, कितने वर्ण, कितने गुरु, कितने लघु और कितने पिण्ड होंगे ?

६ मात्राओं की मर्कटी

१. मात्राओं की क्रमसंख्याएँ	१	२	३	४	५	६
२. भेदांक	१	२	३	५	८	१३
३. सर्वकला	क १	ख ४	ग ९	घ २०	ङ ४०	च ७८
४. गुरु	छ ०	ज १	झ २	ञ ५	ट १०	ठ २०
५. लघु	ड १	ढ २	ण ५	त १०	थ २०	द ३८
६. वर्ण	ध १	न ३	प ७	फ १५	ब ३०	भ ५८
७. पिण्ड	म ½	य २	र ४½	ल १०	व २०	स ३९

क्रिया—दिये हुए नियम के अनुसार कोठे बना लिये। अब पड़ी पंक्तियों वाले कोठों की बाईं ओर पहली पंक्ति के कोठों के सामने क्रमसंख्या, दूसरी के सामने भेदांक, तीसरी के सामने सर्वकला, चौथी के सामने गुरु, पाँचवीं के सामने लघु, छठी के सामने वर्ण तथा सातवीं के सामने 'पिण्ड' शब्द लिख दिये।

अब नियमानुसार पहली पड़ी पंक्ति वाले कोठों में बाईं ओर से १, २, ३, ४, ५, ६ क्रम-संख्याएँ रख दीं। और दूसरी पंक्ति के कोठों में १, २, ३, ५, ८, १३ भेदांक रख दिये।

अब तीसरी पंक्ति के कोठे इस प्रकार भरे कि पहली पंक्ति के १, २, ३, ४, ५, ६ इन क्रमांकों को दूसरी पंक्ति के १, २, ३, ५, ८, १३, भेदांकों से क्रमशः गुणा किया तो १×१, २×२, ३×३, ४×५, ५×८, ६×१३ = १, ४, ९, २०, ४०, ७८ अंक गुणनफल के मिले। इन में सेकोठे 'क' में १, 'ख' में ४ 'ग' में ९, 'घ' में २० 'ङ' में ४० और 'च' में ७८ का अंक रखा। ये सर्वकला के रूप निकल आये।

अब चोथी पंक्ति के कोठे इस प्रकार भरे गये कि बाईं ओर से पहले कोठे 'छ' में ० तथा 'ज' में १ अंक रखा। अब खाली कोठे 'झ' के बाएँ कोठे 'ज' में अंक १ है इसका दूना किया तो १×२=२ अंक मिला। इस २ का शीर्षांक 'ख' कोठे में अंक ४ है ∴ ४ में से अंक २ घटाया तो ४-२=२ शेष रहा। इसे 'झ' में रखा। इसी क्रिया के अनुसार 'झ' के २ को २ से गुणा कर अंक ४ प्राप्त किया इसे अपने शीर्षांक 'ग' के ९ में से घटाने पर ५ मिला इसे 'ञ' में रखा। इसी तरह 'ञ' के ५×२ 'घ' शीर्षांक २० में से घटाया तो २०-१०=१० शेष रहा इसे 'ट' में रखा। और 'ट' के १०×२ को शीर्षांक 'ङ' के ४०

में से घटाया तो ४०-२० = २० शेष रहा इसे 'ठ' में रखा। बस गुरुओं की संख्या ज्ञात हो गई।

पाँचवीं पंक्ति के कोठे इस तरह भरे कि कि चौथी पंक्ति के कोठों के अंक ०, १, २, ५, १०, २० को दूना किया तो क्रमशः ०, २, ४, १०, २०, ४० अंक मिले। इन्हें तीसरी पंक्ति के अंक १, ४, ९, २०, ४०, ७८ में से घटाया तो १, २, ५, १०, २०, ३८ अंक शेष रहे। इन्हें क्रमशः बाईं ओर से 'ड, ढ, ण, त, थ, द' कोठों में रख दिया। इस तरह लघुओं की संख्या ज्ञात हो गई।

छठी पंक्ति के कोठे इस तरह भरे गये कि चौथी पंक्ति के ०, १, २, ५, १०, २० में पाँचवीं पंक्ति के १, २, ५, १०, २०, ३८, अंकों को जोड़ा तो क्रमशः १, ३, ७, १५, ३० और ५८ अंक मिले। इन्हें छठी पंक्ति के ध, न, प, फ, ब, भ में बाईं ओर से क्रमशः रख दिया। इस तरह वर्णों की संख्या ज्ञात हो गई।

अब सातवीं पंक्ति के कोठे भरने के लिए तीसरी पंक्ति के १, ४, ९, २०, ४०, और ७८ अंकों के आधे किये तो १/२, २, ४ १/२, १०, २०, और ३९ अंक मिले। इनको बाईं ओर क्रमशः म, य, र, ल, व, और स कोठों में रख दिया। बस पिंड संख्या भी ज्ञात हो गई।

इस तरह इस मर्कटी से स्पष्ट हो गया कि ६ मात्राओं के कुल १३ छन्द होते हैं। इन छन्दों में कुल ७८ मात्राएँ होती हैं, इन में २० गुरु, और ३८ लघु होते हैं, कुल ५८ वर्ण और ३९ पिण्ड होते हैं।*

वर्णिक मर्कटी की रीति

१. जितने वर्णों की मर्कटी बनानी हो उतनी ही खड़ी पंक्तियों में कोठे बनाओ। और इन कोठों को काटती हुई रेखाओं से सात पड़ी पंक्तियों में कोठे बनाओ। अब पड़ी पक्तियों वाले कोठों की बाईं ओर पहली पंक्ति के सामने वर्णों की क्रम-संख्या, दूसरी के सामने भेद-संख्या तीसरी के सामने सर्वकला, चौथी के सामने वर्ण, पाँचवीं के सामने गुरु, छठी के सामने लघु तथा सातवीं के सामने पिण्ड शब्द लिख दो।

२. अब पड़ी पंक्तियों वाले कोठे इस प्रकार भरो कि पहली पंक्ति के कोठों में बाईं ओर से १, २, ३ इत्यादि दिये हुए वर्णों की क्रम-संख्याएँ रख दो। दूसरी पंक्ति के कोठों में सूची के अंक २, ४, ८, १६ इत्यादि रख दो। चौथी पंक्ति के कोठे इस तरह भरो कि पहली (क्रम-संख्या वाली) तथा दूसरी

---

* ६ मात्राओं का प्रस्तार देखो।

(भेदांक वाली) पंक्ति के तले-ऊपर वाले कोठों के अंकों के गुणन-फलों को चौथी पंक्ति के (वर्ण वाले) कोठों में बाईं ओर से क्रमशः रखदो। पाँचवीं पंक्ति के (गुरु वाले) कोठे इस प्रकार भरो कि चौथी पंक्ति के (वर्ण वाले) कोठों के अंकों को आधा करके पाँचवीं पंक्ति के (गुरु वाले कोठों में रखदो। छठीं पंक्ति के (लघु वाले) कोठों में क्रमश: वे ही अंक रखलो जो (गुरु वाले) पाँचवीं पंक्ति के कोठों में रखे हैं *। सर्वकला वाले तीसरी पंक्ति के कोठे इस तरह भरो कि पाँचवीं पंक्ति के गुरुओं के अंकों के दूने में छठी पंक्ति के लघुओं को तले-ऊपर के क्रम से जोड़ लो, और इनके योगफल को बाईं ओर से क्रमश: तीसरी पंक्ति के कोठों में रख दो। सातवीं पंक्ति के पिण्ड वाले कोठों के भरने के लिए तीसरी पंक्ति के (सर्वकला वाले) कोठों के अंकों को आधा-आधा करके बाईं ओर से क्रमशः सातवीं पंक्ति के कोठों में रखदो। बस 'मर्कटी' तैयार हो जायगी।

उदाहरण–४ वर्णों के कुल कितने छन्द होंगे, कितनी मात्राएँ, कितने वर्ण, कितने गुरु, कितने लघु और कितने पिण्ड होंगे ?

---

* वर्णिक छन्दों में प्रत्येक वर्ण के दो ही रूप होते हैं एक गुरु और दूसरा लघु रूप। इस से जो संख्या गुरुओं की होगी वही लघुओं की भी होगी।

४ वर्णों की मर्कटी

१. वर्णों की क्रम संख्याएँ	१	२	३	४
२. भेद-संख्याएँ	२	४	८	१६
३. सर्वकला,	क ३	ख १२	ग ३६	घ ९६
४. सर्ववर्ण	च २	छ ८	ज २४	झ ६४
५ गुरु	ट १	ठ ४	ड १२	ढ ३२
६. लघु	त १	थ ४	द १२	ध ३२
७. पिण्ड	प १½	फ ६	ब १८	भ ४८

क्रिया—नियमानुसार कोठे बनाकर पड़ी पंक्ति वाले कोठों की पहली पंक्ति की बाईं ओर वर्णों की क्रम-संख्या, दूसरी की बाईं ओर भेदांक, तीसरी की बाईं ओर सर्वकला, चौथी की बाईं ओर वर्ण, पाँचवीं की बाईं ओर गुरु, छठी की बाईं ओर लघु तथा सातवीं की बाईं ओर 'पिण्ड' शब्द लिख दिये।

अब नियमानुसार पड़ी पंक्ति वाले पहली पंक्ति के कोठों में वर्णों की १, २, ३, ४ क्रम-संख्याएँ लिख दीं। दूसरी पंक्ति के कोठों में क्रमशः २, ४, ८, १६ भेदांक रख दिये। अब चौथी पंक्ति के कोठे इस प्रकार भरे कि पहली पंक्ति के १, २, ३, ४ क्रमांकों को दूसरी पंक्ति के २, ४, ८, १६ भेदांकों से क्रमशः गुणा किया तो गुणनफल में २, ८, २४, ६४ मिले। इन अंकों को 'च, छ, ज, झ' कोठों में बाईं ओर से क्रमशः रख दिया। अब पाँचवीं पंक्ति के (गुरु वाले) कोठे इस प्रकार भरे कि चौथी पंक्ति वाले कोठों के २, ४, २४, ६४ अंकों के आधे-आधे किये तो क्रमशः १, ४, १२, ३२ अंक मिले। बाईं ओर से क्रमशः इन्हें 'ट, ठ, ड, ढ,' कोठों में रख दिया। यही संख्याएँ लघुओं की भी होंगी इसलिए छठी पंक्ति के 'त, थ, द, ध' कोठों में भी ज्योंकी त्यों यही संख्याएँ रखलीं।

अब पाँचवीं पंक्ति के गुरु अंकों के दूने† १×२, ४×२, १२×२, ३२×२ अर्थात् २, ८, २४, ६४ में छठी पंक्ति के १, ४, १२, ३२ लघुओं को जोड़ कर योगफलों २+१, ८+४, २४+१२, ६४+३२ अर्थात ३, १२, ३६, ९६ को तीसरी पंक्ति के कोठों में बाईं ओर से क्रमशः रख दिया। इस तरह सर्व कलाएँ ज्ञात होगईं।

---

† एक गुरु में दो लघु मात्राएँ होती हैं। इसी से गुरु अंकों को दो से गुणा किया गया है।

अब सातवीं पंक्ति के कोठे भरने के लिए तीसरी पंक्ति वाले कोठों के ३, १२, ३६, ९६ अंकों के आधे आधे किये तो क्रमशः १$\frac{१}{२}$, ६, १८, ४८ अंक मिले। इनको सातवीं पंक्ति के कोठों में बाईं ओर से क्रमशः रखा। बस 'मर्कटी' तैयार होगई।

इस तरह इस मर्कटी से ज्ञात होगया कि ४ वर्णों के कुल छन्द १६ होते हैं। जिनमें कुल ९६ कलाएँ, ६४ वर्ण, ३२ गुरु, ३२ लघु तथा ४८ पिण्ड होते हैं।

छन्द और रस

यों तो किसी भी छन्द में किसी भी रस का वर्णन किया जा सकता है। पर कुछ छन्द ऐसे हैं जिनमें किसी खास रस का वर्णन ही विशेष रूप से जँच सा जाता है। यहाँ कुछ ऐसे छन्दों की संक्षिप्त सूची दी जाती है जो रस विशेष के उत्कर्ष बढ़ाने में विशेष सहायक से सिद्ध होते हैं:—

छन्द	रस
मात्रिक	
प्रसाद (शृंगार)	करुण रस
चितहंस (पीयूषवर्ष)	करुण रस
सखी	करुण रस
रूपमाला	करुण रस
प्लवंगम	करुण रस
हरिगीतिका	करुण रस
रूपमाला	शान्त रस
लावनी (राधिका)	शृंगार
तोमर	वीर रस
रोला	वीर रस
चौबोला	वीर रस
आल्हा	वीर रस
अमृत ध्वनि	वीर, रौद्र
बरवै	शृंगार, करुण, शान्त

वर्णिक:—

१. संस्कृत वृत्त

छन्द	रस
मन्द्राक्रान्ता, द्रुतविलंवित, शिखरिणी, मालिनी	श्रृंगार, शान्त, करुण
भुजंग प्रयात, वंशस्थ विलम्, शार्दूल विक्रीड़ित	वीर, रौद्र, भयानक

२. हिन्दी वर्णिक—

छन्द	रस
मितात्तरी	वीर, करुण
सवैया	करुण, श्रृंगार, शान्त,
अनंग शेखर	श्रृंगार, करुण
करखा	वीर
कृपाण	वीर, भयानक, रौद्र
अरिल्ल, चौपई, चौपाई, दोहा, सोरठा, धनात्तरी	सभी रसों में प्रयुक्त हो सकते हैं।

समस्यापूर्त्ति और छन्द

पूर्त्तिकार सब से पहले देखे कि समस्या के शब्द—यद्यपि अब समस्याओं का युग गया फिर भी इस पर विचार कर लेना, अनुचित नहीं है—समस्यापूर्त्ति करते समय अथवा वर्ण किस छन्द में फिट बैठते हैं, छन्द के निर्णय में उनके तुकान्त विशेष सहायक होते हैं। छन्द चुन लेने के बाद तुकान्तों की खोज करें †। यह सब होने के बाद विषय और उसके अनुकूल रस पर दृष्टिपात करें।

जिस छन्द में समस्यापूर्त्ति की जाती है उसके चौथे चरण में ही प्रायः दी हुई समस्या के शब्द या वर्ण तुकान्त के रूप में रखे जाते हैं। इसलिए सब से पहले हमें चौथा अथवा अन्तिम चरण ही रच लेना चाहिए। शेष चरणों की पूर्त्ति में उसी विषय का प्रतिपादन करना चाहिए। ध्यान रहे कि समस्या-पूर्त्ति के चरणों में ऐसा क्रम रखे कि चरणों में उत्तरोत्तर उत्कर्ष बढ़ता जाय और अन्तिम चरण सब से ज़ोरदार सिद्ध हो। साथ ही अन्तिम चरण में समस्या के शब्द अथवा वर्ण इस कौशल से बैठाने चाहिएँ कि सहज स्वाभाविकता का अभाव न जान पड़े। वरन यही मालूम हो कि ये 'शब्द' अथवा वर्ण स्वभावतः आगये हैं। इन्हें यहाँ लाने का कोई प्रयत्न नहीं किया गया है।

---

† अतुकान्त पदों में पूर्त्ति करने पर अन्त्यानुप्रास के तलाशने के झंझट में पड़ने की भी जरूरत नहीं है। विषयानुसार रचना के अन्तिम चरण के अन्त में समस्या के शब्द अथवा वर्ण आजाने ही काफी हैं।

उर्दू के छन्द

वास्तव में उर्दू कोई भिन्न भाषा नहीं है। हिन्दी की जिस शैली में अरबी, फ़ारसी के तत्सम शब्दों की भरमार रहती है आजकल उसे ही उर्दू कहते हैं। जो हो, हमारा अभीष्ट है हिन्दी छन्दों के साथ उर्दू बहरों की तुलना करना।

यदि हिन्दी के छन्द-शास्त्रों की दृष्टि से उर्दू के छन्दों पर विचार किया जाय तो यह मान लेने में तनिक भी आपत्ति नहीं की जा सकती कि उर्दू की सारी बहरें हिन्दी के मात्रिक छन्दों के अन्तर्गत आजाती हैं। यही कारण है कि आचार्य भिखारीदास जी ने मात्रा मुक्तकों की कल्पना करके और नये नये नाम देकर उर्दू के प्रसिद्ध छन्दों को उसमें रख लिया है। हमने भी मात्रा मुक्तकों में इनकी चरचा करदी है।

कुछ विद्वानों का मत है कि उर्दू बहरों की—जो वास्तव में अरबी, फ़ारसी की बहरें हैं—हिन्दी के मात्रिक छन्दों में गणना करते हुए भी यह मानना ही पड़ता है कि अरबी, फ़ारसी की बहरों की अपनी शैली कुछ भिन्न अवश्य है। और वह उसी तरह जिस तरह कि संस्कृत वृत्तों की। उर्दू के छन्दों को मात्रिक तथा वर्णिक छन्दों में स्थान देने के लिए हमारे पास इस के सिवाय और कोई चारा नहीं है कि गति के अनुसार निर्णय करें। महाकवि नाथूराम 'शंकर' शर्मा ने उर्दू बहरों का नाम रखा है 'राजगीत', मात्रिक अथवा वर्णिक जिस छन्द से किसी राजगीत की गति मिलती है उसी के नाम के साथ

'राजगीत' शब्द जोड़ कर उन्होंने उर्दू बहरों के नाम रखे हैं; जैसे; 'शुद्धगा राजगीत' 'स्रग्विण्यात्मक राजगीत' इत्यादि।

अब यहाँ हम उर्दू छन्दशास्त्र की मोटी मोटी बातें 'संक्षेप में' दिखा कर आगे उन छन्दों के नाम दिये देते हैं, जिनकी गति हिन्दी के छन्दों से मिलती जुलती है।

छन्दों के नियमों को उर्दू में 'इल्मेउरूज़' कहते हैं। चरणों की संख्या के विचार से एक चरण वाले छन्द को 'मिसरा' दो वाले को 'शेर या बेत', तीन वाले को 'मुसल्लिस', चार वाले को 'मुरब्बा', पाँच वाले को 'मुखम्मस', छः वाले को 'मुसद्दस', सात वाले को 'मुसब्बा', आठ वाले को 'मुसम्मन', नौ वाले को 'मुतस्सा', और दस वाले को 'मुअश्शर', कहते हैं।

छन्द के आरम्भ के 'शेर' को 'मतला' और अन्तिम शेर को 'मक़ता' कहते हैं।

छन्द के चरणों की जाँचने की रीति को 'तकतीअ' कहते हैं।

रदीफ़ और क़ाफ़िया

चरणान्त में निरन्तर आने वाले शब्द को 'रदीफ़' कहते हैं। इसका अर्थ भी सदा एक ही रहता है। रदीफ़ प्रायः मतला के दोनों ही चरणों में आता है, और आगे चलकर प्रत्येक शेर के दूसरे मिशरे में आता है। यह एक वर्ण से लेकर कितने ही वर्णों तक का हो सकता है।

रदीफ़ से पहले आने वाले 'सानुप्रास' शब्द को 'क़ाफ़िया' कहते हैं। यह विषम चरणों में संयोग से परन्तु सम चरणों में तो ज़रूर आया करता है। मतले के दोनों चरणों में ही प्रायः क़ाफ़िया आता है। यह सदा बदलता रहता है और इसका अर्थ भी बदलता रहता है। रदीफ़ और क़ाफ़िया समझने के लिए यहाँ एक-दो उदाहरण दे दिये जाते हैं:—

(१)

बरसों से हो रहा है बरहम "समाँ" "हमारा"।
दुनिया से मिट रहा है नामो"निशाँ" "हमारा" ॥ १ ॥
कुछ कम नहीं अजल से ख़्वाबे"गराँ" "हमारा"।
इक लाश बे कफ़न है "हिन्दोस्ताँ" "हमारा" ॥ २ ॥
इल्मो कमाल ईमाँ बरबाद "हो" "रहे हैं"।
ऐशोतरब के बन्दे ग़फ़लत में "सो" "रहे हैं" ॥ ३ ॥
ऐ सूर हुब्बे क़ौमी इस ख़्वाब से "जगा" "दे"।
भूला हुआ फ़िसाना कानों को फिर "सुना" "दे" ॥ ४ ॥
मुर्दा तबीयतों की अफ़सुर्दगी "मिटा" "दे"।
उठतेहुए शरारे इस राख से "दिखा" "दे" ॥ ५ ॥

—चकवस्त

(२)

कह रहा है आसमाँ यह सब "समाँ" "कुछ भी नहीं"।
पीस दूँगा एक गर्दिश में "जहाँ" "कुछ भी नहीं" ॥
रोती है शबनम कि नैरंगे "जहाँ" "कुछ भी नहीं"।
चीख़ती हैं बुलबुलें गुल का "निशाँ" "कुछ भी नहीं" ॥

तख़्तवालों का पता देते हैं तख़्ते ग़ोर के।
खोज मिलता है यहाँ तक बाद "अज़ाँ" "कुछ भी नहीं" ॥
जिनकी नौबत की सदा से गूँजते थे "आसमाँ"।
दम बखुद हैं मक़बरों में "हूँ न हाँ" "कुछ भी नहीं" ॥
जिनके महलों में हज़ारों रंग के फ़ानूस थे।
झाड़ उनकी क़ब्र पर हैं और "निशाँ" "कुछ भी नहीं" ॥

—अज्ञात

आयो मन हाथ तब आयबो रह्यो न कछू,
भायो गुरु ज्ञान फेरि "भायबो" "कहा रह्यो"।
कहै 'पद्माकर' सुगंध की तरंग जैसे,
पायो सतसंग फेरि "पायबो" "कहा रह्यो" ॥
दान बलवान बल विविध वितान बल,
छायो जस पुंज फेरि "छायबो" "कहा रह्यो"।
ध्यायो राम रूप तब ध्यायबो रह्यो न कछू,
गायो राम नाम तब "गायबो" "कहा रह्यो" ॥

—पद्माकर

टिप्पणी—यहाँ पहले छन्द के पहले दूसरे शेरों में 'समाँ', 'निशाँ', 'गराँ', 'हिन्दोस्ताँ', तीसरे में 'हो, 'सो', चौथे में 'जगा', 'सुना', और पाँचवें में 'मिटा', 'दिखा†' रदीफ़ हैं जो बराबर बदल

---

† जगा, सुना, मिटा, दिखा, आदि में अकार स्वर होने से ये शब्द रदीफ़ माने जावेंगे क्योंकि स्वर-साम्य होना भी अनुप्रास के अन्तर्गत है।

रहे हैं और इनके अर्थ भी बदले हुए हैं। और क्रमशः हमारा, 'रहे हैं','दे', क़ाफ़िया हैं जिनके एक ही अर्थ हैं और जो बराबर वही आ रहे हैं।

इसी तरह दूसरे छन्द में 'समाँ, 'जहाँ', 'निशाँ', 'अज़ाँ, 'हूँ न हाँ' रदीफ़ और 'कुछ भी नहीं' क़ाफ़िया है।

तीसरा छन्द हिन्दी का मनहरण छन्द है। इस में 'भायबो', 'पायबो','छायबो','गायबो', रदीफ़ और 'कहा रह्यो' क़ाफ़िया है।

छन्द में जब अकार के बाद कोई अन्य स्वर आ जाता है तो कभी कभी आवश्यकतानुसार इस अकार का लोप कर देते हैं, और अकार वाले व्यंजन में आगे का स्वर मिल जाता है यह 'अलिफ़े वस्ल का विकार' कहलाता है; जैसे :—'उठालूँ सख़्तियाँ लाखों कड़ी 'बात' उठ नहीं सकती।' —बेताब

इस मिसरे में 'बात' के अकार का लोप किया तो 'त्' रूप रह गया। इसमें आगे का 'उ' मिलाया तो यह रूप हुआ—कड़ी बातुठ नहीं सकती' इसी तरह इसकी 'तक़तीअ' भी की जायगी। ध्यान रहे कि 'ऐन' का उच्चारण भी 'अलिफ़' (अ) वत् होता है पर वह लोप नहीं होता।

गण को उर्दू में रुक्न और गणों को अरकान कहते हैं। ये मुतहर्रिक और साकिन इन दो तरह के वर्णों से बनते हैं। जिन वर्णों पर ज़बर (अ), ज़ेर (इ) और पेश (उ) रहते हैं वे वर्ण मुतहर्रिक कहलाते हैं और शब्द के अन्त में रहने वाले स्वर रहित (हलन्त) व्यंजन को साकिन कहते हैं। परन्तु निस्बत (सम्बन्ध वाची) वाले प्रयोगों में पहले शब्द का साकिन वर्ण

भी ज़ेर (इ) लगने के कारण मुतहर्रिक हो जाता है ; जैसेः— 'गुल्', में 'गु' मुतहर्रिक और 'ल्' साकिन है परन्तु जब 'गुल-नरगिस—गुले-नरगिस' पढ़ा जायगा तब 'गुल' का 'ल' भी मुतहर्रिक ही माना जायगा।

जिस प्रकार हिन्दी के छन्दशास्त्र का सारा दारोमदार गुरु-लघु पर है। इसी तरह उर्दू में साकिन और मुतहर्रिक पर है। जिस तरह लघु गुरु के उलटफेर से हिन्दी में लघु गुरु और आठ गण मिलकर पिंगल के ये दशाक्षर सारे छन्दशास्त्र के मूल में व्याप्त रहते हैं। ठीक उसी तरह साकिन और मुतहर्रिकों के हेर-फेर से उर्दू में भी दस अरकान बन जाते हैं ; यथा :—

हिन्दी गण	रूप	उर्दू नाम	उदाहरण
मगण	SSS	मफ़ऊलुन	पैमाना
यगण	ISS	फ़ऊलुन	हमेशा, करम कर †
रगण	SIS	फ़ायलुन्	श्याम का, कर करम
सगण	IIS	फ़य्लुन्	जगना, जगकर
तगण	SSI	मफ़ऊल	बाज़ार
जगण	ISI	फ़ऊल	कमाल
भगण	SII	फ़ा (फ़े) लुन	बाहर, बेहतर
नगण	III	फ़'अल	महल, नफ़र
लघु	I	फ़	अ
गुरु	S	फ़े	आ

† 'करम्', के 'म' का हलवत् उच्चारण होने से 'र' गुरु हो जायगा और 'कर' में 'र' का हलवत् उच्चारण होने से 'क' का गुरुवत् उच्चारण हो जायगा। इस तरह 'करम कर' का 'करम् कर' होने से 'यगण' का रूप बन जायगा।

किसी 'गुरु' वर्ण के स्थान पर उर्दू में दो लघु वर्ण कर लेने का क़ायदा है, परन्तु इसके साथ ही यह क़ैद भी है कि दो लघु वर्णों के पहले लघु में कोई भी ह्रस्व स्वर रह सकता है परन्तु दूसरे में 'इ, उ, ऋ' नहीं रह सकते। केवल अकार (अ) ही रह सकता है। वह भी ऐसा हो कि जिसे हलवत् पढ़ सकें; जैसेः—हम, तुम में 'म' हलवत् 'म्' पढ़ा जा सकता है।

हम पहले बतला आये हैं कि उर्दू के जिस छन्द की गति हिन्दी के किसी मात्रिक छन्द से मिलती हो तो उसे मात्रिक छन्द में मानलो और जिसकी गति वर्णिक छन्द से मिलती हो उसे वर्णिक छन्दों में मानलो। जैसा कि महाकवि नाथूराम शंकर शर्मा ने किया है। हम उदाहरणार्थ यहाँ कुछ ऐसे ही थोड़े से छन्दों के उदाहरण दिये देते हैं*ः—

(१)

१. मफ़ाईलुन् मफ़ाईलुन् फ़ऊलुन्
ISSS ISSS ISS
कहाँ हो ऐ हमारे राम प्यारे।
मुझे तुम छोड़कर बनको सिधारे॥

—भारतेन्दु

टिप्पणी—इसका हिन्दी नाम—'सुमेरु' है।

२. फ़ायलातुन फ़ायलातुन फ़ायलातुन फ़ायलुन
SISS SISS SISS SIS

---

* उर्दू के छन्द-शास्त्र का पूरा अध्ययन किसी बड़ी पुस्तक से करना चाहिए।

दिल इबादत से चुराना और जन्नत की तलब।
कामचोर इस काम पर किस मुँह से उजरत की तलब ॥

टिप्पणी—हिन्दी में इसे 'गीतिका' कहते हैं।

३. मफ़ाईलुन्, मफ़ाईलुन्, मफ़ाईलुन्, मफ़ाईलुन्,
। ऽ ऽ ऽ , । ऽ ऽ ऽ , । ऽ ऽ ऽ , । ऽ ऽ ऽ
गुनहगारों में शामिल हैं गुनाहों से नहीं वाक़िफ़।
सज़ा को जानते हैं हम ख़ुदा जाने ख़ता क्या है ॥

टिप्पणी—यह हिन्दी में 'विधाता' कहलाता है।

४. मफ़ऊल, फ़ायलातुन, मफ़ऊल, फ़ायलातुन।
ऽ ऽ । , ऽ । ऽ ऽ , ऽ ऽ । , ऽ । ऽ ।
वह पास ही खड़ा है, पर दूर मानता है।
किस भूल में पड़ा है, कुछ भी न जानता है ॥
—नाथूराम शंकर शर्मा

टिप्पणी—यह दिग्पाल छन्द है। शंकर जी ने इसका नाम 'सुन्दरात्मक राजगीत' रखा है।

५. मुस्तफ़्इलुन्, मुस्तफ़्इलुन्, मुस्तफ़्इलुन्, मुस्तफ़इलुन्।
ऽ ऽ । ऽ ऽ ऽ । ऽ ऽ ऽ । ऽ ऽ ऽ । ऽ
मैं समझता था कहीं भी, कुछ पता तेरा नहीं।
आज 'शंकर' तू मिला तो, कुछ पता मेरा नहीं ॥
—'शंकर'

टिप्पणी—हिन्दी में इसे 'हरिगीतिका' कहते हैं। नाथूराम शंकर शर्मा ने इस का 'मित्र मिलाप साखी' नाम रखा है।

६. मफ़ऊल, मफ़ाईल, मफ़ाईल, फ़ऊलुन
ऽ ऽ । , । ऽ ऽ । , । ऽ ऽ । , । ऽ ऽ

जिसको तेरी आँखों से सरोकार रहेगा।
बिलफ़र्ज जिया भी तो वो बीमार रहेगा॥

टिप्पणी—हिन्दी में ये 'बिहारी' छन्द कहलाता है।

७. फाइलातुन, फाइलातुन, फायलुन
ऽ।ऽऽ, ऽ।ऽऽ, ऽ।ऽ
सुबह गुजरी शाम होने आई 'मीर'।
तू न चेता और बहुत दिन कम रहा॥

—मीर

टिप्पणी—इसे हिन्दी में 'पीयूषवर्ष' कहते हैं।

८. फ़ऊलुन्, फ़ऊलुन्, फ़ऊलुन्, फ़ऊलुन्
।ऽऽ, ।ऽऽ, ।ऽऽ, ।ऽऽ
समाया है जब से तू आँखों में मेरी।
जिधर देखता हूँ उधर तू ही तू है॥

टिप्पणी—हिन्दी में इसे 'भुजंगप्रयात' कहते हैं।

९. फ़ऊलुन्, फ़ऊलुन्, फ़ऊलुन्, फ़अल्।
।ऽऽ, ।ऽऽ, ।ऽऽ, ।ऽ
महादेव को भूल जाना नहीं।
किसी और से लौ लगाना नहीं॥
बनो ब्रह्मचारी पढ़ो वेद को।
द्विजाभास कोरे कहाना नहीं॥

—नाथूराम शंकर शर्मा

टिप्पणी—हिन्दी में इसे 'भुजंगी' कहते हैं। 'शंकर' जी ने इसका नाम 'भुजंगात्मक राजगीत' रखा है।

१०. फ़ऊल, फ़ेलुन्, फ़ऊल, फ़ेलुन्,

। ऽ । ऽ ऽ । ऽ । ऽ ऽ

फ़ऊल, फ़ेलुन्, फ़ऊल, फ़ेलुन्.

। ऽ । ऽ ऽ । ऽ । ऽ ऽ

कहाँ हैं हम में अब ऐसे सालिक,

कि राह ढूँढी क़लम उठाया।

जो हैं तो ऐसे ही रह गये हैं,

किताब देखी क़लम उठाया॥

—कविता-कौमुदी

टिप्पणी—हिन्दी में इसे 'यशोदा' कहते हैं।

विषय वर्णन के विचार से उर्दू छन्दों के कुछ नाम

ग़ज़ल— ग़ज़ल उन शेरों को कहते हैं, जिन में प्रेम विषयक वर्णन रहते हैं। इन शेरों में प्रेम के विभिन्न भागों पर प्रकाश डाला जाता है। आजकल सौंदर्य, प्रकृति-वर्णन, शान्तरस और देश-भक्ति के वर्णन भी ग़ज़लों में किए जाने लगे हैं।

ग़ज़लों की चरण संख्या विषम होती है। साधरणतया पाँच से लेकर ग्यारह चरण तक लिखने की चाल है। पर ग्यारह से अधिक शेर रहने में भी कोई दोष नहीं है।

क़सीदा—क़सीदा वे शेर हैं जिनमें किसी व्यक्तिविशेष वस्तु या विषय विशेष की स्तुति या निन्दा की जाती है। क़सीदे लिखने वाला अच्छा अनुभवी होना चाहिए।

मसनवी—किसी व्यक्ति विशेष की जीवनी अथवा काल्पनिक कथा को पद्य-बद्ध करना ही मसनवी कहलाता है।

मरसिया—जो करुणाजनक (शोकपूर्ण) वर्णन शेरों में लिखे जाते हैं उन्हें मरसिया कहते हैं।

रुबाई—रुबाई चार चरण वाला छन्द विशेष होता है, जिस तरह दोहों में प्रायः नीति और उपदेशपूर्ण विषय लिखे जाते हैं ठीक उसी तरह उर्दू में रुबाई भी नीति और उपदेश की बातें लिखने में काम आती है।

रेखता--बोलचाल की भाषा में लिखी जाने वाली कविता को रेखता कहते हैं।

छन्द और अनुप्रास

छन्दों के लक्षणों में प्रायः तुकान्त की बार बार चरचा आई है। और तुकान्त एक प्रकार का अनुप्रास ही है। साथ ही मनहरण आदि छन्द ऐसे हैं जो अनुप्रासों से ही रुचिकर जँचते हैं। इसीलिए अलंकार का विषय होते हुए भी इनकी यहाँ संक्षेप में चरचा कर देना असंगत नहीं जान पड़ता। अस्तु—

अनुप्रास

केवल वर्ण अथवा स्वर-सहित वर्ण-समता को अनुप्रास कहते हैं।

छेक, वृत्ति, लाट, श्रुति और अन्त्य अनुप्रास के भेद हैं। कोई यमक को अलग से शब्दालंकार का भेद मानते हैं और कोई इसे भी अनुप्रास ही के अन्तर्गत। जो हो हमारा तात्पर्य यहाँ इन मुख्य शब्दालंकारों की चरचा करना है।

१. छेक

जहाँ एक या अनेक वर्णों की स्वर-सहित अथवा केवल वर्ण-मात्र की समता हो वहाँ छेकानुप्रास होता है :—

'राम राज्य अभिषेक सुनि, हिय हरषे नरनारि।'

टिप्पणी—यहाँ 'राम' और 'राज्य' के 'रा' में 'आ' स्वर सहित 'र' की और 'हिय' 'हरषे' में केवल 'ह' वर्ण की तथा 'नर' 'नारि' में 'र' वर्ण की समता है।

२. वृत्ति

जहाँ वृत्तियों के नियमित वर्णानुसार एक या अनेक वर्णों का स्वर-सहित या केवल वर्ण का कई बार सादृश्य होता है वहाँ वृत्त्यनुप्रास होता है।

इसके तीन भेद हैं—उपनागरिका 'परुषा' और कोमला।

अ. उपनागरिका—जिसमें टवर्ग को छोड़कर कवर्ग से पवर्ग तक अथवा इन्हीं वर्णों के पंचम वर्णयुक्त जो वर्ण हों वह माधुर्यगुण-प्रकाशक कहलाते हैं। इनमें से कई वर्णों का कई बार सादृश्य हो वहाँ उपनागरिका-वृत्ति होती है :—

चातक चलि कोकिल ललित, बोलत मधुरे बोल।
कूकि कूकि केकी कलित, कुंजन करत कलोल॥

—अलंकार-प्रबोध

टिप्पणी—इसमें 'क' की आवृत्ति से 'उपनागरिका-वृत्ति' है।

आ. परुषा—ट वर्ग के सब वर्ण तथा 'श, ष' और कवर्गादि के पहले, तीसरे और दूसरे चौथे वर्णों के संयोग ओज-प्रकाशक वर्ण कहलाते हैं। ओज-प्रकाशक वर्णों की कई बार सादृश्यता में परुषा-वृत्ति होती है :—

जहाँ रुण्डन पै रुण्ड मुण्ड झुण्डनि के झुण्ड कटैं,
कोटिन बितुण्ड जनु बन्धुकी समान।
तहाँ सेवक दिसान भीम रुद्र के समान,
हरि शंकर सुजान झुकि झारी किरवान॥

--अलंकार-प्रबोध

टिप्पणी--इस छन्द में 'ड' की आवृत्ति से 'परुषा-वृत्ति' है।

इ. कोमला—ओज और माधुर्य प्रकाशक वर्णों के अतिरिक्त जहाँ अन्य वर्णों की आवृत्ति हो उसे कोमला-वृत्ति कहते हैं :--

इहि असार संसार में, सार चार कह व्यास।
गंग-सलिल सत-संग सिव-सेवन कासी बास॥

--भारती-भूषण

टिप्पणी—इसमें 'स' कार की अनेक आवृत्तियाँ हैं। जो माधुर्य और ओज गुण से रहित हैं।

३. लाट

एक से पद वा पद-समूह वा वाक्य एक ही अर्थ में अन्वय की पृथकता से दो या कई बार आवें अर्थात् शब्द और अर्थ में भेद न हो केवल तात्पर्य में भेद हो; उसे लाटानुप्रास कहते हैं :—

वाक्यावृत्ति—पूत कपूत तो क्यों धन संचय।
पूत सपूत तो क्यों धन संचय॥

—अलंकार-प्रबोध

टिप्पणी—यहाँ शब्द और अर्थ में भेद नहीं है। केवल पूर्वार्द्ध के (कपूत) 'क' और उत्तरार्द्ध के (सपूत) 'स' के साथ अन्वय करने से तात्पर्यों में भिन्नता हुई। यह वाक्य-वृत्ति है।

शब्दावृत्ति—कीन्हहु "कृपा कृपायतन" दीन्हहु दुर्लभ देह।
अब अधमन-सिरमौर लखि, तोरन लगे सनेहु॥

—भारती-भूषण

टिप्पणी—इस दोहे में 'कृपा' शब्द का लाट है। पहला 'कृपा' समास रहित और दूसरा समास सहित है। पहले का 'कीन्हहु' शब्द से और दूसरे का 'आयतन' से अन्वय होने के कारण तात्पर्य में अन्तर हुआ है।

४. श्रुति

जहाँ तालु कण्ठ इत्यादि से उच्चरित होने वाले व्यंजनों अर्थात् एक स्थानोत्पन्न वर्णों की समता पाई जावे उसे श्रुत्यनुप्रास कहते हैं:—

'जयति द्वारिकाधीस जय, जय सन्तन-संताप हर।'

इसमें 'द, स, न, त' आदि दन्त्य अक्षर हैं अतः इस पद में श्रुत्यनुप्रास हुआ।

५. अन्त्यानुप्रास

प्रत्येक छन्द के चरणों के अन्त्याक्षर को तुकान्त कहते हैं। इसी अन्त्याक्षर का नाम अन्त्यानुप्रास है। भाषा में इस तुकान्त के चरण भेद से छः भेद किये गये हैं। तुक प्रकरण में ४३ वें पृष्ठ पर देखो।

६ यमक

भिन्न भिन्न अर्थ वाले अथवा बिना अर्थ वाले सुनने में एक से पद-खण्ड, पद वा पद-समूह दो वा कई बार आवें तो यमकालंकार होता है :—

भजन कह्यो तासों भज्यो, भज्यो न एको बार।
दूर भजन जा सों कह्यो, सो तें भज्यो गँवार॥

—बिहारी

यहाँ भजन और 'भज्यो' शब्दों में यमक है। पहले 'भजन' का अर्थ 'स्मरण करना' और दूसरे का भागना है। इसी तरह पहले 'भज्यो' का अर्थ 'भागने' का है। दूसरे, तीसरे भज्यो शब्द का अर्थ 'स्मरण' भजन है।

छन्द और मुक्तकाव्य

आज कल खड़ी बोली की कविता का प्रवाह मुक्तकाव्य की ओर है। इसलिए उसकी संक्षेप में चरचा कर देना असंगत नहीं होगा। छन्दशास्त्र की दृष्टि से आजकल के विद्वान् काव्य के मुख्य दो भेद करते हैं—बद्धकाव्य और मुक्तकाव्य। जो काव्य आदि से अन्त तक विशेष छन्दों की गति से बँधा रहता है उसे बद्धकाव्य कहते हैं फिर चाहे वह तुकान्त हो अथवा अतुकान्त। 'मुक्त' शब्द का अर्थ है 'स्वतंत्र'! इसलिए मुक्तकाव्य का सीधा सादा यही लक्षण हो सकता है कि 'जो काव्य छन्दों की जकड़-बंदी से मुक्त होता है वही मुक्तकाव्य है। अर्थात् मुक्तकाव्य में न तो अनुप्रासों का बन्धन होता है और न उसे किसी विशेष छन्द की गति में ही चलना पड़ता है। इच्छानुसार पंक्ति-पंक्ति में यति, गति और मात्राओं का हेरफेर किया जा सकता है, वर्णों की न्यूनाधिकता की जा सकती है। बस यह समझ लेना चाहिए कि मुक्तकाव्य और गद्य में इतना ही अन्तर रहता है कि मुक्तकाव्य में एक प्रकार की लय रहती है और गद्य में नहीं रहती। अधिक स्पष्टता के लिए यहाँ तीनों ही के उदाहरण दे दिये जाते हैं :—

१. गद्य

'लक्ष्य-सिद्धि के लिए कठिन साधनाओं को आलिङ्गन करना पड़ता है। वह साधक क्या, जिसने अपने को साधनामय नहीं बना लिया!'

टिप्पणी—यह वाक्य गतिहीन है।

२. गतिमय

हम में बल था, मगर संगठन नहीं था। इसीलिए हम-दबे, और गिर भी गये। बस यही एक अभिशाप हमें ले डूबा।

इस गद्य की गति इस प्रकार है—

हम में बल था मगर संगठन नहीं था,
इसीलिए हम दबे और गिर भी गये।
बस यही एक अपराध हमें ले डूबा!

कविता—

जहाँ रस में असीम उल्लास;
सुरभि में है मतवाला पन;
भ्रमर के गुंजन में संगीत.
मलय के झोकों में कम्पन;
सुधामय बसुधा के भाण्डार
यहाँ हँसते शत शत मधुवन!

—भगवती चरण बर्म्मा

मुक्तकाव्य—

कहाँ?
मेरा अधिवास कहाँ?
क्या कहा!--रुकती है गति जहाँ?
भला इस गति का शेष—
सम्भव क्या है—
करुण स्वर का जब तक मुझ में रहता आवेश?

मैं ने 'मैं' शैली अपनाई
देखा दुखी एक निज भाई,
दुख की छाया पड़ी हृदय में मेरे
झट उमड़ वेदना आई……।

—अनामिका

इन उदाहरणों से गद्य, पद्य और मुक्तकाव्य का अन्तर भलीभाँति स्पष्ट हो गया होगा।

हम ऊपर बतला आये हैं कि 'ध्वनि या लयप्रधान पद. छन्दहीन तथा अन्त्यानुप्रासहीन काव्य को मुक्तकाव्य कहते हैं।' अब केवल यह बताना शेष है कि इसकी रचना के कौन कौन ढंग हैं। मुक्तकाव्य मात्रिक तथा वर्णिक दोनों ही प्रकार के लिखे जाते हैं। वर्णिकों में बंगला अमित्राक्षरपन रहता है और मात्रिकों में मात्रिक छन्दों का हिन्दीपन। मात्रिक मुक्तकों में एक प्रकार का राग रहता है। अमित्राक्षरों में इसका लाना कठिन होता है। यहाँ दोनों का एक एक उदाहरण देकर यह विषय समाप्त किया जाता है—

वर्णिक (अमित्राक्षर)

जयसिंह !
अगर हो शानदार,
जानदार है यदि अश्व वेगवान,
बाहुओं में बहता है

क्षत्रियों का खून यदि,
हृदय में जागती है वीर यदि
माता क्षत्राणी की दिव्य मूर्त्ति,
स्फूर्ति यदि अंग-अंग को है उकसा रही,
आ रही है याद यदि अपनी मरजाद की,
चाहते हो यदि कुछ प्रतिकार
तुम रहते तलवार के म्यान में,
आओ वीर स्वागत है
सादर बुलाता हूँ । *

—परिमल

मात्रिक

(१)

प्रणति में है निर्वाण,
पतन में अभ्युत्थान,
जलद-ज्योत्स्ना के गान !
अटल हो यदि चरणों में ध्यान,
शिलोच्चय के गौरव संघात ।
विश्व है कर्म प्रधान ।

—पल्लव

---

* इस छन्द में कवित्त की पुट सी जान पड़ती है । इस का जन्म ही घनाक्षरियों से है ।

(२)

डोलती नाव प्रखर है धार,
सँभालो जीवन-खेवनहार।
तिर तिर फिर फिर
प्रबल तरंगों में
घिरती है,
डोले पग जल पर
डगमग डगमग
फिरती है,
टूट गई पतवार—
जीवन—खेवनहार।
भय में हूँ तन्मय
थर थर कम्पन
तन्मयता,
छन छन में
बढ़ती ही जाती है
अतिशयता,
पारावार अपार
जीवन-खेवनहार !

—परिमल

एक बात और ध्यान देने की है कि खड़ी बोली की कविताओं में क्रियाओं और विशेषतः संयुक्त-क्रियाओं का प्रयोग कुशलता पूर्वक करना चाहिए, नहीं तो कविता का स्वर शिथिल पड़ जाता है। साथ ही समासों का भी बहुत ही कम प्रयोग करना चाहिए ।

॥ इति ॥

परिशिष्ट भाग

पृष्ठ १३२ पर सप्तपदी तक मात्रिक छंद हैं। षोड़स मात्रिक प्रसाद छंद में अपनी रचना पं० ठाकुर प्रसाद शर्मा एम० ए० ने सन् १९१६ में लोकमान्य के आगरे के स्वागत में पढ़ी थी। आप के प्रसाद के संगठन में बारह पद हैं अतः उस का नाम प्रसाद-द्वादशपदी है।

प्रसाद-द्वादशपदी

देश का बीज-शक्ति का धाम,
पड़ा है यहाँ लगाए आस।
सरस-हृदयों के माली वीर,
सींच कर उस का करो विकास।
यातनाओं का तर्जन घोर,
विपद् मेघों का रव गंभीर।
करेगा लीन देश की शुद्ध—
धूल में उसका विमल शरीर।
गलेगा बीज उगेगा पेड़,
बढ़ेगा नव भारत उद्यान।
रहेगा प्रति पत्ते पर लेख,
"देश-सम्मान," "आत्म-वलिदान"॥

—ठाकुर प्रसाद शर्मा एम०ए०

पुस्तक तयार हो जाने के पीछे हमें पं० व्रजमोहन तिवारी एम० ए० की लिखी हुई **झलक** नाम कविता की पुस्तक मिली। तिवारी जी ने अँगरेजी शैली पर चतुर्दशपदी कविताएँ लिखी हैं अँगरेजी में इन्हें **'सॉनेट्स'** कहते हैं। तिवारी जी ने चतुर्दशपदी में रौला छंद का प्रयोग किया है।

चतुर्दशपदी

(१)

'आ
कां
क्षा'

बनी हुई हो एक कुटी सुरसरि के तट पर,
लता द्रुमों की मृदु छाया हो नेह भरी सी;
श्रान्त पथिक आश्रय पा सकें वहाँ पर आकर,
सेवा-प्रेम भावनाओं की हो जाग्रत श्री;
नित आ ऊषा कुटिया में मुसक्या भरदे बस,
नित प्रभात का सूर्य्य ज्योति से पावन करदे;
त्रिविध समीर बहे नित लाकर अपना सर्वस,
कलिकाओं का खिल-खिलकर हँसना मन भरदे;
चरखा चले नित्यही, भगवत चर्चा हो नित,
दीनों दुखियों, पतितों के प्रति स्वजन-भाव हो;
उनके दुख से दुखी रहे मेरा दुखिया चित,
आत्मत्याग से भरा रहूँ ऐसा स्वभाव हो;

प्रभु ! वर दो सहृदयता ही मेरा प्रिय धन हो।
उसकी सतत वृद्धि में ही जीवन-यापन हो॥

(२)

'प्रेम'

जगजीवन की अमर व्याप्ति प्रिय प्रकृति नृत्य हे !
मनुष्यत्व की चिर-जाग्रति, करुणा-अभिलाषा ;
सब धर्मों के प्रिय स्फूर्ति तुम पुण्य कृत्य हे !
आत्म-त्याग के चरम विजय की हो परिभाषा ;
तुम ईसा की सहनशीलता के सर्वस हो ,
गाँधी के हो सत्य बुद्ध की दया प्रभामय ;
गीता की समबुद्धि ज्ञान के सुयश सरस हो,
तुमही हो सौन्दर्य्य-तृप्ति, तुम शान्ति सुधामय ;
दीनों दुखियों को तुमही तो हृदय लगाते ,
'तत्त्वमसि' का तुमने ही संदेश सुनाया ;
राम कृष्ण बन तुमही जीवन-ज्योति जगाते ,
तुमने ही बन आदिस्रोत सबको अपनाया ;

सावित्री के हो सतीत्व, सीता के बल हो ,
दमयन्ती के नल हो, आशा के अंचल हो ।

—ब्रजमोहन तिवारी एम० ए०

अभी अनेक बातें और कहने को हैं यदि हिन्दी-जनता ने इस कृति का स्वागत किया तो दूसरे संस्करण में उन बातों को पाठकों की भेट करेंगे ।

—लेखक

उदाहृत-पद्य-कवि-सूची

उदाहृत-पद्य-ग्रन्थ-सूची

नाम पृष्ठ

शुद्धाशुद्ध-पत्र

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२९	१३	लघु	'ल'
५५	११	इहं	हहँ
६६	११	धूम	धूप
७१	३	सफल	सकल
८६	४	लँगड़ी	खड़ी
११०	१७	कम होने से	घट-बढ़ जाने से
१२४	१४	गाना गणनायक	गणनायक वर
१२४	१५	सब जब	सब जग
१२५	१३	लहरों	बहरों
१३३	१	प्रसाद मिलिन्दपाद उदाहरण २	आनंद 'संकर मिलिन्दपाद पृष्ठ १०२
१३४	४	ऽ ऽ। ऽ। में कूद मगन + ५ ६	ऽऽ ।ऽ। में कू द मगन + ५ ६
१३४	५	।ऽ। ऽऽ। बड़े बड़े अश्रु + ४ ५ ६	।ऽ। ऽऽ । बड़े ब ड़े अ श्रु * + + ४ ५ ६
१३६	१०	न²	व²
१३६	१६	व	य
१३६	१८	तीसरी	पहली
१३७	४	सघन-कानन भी	सघन-गहन कानन भी

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१३८	५	दल में मात्राओं के	दल में बीस-बीस मात्राओं के
१४५	१२	×	(भ ग ग)
१५३	१४	की	को
१५४	२०	बढ़त	बढ़वत
१६१	२०	पारि जगत्	पारी जग
१६२	२	(त ज ज ल ग)	(न ज ज ल ग)
१६८	२२	मारि	नारि
१७६	५	हम	हय
१७७	५	मुक्ति	युक्ति
१७७	१५	मालिती	मालिनी
१७६	४	मुख	मुखै
१८२	११	धारज	धीरज
१८६	३	ओध	ओघ
१८६	६	कहौ गहौ	गहौ गहौ
१८६	६	(त न स स ग)	(न न स स ग)
१८६	१२	खण्डा	खण्डी
१६१	६	शुभ-रानी	शंभु-रानी
१६२	१०	माहन	मोहन
१६७	१७	अथ	अब
१६७	१८	यहि	महि
२०७	१३	ज्यों	त्यों
२०६	१२	आज लौ लगी है	आज लौं लौ लगी है।
२१०	१८	बिलम	बिमल
२१३	५	सुधी न एकौ	सुधीनि इकौ
२१३	१८	मूली	मूली

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२१५	६	नचैं ग्वालिनी	नचैं ग्वालिनि
२२०	१०	......त ग	......ल ग
२२२	६	भज नंद	भजे नँद
२२४	१४	धनि धनि धनि	धनि धनि धनि धनि
२२७	४	रहित	रहति
२२७	१२	हन	हनैं
२२६	१	आलसा	अलसा
२२६	३	पठाय पठाय कै	पठान पठाय कै
२३०	१३	रसियों की	रसिकों की
२३०	१६	या	पा
२३४	१४	उ इ इ उ (हंसी)	उइउइ (हंसी)
२३५	७	गुणः श्रेयन्ति	गुणाः श्रयन्ति
२३६	१७	सर्वंगुणः	सर्वे गुणाः
२३७	१६	इसको	हम को
२३६	१०	जो निमित्त	जो नीतिमत्त
२३६	११	धर्मात्मा है सुधी जो उदार	धर्मात्मा, त्यागी, सुधी जो उदार,
२४०	५	दया३	दया२
२४३	२	चण्ड वृद्धि प्रयात	चण्ड वृष्टि प्रपात
२४५	११	सु आनैन	सु प्रानै न
२४५	२०	हौं मिलै	हौं, मिलैं
२४५	२१	कवीनन	कवीतन
२४६	४	सुसदा	अपने
२४६	१४	बरहि बरहि अरि अमित कलनि कीर	बरहि बरह धरि अमित कलनि करि
२४७	२१	का कर	का करैं

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२४७	२३	अशोक मंजरी	अशोकपुष्प मंजरी
२४८	१	का कर	का करै
२४८	१०	जनौ भरी	भलौ भरौ
२४८	११	जान	जाल
२४८	१७	पिये	दिये
२४९	१६	टकी लगी निहारियै	टकी लगी तिहारियै
२५१	५	मगण	यगण
२५१	१३	समपद	शब्द पद
२५३	२०	अक्षर	अक्षरों
२५४	१	अमंद हँकारे देत	अंगद हकारे देत
२५४	४	नन भर के	नैन भर के
२५४	८	मुँदै नन	मुँदै नैन
२५४	१७	जगण (ऽ।ऽ)	जगण (।ऽ।)
२५६	४	दिव्य दह	दिव्य देह
२५६	१२	निकसि जति	निकसि जाति
२५६	१४	प्यारो	प्यारी
२५७	१०	गुरु लघु अथवा लघु रहता है	गुरु लघु रहता है
२५७	१७	भूमि	झूमि
२५७	२१	फुटनोट 'रूप घनाक्षरी' पृष्ठ २५७	फुट नोट 'जलहरण' पृष्ठ २५९
२५७	२२	पद्माकर के उदाहरण में दिये हुए तीसरे छन्द	उदाहरण में दिये हुए पद्माकर के छन्द
२५८	३	आकुल है	आकुल ह्वै
२५८	१०	(३) उदाहरण रूप घनाक्षरीका ३ पृष्ठ २५८	(२) उदाहरण 'जलहरण' का पृष्ठ २५९
२५९	१२	दो लघु	दो लघु* (नीचे २५७ पृष्ठ वाला फुटनोट)

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२६०	८	है के	हैं कै
२६१	१६	मचाव	मचावैं
२६२	१	अनुष्ठुप	अनुष्टुप
२६२	४	……। और सातवाँ वर्ण सदा लघु रहता है।…	……। और यदि सातवाँ वर्ण भी गुरु हो तो अच्छा होता है। इसी तरह दूसरे और चौथे चरणका सातवाँ वर्ण सदा लघु रहता है।…
२६४	१६	गति	यति
२६५	१३	शब्दों	छन्दों
२६६	१	परेउ	परयो
२७०	१०	बर वा	पर वा
२७२	१७	मंजुमाधवी को	मंजुमाधवी नाम से
२७७	६	उसकी	उनकी
२७६	२१	दिखाते हैं :—	दिखाओ।
२६६	१६	चार पंक्तियों में उतने कोठे	छः पंक्तियों में उतने कोठे
३०७	१६	अंकों में	अंकों को
३०५	१	और अब……छोर पर रखे हैं।	×†
३०८	२०	कोठे	ख़ाली कोठे
३११	२	आड़ी पंक्ति	पड़ी पंक्ति
३२०	११	म, य	प य
३२०	१३	प म के	प य के
३२०	१६	म के	य के
३२१	६	परन्तु ध्यान रहे कि…… ……शून्य ही रखा जायगा।	×

† जहाँ × यह चिन्ह है वहाँ समझो कि कुछ नहीं लिखा है।

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
३२५	१८	'अ' में रखा	'न' में रखा
३२५	१८	'अ' के ५ × २	'न' के ५ × २
३३२	१२	रूपमाला	सार
३३४	१	पूर्तिकार सबसे पहले देखे कि समस्या के शब्द—यद्यपि अब समस्याओं···समस्य अथवा वर्ण·····	पूर्त्तिकार सब से पहले देखे कि सम·· स्या के शब्द अथवा वर्ण·····
३३५	६	छन्द शास्त्रों	छन्द शास्त्र
३३८	७	और	औ
३३८	१०	पद्माकर	पद्माकर
३४६	२१	'र' वर्ण की	'न र' वर्णों की
३५२	७	अपराध	अभिशाप

—:—